ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

डॉ.सुभाष पांडे एवं अजय कुमार कुशवाहा
पी.जी कालेज सिहोरा
रानी दुर्गवाती विश्वविद्यालय जबलपुर

भारतीय संस्कृत साहित्य में आर्थिक विचार एवं वाणिज्यिक चिंतन

शोध सारांश :–

यह शोध लेख संस्कृत साहित्य में आर्थिक वाणिज्यिक चिंतन के सारांश में यह है कि रामायण काल में अर्थशास्त्र का स्वरूप वार्ता के रूप में विद्यमान था। इसका अध्ययन विभिन्न प्रकार के व्यवसायों तथा उद्योगों के लिये किया जाता था। रामायण में वार्ता को अर्थशास्त्र का एक प्रमुख अंग माना गया है। कृषि, पशुपालन तथा व्यापार मुख्य रूप से इसके अंतर्गत प्रयुक्त होते है । महाभारतकालीन युग को सुव्यवस्थित, समुन्नत, प्रगतिशील और परिपक्व आर्थिक विचारों का युग कहा जा सकता है। तत्कालीन समाज में प्रशासनिक दृष्टि से राजाओं का अधिकार और महत्व अधिक बढ़ गया था। प्राचीन अर्थशास्त्रीय ग्रंथों और आर्थिक विचार की परम्परा में अनेक ऐसे विचार मिलते है, जो आधुनिक युग में भी परिवर्तित और संशोधित रूप में मौजूद है।

प्रस्तावना :– वैदिककाल की सभ्यता न केवल आर्थिक विचारों की दृष्टि से अपितु सांस्कृतिक एवं सामाजिक रचना–क्रम की दृष्टि से महत्वपूर्ण रही है। महाकाव्यों में रामायण एवं महाभारत भारतीय सामाजिक रचना के सर्वविदित सार ग्रन्थ है। बृहस्पति, कामन्दक कौटिल्य एवं शुक्राचार्य जैसे महान आचार्यो के विचारों को समझना और आत्मसात् करना एक अर्थशास्त्र के विद्यार्थी के लिये आसान कार्य नहीं है, फिर भी विद्वानों एवं सुधी अध्येताओं की प्रेरणा से संतोषजनक सफलता प्राप्त कर सका हूं।

विचारों के माध्यम से ही मानव–चेतना आगे बढ़ती है। वह आर्थिक, सामाजिक तथा धार्मिक भावनाओं को साकार तथा क्रियाशील बनाती और सिद्धांत रूप में परिणत करती है। भारतीय समाज में आर्थिक विचारों के विकास का क्रम भी कुछ ऐसी ही मानव–चेतना से निर्मित समाज की रचना एवं परिस्थितियों का प्रतिरूप है। प्राचीन आर्थिक विचारों को वर्तमान की भांति वैज्ञानिक रूप भले ही न मिल पाया हो, किन्तु इतना अवश्य है कि वे हमें तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों की वास्तविकता से अवगत कराते हैं। अनेक अर्थशास्त्री इन विचारों को मान्यता देने से कतराते है। उनके अनुसार केवल वैज्ञानिक आर्थिक विचार है। किन्तु ऐसा कहना सर्वथा अनुचित है क्योंकि प्राचीन आर्थिक विचारों की यदि अवहेलना कर

दी जाय तो निश्चय ही आर्थिक विचारों का इतिहास अधूरा रह जायेगा। मानव इतिहास का विकास क्रमिक होता है। प्रायः उसकी प्रगति के पिछले सोपानों की ओर सम्यक् ध्यान नहीं दिया जाता है, इसी के फलस्वरूप आर्थिक विचारों के मूलभूत तत्वों को समझनें का प्रयास किया जा सकता है। इसी दृष्टि से प्राचीन भारतीय आर्थिक विचारों के सांगोपांग अध्ययन के लिए आधार प्रदान किया।

उददेश्य :– प्राचीन भारतीय आर्थिक विचारों के बारे में अभी तक बहुत कम कार्य किया गया है। इसके परिज्ञान हेतु ऐसे कार्य बहुत कम हुये है जिनसे आर्थिक विचारों का पूर्ण अध्ययन किया जा सके, इसलिये आवश्यक हो जाता है कि इस विषय पर अधिक से अधिक कार्य किये जायें। प्राचीन भारतीय आर्थिक विचारों को वस्तुतः सभी प्राचीन ग्रन्थों में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। भारतीय वाङ्मय का यह एक महत्वपूर्ण भाग है। इसके संस्कृत, पाली एवं प्राकृत भाषाओ में होने के कारण इस दिशा में आर्थिक विचारों का सम्यक् अनुशीलन अब तक प्रायः नहीं किया जा सका है।

प्रचुर मात्रा में उपलब्ध संस्कृत वाङ्मय को निम्नलिखित वर्गो में विभक्त कर हम आर्थिक विचारों का अध्ययन करते है :–

1. **ऐतिहासिक साक्ष्य** – इनके अंतर्गत शिलालेख एवं ध्वंसावशेषों के अतिरिक्त भारतीय इतिहास में वर्णित प्रागैतिहासिक तथा सिन्धु सम्यता का परिगणन होता है।
2. **वैदिक साहित्य** –वैदिक साहित्य के अंतर्गत चार वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अर्थववेद) उपनिषद (मुख्यतः 108) आरण्यक, ब्राह्मण, सूत्र ग्रन्थ, जातक आदि की गणना की जाती है।
3. **स्मृति साहित्य** – स्मृतियों की संख्या सौ से भी अधिक है, परंतु प्रमुख स्मृतिकारों में मनु याज्ञवल्क्य, नारद, वृहस्पति, गौतम, पराशर आदि के नाम उल्लेखनीय है। इन विचारकों ने आर्थिक विचारों को काफी महत्व प्रदान किया है।
4. **पुराण–इतिहास** – इस साहित्य के अंतर्गत रामायण, महाभारत एवं उप–पुराणों को रखा जाता है। इनमें वायु, अग्नि, विष्णु, वामन, भागवत पुराण आदि ऐसे पुराण है, जिनमें अर्थव्यवस्था संबंधी विचार पर्याप्त मात्रा में मिलते है।

5. **काव्य साहित्य** – इसमें कालिदास, वाणभट्ट, भास, शूद्रक, दण्डी आदि के ग्रंथ लिये जा सकते है।

वैदिक परिप्रेक्ष्य में वाणिज्य और व्यापार

आर्थिक विकास समाज की सांसारिक, व्यावहारिक व लौकिक उन्नति का एक महत्वपूर्ण पक्ष होता है। मानव जीवन के लक्ष्यार्थ जिस पुरूषार्थ चतुष्ट्य अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का भारतीय संस्कृति में निरूपण किया गया है उसमें मनुष्य का प्रथम प्रयोजन धर्म तथा द्वितीय अर्थ है। अर्थ से अधिक अभिलषित वस्तु और कोई नहीं है, इस विषय में चाणक्य ने भी सुख को मूल धर्म माना है परंतु धर्म का मूल तो अर्थ ही है।

सुखस्य मूलं धर्मः। धर्मस्य मूलम् अर्थः।।

मनुष्य एक भौतिक प्राणी है अतः जीवन को यथा योग्य चलाने के लिए एवं ऐहिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए धन की अनिवार्यता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है, उसके बिना जीवन का निर्वाह करना असंभव सा प्रतीत होता है। शास्त्र भी यही कहता है कि जीवन धारण करना प्राणी का मुख्य धर्म है जिसके लिए अर्थ की नितान्त आवश्यकता है। यजुर्वेद में अर्थ शब्द के लिए राय–रयि शब्द का प्रयोग किया गया है रयि अथवा अर्थ का तात्पर्य केवल रूपये या पैसों से ही नहीं बल्कि इसके अंतर्गत कृषि, पशुपालन, भोजन, आवास, शिक्षण, शिल्प, हस्तकारी, वाणिज्य–व्यापार, आदि वे सभी तत्व समाहित है जिनके द्वारा परिश्रमपूर्वक अर्थोपार्जन कर मानव अपनी सभी आवश्यकताओं को पूरा करते है व आत्मनिर्भर बनाते है। आज के आधुनिक समाज में 'अर्थ' की प्रासंगिकता और अधिक बढ़ गई है। प्रारंभ से लेकर अद्यतन आर्थिक जीवन में व्यापार एवं वाणिज्य का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वैदिक युग में अनेकों शिल्पों व व्यवसायों का उदय हो चुका था और विभिन्न शैल्पिक एवं व्यावसायिक संघों या वर्गो का अस्तित्व सामने आ चुका था। प्रारंभिक युग में व्यवसाय वर्णगत या जातिगत नहीं थे बल्कि उनको अपनाने के लिए प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र था और उसके व्यवक्तित्व एवं सम्मान पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। स्वेच्छा रूप में वैदिक समाज में प्रचलित एवं विकसित इन शिल्प–व्यवसायों की जानकारी प्राप्त कर तत्कालीन आर्थिक प्रगति का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। वेदों और ब्राह्मण–ग्रन्थों में विशेष रूप से

पुरातन शिल्पों एवं व्यवसायों का उल्लेख प्राप्त होता है। ऋग्वेद में वप्ता (नाई) (10/142/4) रथकार यसा बढ़ई (1/61/4), (7/32/20) भिषक् या वैद्य (9/12/1) कर्भार या कार्मार अथवा लोहार, चर्मकार आदि का उल्लेख प्राप्त होता है। अर्थववेद में रथकार (रथ निर्माता), (3/5/6), लुहार, सुनार, सुत (सारथी) आदि का भी वर्णन सहज ही मिलता है। वेदों से लेकर उपनिषदों तक जिन अनके शिल्पों एवं व्यवसायों का उदय हो चुका था, संहिताओं, ब्राम्हण–ग्रन्थों, आरण्यकों और उपनिषदों के अनुशीलन से महामहोपाध्याय डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे ने धर्मशास्त्र का इतिहास (भाग–1, पृ0 116–117) में उनका उल्लेख कुछ इस प्रकार किया है –

प्रवक्ता – संस्कृत विभाग, महिला महाविद्यालय (परस्नातक), किदवईनगर, कानपुर।

संस्कृति का वैश्विक परिप्रेक्ष्य :–

प्राकृतिक संपदा – व्यापार के लिए प्राकृतिक संपदा का होना भी अत्यन्त आवश्यक था। प्राकृतिक संपदा भूमि समाज के सभी वर्गो के लोगों की प्राणरक्षिका व जीवनदायिनी है। वैदिक साहित्य में धरती के प्रति बड़े श्रद्धा के भाव प्रकट किये गये हैं।

पूंजी – किसी भी व्यापार को प्रारंभ करने के लिए पूंजी की व्यवस्था करना अत्यन्त अनिवार्य होता है, जो कि मूलधन कहलाता है। वेदों में मूलधन के लिए 'धन' शब्द का प्रयोग किया गया है, मंत्रों में कहा गया है कि व्यापार के लिए मैनें जो धन लगाया है वह निरन्तर बढ़ता रहे, उसमें लाभ ही हो, हानि नहीं। मेरा धन कम न होने पायें।

संघ – संघे शक्तिः – संघ में शक्ति होती है। संगठन के द्वारा किसी भी कठिन से कठिन कार्यो को भी सफलतापूर्वक पूर्ण किया जा सकता है, उसी प्रकार व्यापार को भी संगठन के माध्यम से शक्ति मिलती है। व्यक्तिगत उद्योग की अपेक्षा सामूहिक उद्योग अधिक लाभप्रद होता है।

भारतीय संस्कृत वाङ्मय के काल निर्धारण का कार्य एक कठिन समस्या है। यद्यपि इतिहासकारों ने इस समस्या को हल करने की दिशा में काफी प्रयास किया है, परंतु प्रायः उनके विचारों में परस्पर मतभेद रहा है। भारतीय इतिहासकारों के लिये यह समस्या इतनी जटिल क्यों सिद्ध हुई, इसका प्रमुख कारण तत्कालीन

विचारकों द्वारा आत्म–प्रशस्ति एवं ग्रन्थों में समय का उल्लेख न किया जाना रहा है। हमारे इतिहासकारों द्वारा प्रागैतिहासिक सभ्यता तथा उसके समय की खोज आज भी जारी है, किन्तु सभ्यता की प्राचीनता तिथि के बारे में इतिहासकारों के अलग–अलग मत रहे है। अतएव एक निश्चित काल का निर्धारण न हो पाने के अभाव में मैं किसी का अन्धानुकरण कर तिथि देना उचित नहीं समझता।

वेद, महाकाव्य, सूत्रग्रंथ, स्मृति साहित्य तथा पुराणादि साहित्य के काल निर्धारण में भी मत–मतांतर है। यही कारण है कि यहां पर ग्रन्थों को ही आधार मानकर क्रमानुसार आर्थिक विचारों का विवेचन करना उचित समझा गया है।

पाश्चत्य अर्थशास्त्री के अनुयायीओं ने प्राचीन भारतीय आर्थिक विचारों के अस्तित्व को इतना विवादास्पद बना दिया है कि एक बार गंभीरता से सोचना पड़ता है कि क्या प्राचीन भारतीय जीवन में इन आर्थिक विचारों का कोई अस्तित्व था, या नहीं? मैं तो विभिन्न विचारकों के मत–मतांतरों के अनुशीलन के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि प्राचीन भारतीय समाज की आर्थिक क्रियाशीलता की पृष्ठभूमि में सुचिन्तित प्राचीन आर्थिक विचारों का अस्तित्व है और इसका विकास उत्तरोत्तर शास्त्र अथवा अनुशासन का रूप ग्रहण करता गया है।

वेद वेदांगों तथा प्राचीन भारतीय शास्त्रों एवं साहित्य के ह्रदय स्थल में जाकर आर्थिक विचारों को श्रृंखलाबद्ध रूप में रखकर अध्ययन करने पर पता चलता है कि आदियुगीन मानव की सभ्यता की प्रगति के साथ ही साथ उनके आर्थिक विचारों का भी विकास हुआ। इसे यों भी कहा जा सकता है कि आदिकालीन मानव समाज के आर्थिक विकास के फलस्वरूप उसकी सभ्यता का भी क्रमशः विकास हुआ है।

प्राचीन भारतीय आर्थिक इतिहास के क्रमिक विकास का अध्ययन करते समय भारतीय सभ्यता पर अत्याधिक प्रभाव डालने वाले बाह्य तथ्यों का भी अध्ययन करना आवश्यक है।

आर्थिक इतिहास के अध्ययन में सबसे बड़ी कठिनाई काल निर्धारण की है। फिर भी उपलब्ध सामग्री को क्रमबद्ध करके इस कठिनाई को दूर किया जा सकता है।

वेदों उपनिषदों, महाकाव्यों स्मृतियों तथा पुराणों में निहित सामग्री ही, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक विचारों के इतिहास के मूल–स्त्रोत है। अतः इस उपलब्ध वाड्मय तथा पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर प्राचीन भारतीय आर्थिक विचारों का इतिहास प्रस्तुत करने की चेष्टा की गई है। भारतीय इतिहास प्रागैतिहासिक काल तथा सिन्धु सम्यता की नगर व्यवस्था, रहन–सहन, खान–पान तथा व्यवसायिक रीति–रिवाजों से प्रारम्भ होता है। इसी को हम प्राचीन आर्थिक विचारों के उद्भव का काल स्वीकार कर सकते है। यद्यपि आर्थिक विचारों का स्वरूप किसी ग्रंथ के रूप में नहीं पाया जाता तथापि ध्वंसावशेष के रूप में बिखरी सामग्री उनके स्वरूप को स्पष्ट करने में पूर्णतया सक्षम है।

कुछ पाश्चात्य् अर्थशास्त्रियों का कथन है कि अर्थशास्त्र का उद्भव तभी से माना जायेगा, जब से आर्थिक विचारों ने व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक रूप प्राप्त किया। उनके अनुसार अर्थशास्त्र का जन्म 200 वर्ष पर्व प्रकाशित एडम स्मिथ की 'वेल्थ ऑफ नेशन' नामक पुस्तक से माना जाना चाहिये, किन्तु अधिकांश भारतीय अर्थशास्त्री इस विचार से सहमत नहीं है। उनके अनुसार यह आवश्यक नहीं है कि विचार वैज्ञानिक ही हो क्योंकि देश, काल और परिस्थितियों के अनुसार विचार हमेशा बदलते और विकसित होते रहते हैं तथा वैज्ञानिक स्वरूप भी समय–समय पर बदलता रहता है।

आधुनिक अर्थशास्त्री आज के वातावरण में उत्पन्न समस्याओं पर विचार करते है। उनके सामने मुख्यतः मूल्य, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, बड़े पैमाने पर उत्पादन सट्टा तथा एकाधिकार आदि की समस्याएं है। इसी प्रकार प्राचीन विचारकों ने भी सम–सामयिक आर्थिक स्थितियों और समस्याओं पर विचार किया था। उनके चिन्तन की आधारशिला एक सुखी, सम्पन्न, क्रियाशील, उत्क्रमणशील मानव समाज की परिकल्पना थी, तत्कालीन उत्पादन, वितरण, विनिमय प्रणाली पर आधारित आर्थिक जीवन उसका मूल आधार था। परंतु समाज ज्यों–ज्यों विकसित होता गया, त्यों–त्यों इन विचारों में भी विकास, परिवर्तन एवं संशोधन होता गया।

प्राचीन अर्थशास्त्र एवं आर्थिक विचारों के अध्ययन के द्वारा सामाजिक जीवन के अनेक ऐसे प्रच्छन्न आर्थिक पहलुओं का पता चलता है, जिनसे वर्तमान सामाजिक

समस्याओं को हल करने में सहायता मिलती है। इसके साथ ही युग विशेष की आर्थिक व्यवस्था, राजनीतिक समस्या तथा उसके निदान के उपायों की जानकारी के साथ आज के प्रगतिशील समाज में बाधक तत्वों से निपटने में भी मदद मिलती है।

पाश्चात्य अर्थशास्त्र पर विश्वास रखने वाले कतिपय अन्धानुग्रायी अर्थशास्त्री आधुनिक युग को अर्थशास्त्र के विद्यार्थी के लिए प्राचीन आर्थिक विचारों की दृष्टि से उपयोगी नही स्वीकार करते। उनके अनुसार प्राचीन आर्थिक विचारों का अध्ययन अनावश्यक एवं अप्रासंगिक है।

मानव सभ्यता के ऐतिहासिक संदर्भ में आर्थिक विचारों का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है। इनकी सहायता से न केवल हमें अपने पूर्वजों के रहन–सहन के स्तर का ज्ञान होता है। बल्कि उनके द्वारा किये गये कार्यो–व्यवहारों तथा उद्देश्यों, आदर्शो का भी ज्ञान प्राप्त करने में हमें सहायता मिलती है। इन विचारों का अध्ययन हमें तत्कालीन सभ्यता के विकास की दिशा को भी समझने के लिए वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान करता है। प्राचीन साहित्य, दर्शन एवं अर्थशास्त्र के जानकार अतीत की उपेक्षा के पक्ष में नहीं है।

आज का अर्थशास्त्री अथवा आर्थिक विचारक नवीन एवं उपयुक्त विचारों की स्थापना करना चाहता है, तब उसका कार्य आर्थिक विचारों के इतिहास का अध्ययन किये बिना सुचारू रूप से नहीं चल सकता। इसी प्रकार यदि अर्थशास्त्र का शोधार्थी अथवा विद्यार्थी वर्तमान युग की आर्थिक प्रवृत्तियों, योजनाओं, सिद्धांतों और विचारों का अध्ययन करना चाहता है, तो उसका यह कार्य आर्थिक विचारों के इतिहास के सम्यक अनुशीलन के बिना संभव न हो सकेगा।
पाश्चात्य अर्थशास्त्र अथवा ग्रन्थों और आर्थिक विचारों का इतिहास प्राचीन नहीं है। योरप में औद्योगिक क्रांति के उपरांत ही अर्थशास्त्र का जन्म और विकास हुआ। उन अर्थशास्त्रियों ने कतिपय यूनानी दार्शनिकों के विचारों का सहारा लेकर ही अपने विचारों को, सिद्धांतों को निरूपित किया और हमारे देश के अधिकांश आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने, विचारकों ने उन्हीं का अंधानुकरण करके, उनके द्वारा प्रणीत सिद्धांतों–विचारों को भारतीय परिवेश में आरोपित कर दिया। उनकी इस

प्रकार स्वीकृत–प्रतिपादित विचार प्रणाली कितनी र्निदोष हो सकती है– यह विषय भी चिन्तनीय है।

प्राचीन अर्थशास्त्रीय ग्रंथों और आर्थिक विचार की परम्परा में अनेक ऐसे विचार मिलते है, जो आधुनिक युग में भी परिवर्तित और संशोधित रूप में मौजूद है। ये विचार हमें बताते है कि कोई भी ऐसा युग नहीं रहा है, जिसमें तत्कालीन आवश्यकताओं के अनुरूप आर्थिक चिन्तन न हुआ हो। विचारों की जानकारी के बिना सामाजिक एवं आर्थिक विकास के वास्तविक स्वरूप का पता कदापि नहीं चल सकता।
आज के आर्थिक विचारों में प्राचीन विचारों का अत्यंत विकसित रूप ही हमें देखने को मिलता है। उदाहरण के लिए सामाजिक कल्याण की भावना, द्रव्य पण्य, विनिमय, ब्याज, लगान, सम्पत्ति, धन आदि से संबंधित विचार आधुनिक युग की देन नहीं है। इनका उद्धव अत्यंत प्राचीन है। इतिहास के साथ–साथ ये विचार परिष्कृत होते हुये इस युग तक पहुंचे और इनका वर्तमान स्वरूप देखने को मिला।

धर्मशास्त्र एवं नीतिशास्त्र का इन दोनों शास्त्रों से घनिष्ठ संबंध रहा है। नीतिपरक सिद्धांतों की अपेक्षा धर्मशास्त्रिय सिद्धांतों को अर्थशास्त्र के अंतर्गत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। आज के 'अर्थशास्त्र' (एकोनामिक्स) शब्द का जो स्वरूप स्पष्ट होता है। उसे स्पष्ट करने के लिए प्राचीन यूनानियों के पास संभवतः अर्थशास्त्र जैसा कोई शब्द न था, यही बात 'राजनीतिशास्त्र' (पालिटिक्स) के बारे में भी है।
आचार्य कौटिल्य 'दर्शन' के अंतर्गत तीन शास्त्रों का उल्लेख करते है – सांख्य, योग्य तथा लोकायत। कौटिल्य के विचार कपिल, वृहस्पति और पतंजलि के विचारों से मेल खाते है। कुछ आचार्य अन्वीक्षिकी को न्याय और वेदान्त का उपरूप मानते हैं। उनके अनुसार वयी शब्द वेदों को घोतक है। इसी से ज्ञान की अनेक सांसारिक कामना करें। इस प्रकार मुक्त होने की अनिवार्य आवश्यकता बताते हुए भी अर्थ और काम को चार पुरूषार्थो में स्थान दिया गया है।
शुक्र ने धन और द्रव्य के बीच अंतर करते हुये बताया है कि जो वस्तुएं विक्रय के लिये प्रयुक्त होती है वे द्रव्य है तथा अन्य सभी वस्तुएं जो मानव जीवन के

उपभोग की है अर्थात् जिनकी साक्षात् उपयोगिता है, जिनको मोल लिया और बेचा जा सकता है तथा जिन्हें प्राप्त करने की मनुष्य इच्छा करता है, वह सब धन है। अर्थ तथा धर्म का पारस्परिक घनिष्ठ संबंध था। क्योंकि प्राचीन धार्मिक भावनाओं की तुष्टि का माध्यम ही अर्थ अथवा धन था। वैदिक काल में अधिकतम संतुष्टि तथा सामाजिक कल्याण के लिए धन की याचना की गई है। इसका उल्लेख हमें वेद के मंत्रों में मिलता है।

धन का संबंध धार्मिक क्रियाओं के साथ इस प्रकार जुड़ गया था कि धर्म एवं धन एक–दूसरे के पूरक बन गये थे।

सामाजिक रचना को देखते हुए धन का महत्व काफी अधिक बढ़ गया। उस युग में कृषि, पशुपालन, वाणिज्य आदि के माध्यम से धनोपार्जन किया जाता था। स्मृतिकार याज्ञवल्क्य ने 'अर्थशास्त्र तु बलवर्द्धमशास्त्रमिति स्थितिः' कहकर धर्म की पूर्ति के लिए अर्थशास्त्र की प्रधानता बताई है। हरिवंश पुराण में धन शब्द का प्रयोग 'धनानि' बहुवचन के रूप में किया गया है। वृद्धि के रूप में प्रयोग किए गये धन का तात्पर्य वस्तु, पूंजी से है और धन–धनी शब्द का प्रयोग खजाने के रूप में किया गया है।

निष्कर्ष :–

भारतीय अर्थशास्त्र की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि उसका संबंध विभिन्न ज्ञान की शाखाओं से जुड़ा रहा है। इससे ज्ञान की एकता का प्रतिबिम्ब परिलक्षित होता है। प्राचीन आचार्यो के आर्थिक विचार तत्कालीन धार्मिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक विचारों के विचित्र मिश्रण थे इन्हीं विचारों के क्रम में पाश्चात्य अर्थशास्त्रियों ने उन्हें एक नया रूप देने का प्रयास किया। प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तू (384–322 ई0पू0) के समय से विचारों का नया स्वरूप सामने आया। अरस्तू को कुछ लेखकों ने प्रथम विश्लेषणात्मक अर्थशास्त्री बतलाया है। अपने 'पालिटिक्स' नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ के प्रथम खण्ड में अरस्तू ने अर्थशास्त्र की परिभाषा तथा इसके विषय–क्षेत्र के संबंध में अपने विचार व्यक्त किये हैं।

ऋग्वेद के मंत्रों से पता चलता है कि उस समय के लोगों में अर्थ व धन की एक ओर जहां कामना की जाती थी वहीं दूसरी ओर उसे इतना अधिक महत्व नहीं

दिया जाता था, जितना कि आज के युग में दिया जाता है। इतना अवश्यक था कि लोग धन की वृद्धि उतनी चाहते थे, जिससे उनकी आवश्यकता की पूर्ति हो सके।
''किसी दूसरे व्यक्ति के धन का अपहरण करना 'पाप' है।'' यह कह कर वहां यह स्पष्ट किया गया है कि लोगों की आर्थिक लिप्सा मर्यादित होनी चाहिए। इस प्रकार उस काल में परिश्रम द्वारा अर्जित धन से ही संतोष करना लोगों का कर्तव्य समझा जाता था। इससे यह निष्कर्ष भी निकलता है कि उस समय भी मनुष्य के समक्ष अधिकतम संतुष्टि एवं कम संतुष्टि की समस्या विद्यमान थी। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि उस काल में अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष – इन चारों पुरूषार्थो का पारस्परिक घनिष्ठ संबंध था।

रामायण काल में अर्थशास्त्र का स्वरूप वार्ता के रूप में विद्यमान था। इसका अध्ययन विभिन्न प्रकार के व्यवसायों तथा उद्योगों के लिये किया जाता था। रामायण में वार्ता को अर्थशास्त्र का एक प्रमुख अंग माना गया है।

कृषि, पशुपालन तथा व्यापार मुख्य रूप से इसके अंतर्गत प्रयुक्त होते, किन्तु अध्ययन की दृष्टि से यह विषय इतना महत्वपूर्ण बन गया कि लोगों ने इसे अन्य शास्त्रों (आन्वीक्षिकी, त्रयी, दण्डनीति) से भी संबंद्ध कर दिया। रामायण में इसका समुचित प्रयोग देखने को मिलता है। यह वार्ता जिसे हम आधुनिक अर्थशास्त्र कह सकते है, कृषि पशुपालन, व्यापार तथा अन्य आर्थिक विषयों का एक शास्त्र बन गया था।

महाभारतकालीन युग को सुव्यवस्थित, समुत्रत, प्रगतिशील और परिपक्व आर्थिक विचारों का युग कहा जा सकता है। तत्कालीन समाज में प्रशासनिक दृष्टि से राजाओं का अधिकार और महत्व अधिक बढ़ गया था। जाति प्रथा पूर्व की परम्परा पर ही आधारित थी। ब्राहाणों को समाज में सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। शूद्र तथा दासों को श्रमिक का अधिकर दिया गया था। स्त्रियों की वही प्रतिष्ठा थी, जो कि वैदिक काल में उन्हें प्राप्त थी। यद्यपि अधिकांश जनसंख्या ग्रामों में निवास करती थी, परंतु इस समय तक काफी बड़े–बड़े नगरों का भी जन्म हो चुका था। काशी, अयोध्या, हस्तिनापुर जैसे नगर राजाओं की राजधानी थे और भारी संख्या में लोग वहां निवास करते थे।

तत्कालीन लोगों के जीविकोपार्जन के साधन कृषि, पशुपालन तथा उद्योग धंधे थे। व्यापार इस युग तक उन्नति के उच्च शिखर तक पहुंच चुका था।

संदर्भ सूची :–

1. यजुर्वेद – 'मरूद्भ्यो वैश्यम्' – 30/5
2. अथर्ववेद – 'इन्द्रमहं वणिजं चोदयामि' , 3/15/1
3. यजुर्वेद – 3/50 – देहि में ददामि ते, नि मे धेहि नि ते दधे । निहारं च हरासि मे, निहारंनिहराणि ते।
4. वैदिक साहित्य और संस्कृति – वाचस्पति गैरोला – पृष्ठ सं. – 403–404.
5. ऋग्वेद – 4/24/10 – दशभिर्भमेन्द्रंक्रणाति धेनुभिः ।
6. ऋग्वेद 4/24/9 अथर्ववेद – 12/2/36.
7. अथर्ववेद – 3/17/8 – सीते वन्दामहे न्वार्वाची सुभगे भव। यथा नः सुमना असो यथा नः सुफला भुवः ।
8. अथर्ववेद् – 12/1/6 – विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगतो निवेशनी।
9. अथर्ववेद –7/18/2 – प्र नभतां प्रथिवी जीरदानुः ।

ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

डॉ.अनूप तिवारी एवं **रवि बर्मन**
म.प्र भोज महाविधालय

''मनरेगा'' और ग्रामीण अर्थव्यवस्था

प्रस्तावना :– गांव में बेरोजगारी और गरीबी दोनों ही गंभीर समस्यायें हैं। यद्यपि इन समस्याओं का समाधान तभी संभव है, जब गांवों के गरीबों को आत्म–निर्भर बनाया जायें। आत्मनिर्भर बनाना एक प्रक्रिया है। जिसमें समय लगना स्वाभाविक है। गांव में परंपरागत पेशों को सामाजिक सम्मान न मिलने के कारण इनसे लोगों का रूझान खत्म हुआ है। कालान्तर में गांव में लोग सामाजिक अवमानना व प्रताड़ना के शिकार होते रहे हैं। रोजगार व सामाजिक सम्मान की तलाश में यही लोग शहरों की ओर पलायन किये हैं, परंतु शहरों में भी उन्हें न रहने की जगह मिली और न ही सामाजिक सम्मान व रोजगार मिला।

रोजगार का संबंध हमारी आर्थिक स्थिति को प्रभावित करता है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत बहुत ही पिछड़ी स्थिति में था। औपनिवेशिक तकनीक के फलस्वरूप भारत जमींदारी को प्रोत्साहन मिला। फलस्वरूप समाज में आर्थिक विषमता बढ़ती गई। जमीन का अधिकांश भाग समाज के बड़े लोगों के हाथों में केन्द्रित हो गया। रोजगार का संबंध सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि सभी क्षेत्रों में सह संबद्ध है। रोजगार न मिलने से व्यक्ति अशिक्षित, अस्वस्थ्य तथा सामाजिक भेदभाव का शिकार हो जाता है। स्वतंत्रता के पश्चात् करीब 30 करोड़ जनसंख्या में से 11 करोड़ लोग निर्धनता की रेखा से नीचे थे। अधिकांश जमीने उच्च वर्गीय लोगों के पास केन्द्रित थी। भारतीय संविधान के लागू हो जाने पर सरकार पर यह दायित्व आया कि वह अपने नागरिकों की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक स्थितियों के ऊपर कठिन प्रयास करेगा। भारतीय संविधान के भाग 4 के अनुच्छेद 46 स्पष्ट निर्देश राज्यों को देता है। वह अपने नागरिकों के लिये रोजगार के साधनों को उपलब्ध करवाने का प्रयास करेगा। सन् 1952 में ग्रामीण सामुदायिक विकास कार्यक्रम की शुरूवात की गई इस कार्यक्रम का उद्देश्य था। गरीबी व अशिक्षा को दूर करना साथ ही रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाना प्रारंभ में लोगों को सूखा क्षेत्र मरुस्थल विकास आदि योजनाओं के अंतर्गत कार्य

दिया जाता था। 1976 में इन्दिरा गांधी सरकार ने अपने 20 सूत्रीय कार्यक्रम में गरीबी हटाने पर ध्यान केन्द्रित किया। 1980 के दशक से ही रोजगार पूरक योजनाओं का प्रारंभ हुआ। 1989 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना। 2000 में प्रधानमन्त्री ग्रामीण रोजगार योजना। 2003 में स्वर्ण जयन्ती स्वरोजगार योजना, इन योजनाओं का मुख्य उद्देश्य सीमित अवधि या कार्यानुरूप रोजगार उपलब्ध करवाना। यह तथ्य उभरकर आया कि 10 वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक भी गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों में कमी नहीं आई है। 90 प्रतिशत् आबादी असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत है इन लोगों को सरकार द्वारा निर्धारित राशि नहीं मिल पाती है। इसी बात को ध्यान में रखते हुये एक ऐसी योजना की आवश्यकता आई जो व्यक्ति को रोजगार उपलब्ध करवाने के साथ–साथ उन्हें इस बात का आश्वासन दे सकें कि जब उन्हें रोजगार की आवश्यकता होगी हम सरकार से मांग सकते हैं और इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये फरवरी 2005 में आंध्रप्रदेश के अनंतपुर जिले से प्रधानमन्त्री डॉ. मनमोहन सिंह ने इस योजना की शुरुवात की और आज यह योजना भारत के सम्पूर्ण जिलों में लागू है।

मध्यप्रदेश सरकार द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न ग्रामीण रोजगार उन्मूलन कार्यक्रमों और विभिन्न महत्वपूर्ण जनकल्याणकारी योजनाएं जो ग्रामीणों की गरीबी और बेरोजगारी को कम करने में काफी हद तक सफल साबित हुये हैं। जिसमें भारत सरकार द्वारा 2 फरवरी 2006 को सुचारू रूप से प्रारंभ की गई योजना **"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना"** की भूमिका प्रमुख है ।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का परिचय :–

भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम सितंबर माह 2005 में पारित किया गया था। परंतु **02 अक्टूबर 2009 गांधी जयंती के अवसर पर महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) नाम से संबोधित किया जाने लगा है**। इस अधिनियम के अंतर्गत प्रावधानित कार्यक्रम ग्रामीण **रोजगार के सृजन और सुदृढ़ ग्रामीण अधोसंरचना** की स्थापना की दिशा में एक अत्यंत महत्वपूर्ण पहल है। योजना का उद्देश्य अकुशल मानव श्रम करने के इच्छुक प्रत्येक ग्रामीण परिवार को एक वर्ष में सौ दिवसीय

विधिमान सुनिश्चित रोजगार उपलब्ध कराना है तथा गरीबी उन्मूलन की दिशा में अभिनव प्रयास के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में स्थाई सार्वजनिक परिसंपत्तियों का निर्माण एवं सृजन करना है ताकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को और अधिक सशक्त एवं गतिशील बनाया जा सकें।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की आवश्यकता :–

मध्यप्रदेश की अधिकांश जनसंख्या गांवों में रहती है और ग्रामीण क्षेत्र अनेकानेक समस्याओं से ग्रसित हैं। कृषि पिछड़ी हुई अवस्था में है। और यहां उत्पादन की मात्रा अन्य देशों की तुलना में काफी कम है। ग्रामीण क्षेत्र में अज्ञानता व अशिक्षा भी पाई जाती है। लोगो को रोजगार व व्यवसाय से संबंधित सुविधायें भी उपलब्ध नहीं हैं। यहां कृषि में लोगो को वर्ष भर पूरा काम करने को भी नहीं मिलता है। इसीलिये ग्रामीण व्यक्ति ज्यादातर बेरोजगार रहते है। सरकार द्वारा ग्रामीण जनता की इन समस्याओं को देखकर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी स्कीम का नियोजन कर क्रियान्वयन किया जिससे व्यक्तियों को कृषि कार्य के पश्चात् खाली समय में 100 दिन का रोजगार उपलब्ध कराना। जिससे ग्रामीण व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" ने विकास की धारा को प्रगतिशील कर दिया है। भारत में अब ग्रामवासियों को **गांव में ही रोजगार उपलब्ध हो रहा है।** इस योजना की अपार सफलता को देखते हुये लगता है कि यह योजना भविष्य में पूरे भारत के विकास में मील का पत्थर साबित होगी।

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" सच्चा राष्ट्रीय संकल्प तथा अभियान है। जो अपने उद्देश्यों, स्वरूप तथा प्रभाव के दृष्टिकोण से अभूतपूर्व है। इसकी सफलता केन्द्र के साथ–साथ राज्य सरकारों, स्वयंसेवी संगठनों, मीडिया तथा देश के हित के लिये संवेदनशील तथा समर्पित प्रत्येक नागरिक के लिये चुनौती है। इस योजना की विसंगतियां, विषमताएँ, त्रुटियां और कमियां दूर हो जाएं तो यह योजना ग्रामीण भारत की कायापलट करने में सफल हो सके। केवल होना यह है कि एक ओर ग्रामीण जनता में शिक्षा, जानकारी और जागरूकता बढ़ाकर उन्हें अपने अधिकारों को पहचानना है, इस योजना की सफलता में प्रभावी सहभागिता करने में सक्षम बनाना है ।

यह कहा जा सकता है कि "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरी की दर और कार्य दिवसों की संख्या में वृद्धि से ग्रामीण परिवारों की आमदनी बढ़ी है। जिसके फलस्वरूप ग्रामीण परिवारों की क्रय शक्ति में वृद्धि हुई है। जिसके फलस्वरूप स्वास्थ्य के देखरेख की क्षमता में बढ़ोत्तरी हुई है।

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" कार्यो को 'हरित' और 'सम्मानपूर्ण' कार्यो के रूप में वर्णित किया जाता है, अर्थात् यह योजना श्रमिकों के लिए कार्य की बेहतर परिस्थितियां निर्मित करती है। उनके अधिकार व कानूनी हकों को सुनिश्चित कर, उन्हें सामाजिक सुरक्षा व रोजगार प्रदान कर, पर्यावरणीय स्थायी कार्यो द्वारा, जो कि पारिस्थितिकी संतुलन को पुनर्जीवित करती है व जैव विविधता को संरक्षण प्रदान करती है। प्रमाण दर्शाते है कि ऐसी स्थिति कई मामलों में दर्ज हुई है।

ग्रामीण विकास के क्षेत्र में बुनियादी संरचना का महत्वपूर्ण स्थान हैं ग्रामीण क्षेत्र की अभी तक की एवं सबसे बड़ी योजना "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" है। सरकार द्वारा संचालित योजनाओं के क्रियान्वयन से ग्रामीण विकास की गति में तीव्रता आई है, जिसके परिणामस्वरूप ग्रामीणों का जीवन स्तर ऊँचा उठा है।

1. "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के क्रियान्वयन से ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति पहले से सुदृढ़ एवं बेहतर हो रही है।
2. "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के संचालन से ग्रामीण व्यक्तियों की बेरोजगारी में कमी आ रही है और बेरोजगार व्यक्तियों को काम मिल रहा है।
3. "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के क्रियान्वयन से ग्रामीणों का आर्थिक सशक्तिकरण हो रहा है, और उनका जीवन स्तर एवं रहन–सहन उच्च हो रहा है।
4. "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" का लाभ अधिकांश निर्धन वर्ग के व्यक्तियों को लाभान्वित कर रहा है और उनकी आय में वृद्धि हो रही है।
5. "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के क्रियान्वयन से निर्धन वर्ग के होने वाले शोषण को रोका जा रहा है।

6. "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के क्रियान्वयन से ग्रामीणों को स्थानीय स्तर पर रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है, जिससे उनके शहरों की ओर होने वाले पलायन में कमी आ रही है।
7. "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के क्रियान्वयन से ग्रामीण रोजगार के प्रति जागृत होकर अपने जॉब कार्ड बनवा कर रोजगार प्राप्त कर रहे हैं।
8. "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के क्रियान्वयन से निर्धन व्यक्तियों को सामाजिक दृष्टि से सशक्त बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत मध्यप्रदेश में चल रहे कार्यों की स्थिति (परिसम्पत्ति) वर्षवार

वर्ष 2006–07 में मध्यप्रदेश में कुल कार्य 169158 हुये, जिसमें से 86610 कार्य वर्ष 2006–07 में चल रहे थे एवं 82548 कार्य पूर्ण हो गये थे। कार्यों में पहुंचमार्ग, नहर निर्माण, तालाब निर्माण, मेढ़ बंधान, कूप निर्माण, नाला गहरीकरण, वृक्षारोपण, नंदन फलोद्यान एवं सामुदायिक वृक्षारोपण जैसे हितग्राही मूलक एवं सामुदायिक कार्य वर्ष भर चले।

वर्ष 2007–08 में मध्यप्रदेश में कुल कार्य 341529 हुये, जिसमें से 205526 कार्य वर्ष 2007–08 में चल रहे थे एवं 136003 कार्य पूर्ण हो गये थे। कार्यों में पहुंचमार्ग, नहर निर्माण, तालाब निर्माण, मेढ़ बंधान, कूप निर्माण, नाला गहरीकरण, वृक्षारोपण, नंदन फलोद्यान एवं सामुदायिक वृक्षारोपण जैसे हितग्राही मूलक एवं सामुदायिक कार्य वर्ष भर चले।

वर्ष 2008–09 में मध्यप्रदेश में कुल कार्य 525888 हुये, जिसमें से 313657 कार्य वर्ष 2008–09 में चल रहे थे एवं 212231 कार्य पूर्ण हो गये थे। कार्यों में पहुंचमार्ग, नहर निर्माण, तालाब निर्माण, मेढ़ बंधान, कूप निर्माण, नाला गहरीकरण, वृक्षारोपण, नंदन फलोद्यान एवं सामुदायिक वृक्षारोपण जैसे हितग्राही मूलक एवं सामुदायिक कार्य वर्ष भर चले।

वर्ष 2009–10 में मध्यप्रदेश में कुल कार्य 555310 हुये, जिसमें से 310691 कार्य वर्ष 2009–10 में चल रहे थे एवं 244619 कार्य पूर्ण हो गये थे कार्यो में पहुंचमार्ग, नहर निर्माण, तालाब निर्माण, मेढ़ बंधान, कूप निर्माण, नाला गहरीकरण, वृक्षारोपण,
नंदन फलोद्यान एवं सामुदायिक वृक्षारोपण जैसे हितग्राही मूलक एवं सामुदायिक कार्य वर्ष भर चले।

वर्ष 2010–11 में मध्यप्रदेश में कुल कार्य 686703 हुये, जिसमें से 395668 कार्य वर्ष 2010–11 में चल रहे थे एवं 291035 कार्य पूर्ण हो गये थे कार्यो में पहुंचमार्ग, नहर निर्माण, तालाब निर्माण, मेढ़ बंधान, कूप निर्माण, नाला गहरीकरण, वृक्षारोपण, नंदन फलोद्यान एवं सामुदायिक वृक्षारोपण जैसे हितग्राही मूलक एवं सामुदायिक कार्य वर्ष भर चले।

वर्ष 2011–12 में मध्यप्रदेश में कुल कार्य 883162 हुये, जिसमें से 754614 कार्य वर्ष 2011–12 में चल रहे थे एवं 128548 कार्य पूर्ण हो गये थे। कार्यो में पहुंचमार्ग, नहर निर्माण, तालाब निर्माण, मेढ़ बंधान, कूप निर्माण, नाला गहरीकरण, वृक्षारोपण, नंदन फलोद्यान एवं सामुदायिक वृक्षारोपण जैसे हितग्राही मूलक एवं सामुदायिक कार्य वर्ष भर चले।

श्रम शक्ति का हो रहा बेहतर उपयोग :–

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" में किये जाने वाले सभी कार्य हाथ से ही किये जाते हैं। कहने का मतलब है कि मानव की श्रम शक्ति का उपयोग इस योजना के क्रियान्वयन में किया जाता है बढ़ते मशीनी युग में रोजगार के अवसर नए बने है तो पुराने परम्परागत अवसर कम भी हुए है। ऐसी स्थिति में ग्रामीण इलाकों में श्रम शक्ति के माध्यम से रोजगार पाने वाले परिवार संकट में रह रहे हैं । लेकिन "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के माध्यम से सरकार ने हाथ से की जाने वाली मेहनत की प्रक्रिया को बनाए रखा है, और प्रतिस्पर्धी माहौल में ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार अंसुतलन को भी दूर करने का प्रयास किया है।

सामाजिक परिवर्तन :–

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के कारण अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति परिवारों एवं महिलाओं को अधिक रोजगार मिला है। जिससे उनका आर्थिक एवं सामाजिक विकास तेजी से हुआ है। इस तरह अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के लोगो को "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" से अधिक लाभ पहुंचा है।

महिलायें आत्म निर्भर बनी :–

मध्यप्रदेश में पिछले वर्षो में महिलाओं में तेजी से परिवर्तन हुआ है यह परिवर्तन शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के क्षेत्र में महिला आत्म निर्भर बनी है। शहरी क्षेत्र की महिलायें शिक्षा एवं रोजगार के क्षेत्र में तेजी से आगे बढ़ी है, परंतु गांव विशेषकर आदिवासी वनवासी एवं पहाड़ी क्षेत्र की महिलाएं आज भी उनकी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है वह आज भी पिछड़ेपन के कारण शिक्षा और रोजगार से कोषों दूर है। परंतु महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के आने से ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं का आर्थिक विकास तेजी से हो रहा है, उसका कारण है कि गांव की महिलाओं को गांव में ही रोजगार प्राप्त हो रहा है वह भी जब चाहें तब। मनरेगा के आने से महिलाओं की शक्ति बढ़ी है। वह आर्थिक रूप से मजबूत हुई है।

मनरेगा पलायन और शोषण रोकने में सहायक :–

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" लागू होने के पूर्व ग्रामों में रोजगार होने के कारण मजदूर पलायन करने लगे थे, तथा आर्थिक अभाव के कारण वे शोषण भी झेलते रहते हैं लेकिन अब हालात तेजी से बदल रहे हैं। और अब ग्रामीणों का पलायन रूक रहा है।

'काम के अधिकार'' को बल :–

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के माध्यम से ''काम के अधिकार'' को बल मिला है। निश्चित तौर पर ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार अंसुतलन की स्थिति को बहुत हद तक "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के लागू हो जाने के बाद नियंत्रण में लाया गया है। लेकिन यह बात भी सच है कि हर व्यक्ति पूरे वर्ष रोजगार चाहता है और ना कि सिर्फ

ग्रामीण बल्कि शहर में रहने वाले गरीब आदमी भी आर्थिक विषमता से उतना ही पीड़ित है। रोजगार की आवश्यकता सभी को है और "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" ग्रामीण क्षेत्र में काफी उपयोगी है।

मजदूरों की प्रमुख समस्या :–

बैंक और पोस्ट ऑफिस की दूरी अधिक है।
बैंक और पोस्ट ऑफिस में मजदूरी का भुगतान में देरी होती है।
बैंक और पोस्ट ऑफिस के द्वारा मजदूरों से अच्छा व्यवहार नहीं किया जाता।
मजदूरों की राशि पर बैंक और पोस्ट ऑफिस ब्याज नहीं देती है।

मनरेगा को और बेहतर बनाने के लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत है :–

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के तहत् मजदूरी की दरों को मॅहगाई के अनुपात में बढ़ाया जाए ।

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" मैं भ्रष्टाचार रोकने के लिए मॉनीटरिंग कमेटी बनें "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के तहत हर ब्लॉक में स्वतंत्र माइक्रो आब्जर्बर की नियुक्ति हो ।

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" सहित अन्य सभी योजनाओं की जानकारी देने एवं बताने के लिए प्रत्येक गॉव में प्लानिंग इंस्ट्रक्टर नियुक्त किये जाएँ।

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के अन्तर्गत करवाये जाने वाले कार्यों का प्रचार प्रसार ग्रामीण क्षेत्रों में होना चाहिए ।

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के माध्यम से कराये जा रहे विभिन्न कार्यों के क्रियान्वयन से लोगों को रोजगार प्राप्त हुये हैं और पर्यावरण पुर्ननिर्माण को लाभ मिला है इस योजना ने ग्रामवासियों को नई चेतना दी है ।

मजदूरों की मजदूरी का भुगतान समय पर हो। मजदूरों के खातों में ब्याज मिलें, खातों में डिपाजिट एवं अन्य सुविधा सचिवों पर काम का बोझ कम किया जायें। बेरोजगारी भत्ते के बारे में कम जागरूकता। मांग पर काम मिलने के बारे में कम जागरूकता। शिकायत निवारण व्यवस्था के बारे में कम जागरूकता।

जहाॅ "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के कार्य अच्छे से हो रहे है। मजदूरी प्राप्त हो रही है, वहां पलायन नहीं हो रहा है। "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" का प्रमुख उद्‌देश्य लोगो का आर्थिक विकास लोगों को कार्य देना, पिछड़े क्षेत्रों में "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के कारण परिवर्तन आया है परंतु और सुधार करने की आवश्यकता है।

इस योजना में जहां एक तरफ ग्रामीण श्रमशक्ति को रोजगार सुलभ हो रहा है वहीं दूसरी तरफ ऐसी **परिसंपत्तियां विकसित** हो रही हैं जिनसे कृषि उत्पादन में बढ़ोत्तरी होगी। जल संरक्षण इस योजना की शीर्ष प्राथमिकता में है जबकि सड़कों का कार्य अंतिम प्राथमिकता है, परंतु क्षेत्र में सबसे अधिक कार्य सड़कों पर कराया जाता **है**। इसका मुख्य कारण योजना की मंशा को ठीक न समझ पाना है।

अतः निष्कष :— के रूप में कहा जा सकता है कि "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" के संदर्भ में प्रस्तुत विचार और विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि यह योजना **ग्रामीण गरीब को रोजगार प्रदान करने में एक वरदान सिद्ध हुई है** ।

"महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" समस्त विरोधाभाषों के बावजूद **मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था के लिए एक ऐतिहासिक और क्रांतिकारी कदम** है यदि इसे प्रभावी ढंग से लागू किया जाय। इसके लिए यह आवश्यक है कि इसका क्रियान्वयन इस ढंग से हो कि इसे भ्रष्टाचार का शिकार होने से रोका जाए। इस योजना की अवधारणा एवं उद्‌देश्य निःसंदेह मानव का कल्याण एवं विकास करना है। यदि "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना" कार्यक्रम को सही तरीके से और सही समय पर क्रियान्वित किया जाता है तो देश के ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार एवं विकास की नींव तैयार होगी व ग्रामीण क्षेत्रों के पुनरूथान का वातावरण तैयार होगा ।

संदर्भ गर्न्थ सूची :–

National Rural E Employment Gurantee Act -2005 . Report to the People 2006-09

Ministryof Rural Development .Department of Rural Development Government of India .New Delhi

Planning and Implementation of National Rural Employment Gurantescheme in Madhya Pradesh .A Process study Selected districts in Madhya Pradesh Monograph Server-7

M.I.S For National Rural Employment Guarantee Act (Nrega) -2005 User Manual.Ministry of Rural Development Government of India. New Delhi

तरूण कुमार मिश्रा एवं निशांत बाजपेई
जबलपुर म.प्र

भारत का आर्थिक विकास और उद्यामिता

विजन 2020 में हम विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था की कतार में खड़े होने जा रहे है। यह आवश्यक है कि गांव पर केन्द्रित योजनाएं बनायी जानी चाहिये। ग्रामीण एवं ग्रामीण क्षेत्रों का विकास होना चाहिये। इसके लिये धनराशि की व्यवस्था अनिवार्य रूप से की जानी चाहियैं ।

आर्थिक उदारीकरण एवं वैश्वीकरण 21 वीं सदी की नई सच्चाई बनकर सामने आई है वैश्वीकरण के दौर में वही राज्य मजबूती से अपने पैर जमाकर खड़ा रह सकता है जो बाजार व्यवस्था की सच्चाईयों का सामना कर सके। इसमें जरूरी है कि म.प्र. के लोगों जो कि ग्रामीण है का म.प्र. के आर्थिक विकास के लिये आर्थिक विकास के गुरूमंत्र उद्यमशीलता जो आत्मनिर्भरता आत्म सहायता के साथ–साथ बेहतर रूप से मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति का सशक्त माध्यम है को अपनाना होगा।

ग्रामीणों की विभिन्न समस्याओं को दूर करने के लिये जिस प्रकार स्वरोजगार महत्वपूर्ण होता जा रहा है। उद्यमिता विकास का महत्व उतना ही बढ़ता जा रहा है। आज भी लघु एवं कुटीर उद्योगों का महत्व बना हुआ है। ऐसे में **उद्यामिता विकास ही आर्थिक विकास** की मुख्य धुरी है।

ग्रामीणों को स्वावलंबी व आत्मनिर्भर बनाने हेतु व्यावहारिक संभावनाएं इस प्रकार हो सकती है – हस्तशिल्प, हथकरघा, काष्ठशिल्प, लकड़ी के खिलौने, आयुर्वेदिक दवाएं,(त्रिफला) पेठा, फूलों की खेती, मसरूम उत्पादन, गोद उत्पादन, पत्तल–दोना निर्माण, रस्सी–टोकरी निर्माण, गुड़ निर्माण, शहद प्रसंस्करण, भूसा विक्रय कम्बल दरी निर्माण, फल व सब्जियों का उत्पादन दलहन–तिलहन का उत्पादन आदि।

प्रदेश का आर्थिक विकास ग्रामीण उद्यामिता से ही सुनिश्चित होता हैं। ग्रामीण लोग कुटीर उद्योग के माध्यम से देश की अर्थव्यवस्थाको गति भी देते हैं। तथा खुद की समृद्धि के प्रयास भी करते है। मध्यप्रदेश में स्थापित उद्योगों हेतु कच्चा माल ग्रामीण क्षेत्रों से ही प्राप्त हो जाता है। जैसे– नरसिंहपुर खांड़ सारी एवं शक्कर उद्योग हेतु प्रसिद्ध है। इसी प्रकार चम्बल तिलहन, एवं मालवा सूती वस्त्रों हेतु प्रसिद्ध है। ये सभी उद्योग स्थानीय कृषकों की उद्यमशीलता के कारण विकसित हुये हैं। इससे उस क्षेत्र का एवं किसानों का जीवन स्तर भी बढ़ा है।

ग्रामीण व्यक्ति कई प्रकार के कुटीर उद्योगों में कार्यरत रहते हैं, जो स्थानीयता के आधार पर भिन्न–भिन्न हो सकते हैं जैसे झाडू बनाना, रस्सी बनाना, चटाई बनाना, छाते बनाना, इत्यादि। ये कुटीर उद्योग करोड़ों लोगों को रोजगार के साथ ही विकास को भी गति देते है, कुछ क्षेत्रों की तो पहचान ही वहां के उत्पादों के कारण हैं, जैसे चन्देरी का नाम बांस की हस्त निर्मित साड़ी से जोड़ा जाता है।

इस व्यूह रचना में कारीगरों, खेतीहर मजदूरों छोटे किसानों को लक्ष्य बनाया गया है। धीरे–धीरे ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने वाले कारीगर, बढ़ई मोची, तेली, कुम्हार, लुहार, सुनार, रंगरेज आदि कम हो रहे है उनके जीविकोपार्जन मुश्किल हो गया है। इनकी विद्या को ग्रहण करने वाले कम हो रहे है एवं ये लोग खुले बाजार की प्रतिस्पर्धा में टिक नहीं पा रहे हैं ऐसे में इनकी तकनीक को विकसित कर बाजार में प्रतिस्पर्धा करने योग्य बनाना आवश्यक हैं इसलिये व्यूह रचना में बहुपक्षीय अर्थव्यवस्था का प्रावधान किया गया है। इसमें सम्मिलित सभी व्यक्ति। परिवार जैसे कारीगर, मजदूर, किसान आपस में एक–दूसरे से संबंधित एवं निर्भर है। अतः लोगों की उद्यामिता योग्यताओं एवं उनकी उत्पादन एवं वितरण तकनीकों को क्षेत्रीय एवं स्थानीय विविधताओं के अनुसार ढालने की आवश्यकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों की संभावना के मद्देनजर कुछ प्रमुख सेक्टर इस प्रकार हैः दूध, बंजर भूमि विकास, मत्सय पालन, तालाब निर्माण, पशुपालन, ऊर्जा, प्रबंध, रेशम, शहद, लाख उद्योग, ओषधीय पौधों की खेती, अभियांत्रिकी, चमड़ा, बुनाई आदि। एक ब्लाक/तहसील में यदि छोटे स्तर 180–200 गांव है एवं मध्यम स्तर के 60–70 गांव है तो दो तीन सेक्टर होने पर पांच हजार परिवार परोक्ष–अपरोक्ष

रूप से उत्पादन क्षेत्र में जुड़ जाते है एवं अपनी आय बढ़ा सकते है यदि तालाब निर्माण का उदाहरण हो तो इसके माध्यम से से कृषि एवं सिंचाई, पशुओं के लिये चारा, मछली पालन, सिघांडे की खेती, मखाना व्यवसाय, पुष्प व्यवसाय, पुराईन पत्ता व्यवसाय, ग्रामीण पर्यटन, इत्यादि के माध्यम से ग्रामीण उद्यमिता को प्रोत्साहित कर विकास एवं रोजगार दोनों ही प्राप्त किया जा सकता है।

भारतीय बाजारों में चीन के उत्पादों की भरमार से रूग्ण होते भारतीय उद्यमों के साथ–साथ चीन के साथ भारी व्यापार घाटा भी देश की अर्थव्यवस्था के लिये अत्यन्त गंभीर चुनौती बनकर उभर रहा है। दूरसंचार के क्षेत्र में प्रथम पीढ़ी की दूरसंचार प्रौद्योगिकी के विकास के आगे भारत द्वारा कोई प्रयत्न नहीं करने से आज तीसरी व चौथी पीढ़ी की अर्थात् 3 जी व 4 जी दूरसंचार प्रौद्योगिकी के सारे साज सामान चीनी ही लगाये जा रहे है। यह हमारे सूचना व संचार तंत्र की सुरक्षा के लिये संकट का द्योतक है।

जो चीनी इलेक्ट्रॉनिक सामान हम बाजार से खरीदते हैं इससे चीन को 40 हजार करोड़ रूपये की आय टैक्स के रूप में मिलती है।

2001 तक भारत–चीन व्यापार बहुत सीमित था, लेकिन 2010 में भारत–चीन व्यापार 62 अरब डॉलर हो गया और अब 2011 में भारत चीन वार्षिक व्यापार 84 अरब डॉलर होने का अनुमान है। इसमें चीन को होने वाले भारत के निर्यात एक तिहाई है, और चीन से भारत में निर्यात दो तिहाई है। यानि की 62 अरब डॉलर के व्यापार में 2010 में हमने जो चीन से आयात किया वह माल 41.5 अरब डॉलर का था, हमने चीन में केवल 20 अरब डॉलर का माल बेचा। हम चीन को अधिकतर कच्चा माल बेचते है, जो बहुत कीमती है, जैसे 60 प्रतिशत उसमें खनिज लोहा है जो, 50–60 साल में चुक जायेगा। इसी तरह से जैसे कपास, प्राकृतिक रबर आदि जो हमारे उद्योगों के लिये भी उपलब्ध होने आवश्यक हैं। आज भारत दुनिया के 3–4 बड़े रबर उत्पादक देशों में से है और हम अपना रबर अनुदान देकर निर्यात करते हैं। परिणामतः चीन हम से अनुदान पर सस्ता प्राकृतिक रबर खरीदता है। ट्रक और बस का टायर बनाने में 80 से 85 प्रतिशत कच्चा माल रबर के रूप में लगता है। उसे भारत से सस्ता कच्चा रबर मिलने के कारण वह अपने टायर भारतीय टायर निर्माताओं की तुलना में 2000 से 3000

रूपये कम में हमारे यहाँ बेचता है। इसलिए भारतीय बस और ट्रक ऑपरेटर चीनी टायर प्राथमिकता से खरीदते हैं।

हम चीन का आर्थिक सशक्तिकरण बन्द करें चीन की आर्थिक व सामरिक बढ़त में आज एक बड़ा योगदान भारत सरकार व हम भारतीयों का भी है। हम भारत में चीनी वस्तुओं का बड़ी मात्रा में उपयोग जो करते हैं। आज चीन और भारत का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार लगभग 80 अरब डॉलर वार्षिक होने को है। इसमें 54 अरब डॉलर से अधिक के हमारे आयात होंगे।

यह 54 अरब डॉलर का माल लगभग ढाई लाख करोड़ रूपये के बराबर हो जाता है। इसके अतिरिक्त चीन के उत्पाद बड़ी मात्रा में देश में बिना बिल के भी मिलते हैं या फिर कम बिल के भी मिलते हैं। बिना बिल का जो माल अपने देश में आ रहा है उसे जोड़ लें तो चीन से कुल आयात तीन से साढ़े तीन लाख करोड़ के हों तो कोई आश्चर्य नहीं है अगर 3.5 लाख करोड़ रूपयों का चीनी माल अपने देश में बिक रहा है, तो इसका कम से कम 12 प्रतिशत टैक्स तो चीन की सरकार को मिल रहा होगा।

यदि हम 12 प्रतिशत टैक्स–जी.डीपी. का अनुपात मानें तब, 40 हजार करोड़ रूपये के बराबर चीन की सरकार को राजस्व की आय, हम भारतीय लोग, देश में चीनी माल खरीद कर प्रदान कर रहे हैं। चीन का माल पूरे देश में कौने–कौने में छा रहा है, चाहे 'टैक्सन' का केलकुलेटर हो या टी.सी.एल का टी.वी. हो, 'लिनोवा' का कम्प्यूटर हो, या अन्य ब्राण्डों के पेन व बच्चों के खिलौने हों, छोटे बल्ब हों, या बड़े विद्युत जनन संयंत्र (जेनरेटर) अथवा टेलीफोन एक्सचेन्ज, ये सब बड़ी मात्रा में अपने यहाँ चीन से आ रहे हैं।

इसलिए, आज आवश्यकता इस बात की है कि, हम चीन से आने वाले सभी उत्पादों का पूर्ण बहिष्कार करें। चीन के उत्पादों को चिन्हित करने में भी कठिनाई नहीं है क्योंकि उस पर ''मेड इन चाईना'' लिखा हुआ है। इसलिये यदि भारत में चीन निर्मित वस्तुओं का उपयोग बन्द होता है तो चीन को, भारत से जो 2.5 से 3 लाख करोड़ रूपये की विदेशी मुद्रा व चीन की सरकार को 30 से 40

हजार करोड़ रूपयों का कर राजस्व (टेक्स की आय) मिल रहा है, उसमें कमी आयेगी और देश का धन देश मे रहेगा।

यदि भारत सरकार पर चीन के विरूद्ध प्रभावी जन दबाव बनता है, तो सरकार चीन के देने वाली व्यापारिक सुविधाओं में कटौती के लिये बाध्य होगी और सीमा विवाद पर भी कठोर रूख अपनायेगी। इसके साथ ही यदि चीन द्वारा किये जा रहे मानवाधिकारों के हनन, तिब्बती जनता के दमन और संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रतिबन्धों की अवहेलना कर कई देशों में जन आन्दोलनों को कुचलने हेतु छोटे हथियारों की आपूर्त्ति और पर्यावरण को विनष्ट करने में अग्रणी होने के तथ्य इण्टरनेट आदि के माध्यम से विश्व जन समुदाय में प्रसारित होते है तो चीन निर्मित वस्तुओं का उपभोग सम्पूर्ण विश्व में घटेगा। चीन भारत के निर्यात बाजारों पर कब्जा करने में सफल नहीं हो सकेगा। इसके अतिरिक्त चीन की अर्थव्यवस्था निर्यातों पर अवलम्बित है। उसके गैर कृषि क्षेत्र का लगभग दो तिहाई उत्पादन निर्यात आधारित है।

यदि चीन के निर्यात घटते हैं और उसकी आर्थिक वृद्धि दर में कमी आती है, तो भारत की आर्थिक वृद्धि दो क्रमांक एक पर होगी। चीनी आर्थिक वृद्धि दर नियन्त्रण में रहेगी तो उसकी सामरिक बढ़त व महत्वाकांक्षाएँ भी सीमा मे रहेंगी। देश, समाज व विश्व–मानवता के प्रति संवेदनशील जन–मानस को चीन की बढ़त को नियंत्रित रखने हेतु सक्रियता दिखलानी चाहिये। विश्व–मानवता के हितार्थ भारत को अपने वैश्विक दायित्व निर्वहन हेतु आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक क्षेत्रों में विश्व नेतृत्व के अपने वैश्विक दायित्व के प्रति सजगता बढ़ानी होगी।

1600 मल्टी नेशनल कंपनी भारत के गांव–गांव तक पहुंच गई है इससे लघु उद्योग के साथ–साथ गांव की अर्थव्यवस्था भी खतरे में पड़ गई है। अभी भी सरकार विदेशी निवेश और विदेशी कर्ज लेकर ही विकास की बात कर रही है इसके कारण ही हमारे बाजारो पर विदेशी कंपनियों का कब्जा होते जा रहा है।

भारत में ग्राम आधारित अर्थव्यवस्था थी, उसका मुख्य आधार कृषि था, कृषि और किसान के कारण, भारत कृषि प्रधान देश बना और भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता था। भारत युवाओं का देश बनने जा रहा है, लेकिन युवा के

लिए कोई विशेष नीति नहीं बनाई गई। शिक्षा का अब व्यवसायीकरण हो गया। पैसे वाले ही अब उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकते है। लघु कृषि आधारित एवं स्वदेशी उद्योग बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के कारण बंद हो रहे है। जिसके कारण बेरोजगारी बढ़ रही है एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारत के युवाओं का शोषण कर रही है। एफ. डी.आई. नीति देश के छोटे दुकानदार एवं उद्योगों के लिए बर्बादी का कारण बनेगीं।

अतः ग्रामीणों की विभिन्न समस्याओं को दूर करने के लिये जिस प्रकार स्वरोजगार महत्वपूर्ण होता जा रहा है। उद्यमिता विकास का महत्व उतना ही बढ़ता जा रहा है। आज भी लघु एवं कुटीर उद्योगों का महत्व बना हुआ है। ऐसे में उद्यामिता विकास ही आर्थिक विकास की मुख्य धुरी है। और उद्यामिता विकास से ही देश का आर्थिक विकास हो सकेगा ।

श्रीमति निधि विश्वकर्मा
जबलपुर मध्यप्रदेश

शासकीय योजनाओ से महिलाओं का सशक्तिकरण

महिला सशक्तिकरण के लिये राज्य के पंचायत अधिनियम में 50 प्रतिशत स्थान महिला वर्ग के लिये अनिवार्य रूप से आरक्षित किये जाने की व्यवस्था की गयी हैं। प्रत्येक 5 वर्ष पश्चात् होने वाले आम निर्वाचन में इन पदों को चकानुकम में आरक्षित करने का प्रावधान किया गया। चतुर्थ आम स्थानीय निर्वाचन जो फरवरी–मार्च 2010 में सम्पन्न हुए, जिसमें 50 जिला पंचायत अध्यक्षों के पदो के विरूद्ध 30 महिला प्रतिनिधि, जिला पंचायत सदस्यों में 846 में 437 महिला प्रतिनिधि, कुल 313 जनपद अध्यक्ष पदो के विरूद्ध 170 महिला अध्यक्ष, जनपद सदस्यों के 6827 पदों के विरूद्ध 3527 महिला प्रतिनिधि, कुल 23012 ग्राम पंचायत सरपंचों के पदो के विरूद्ध 11606 महिला सरपंच प्रतिनिधि एवं 366233 पंच पदो के विरूद्ध 188541 महिला पंच निर्वाचित होकर आए हैं। इस प्रकार कुल 50 प्रतिशत महिलाओं हेतु आरक्षित पदो के विरूद्ध लगभग 52 प्रतिशत महिलाओ हेतु आरक्षित पदो के विरूद्ध लगभग 52 प्रतिशत विभिन्न पंचायत पदो के विरूद्ध निर्वाचित होकर आयी हैं जो महिलाओं की जागरूगता और सशक्तिकरण की एक मिसाल है। इन निर्वाचित महिला पदाधिकारियों को अपने दायित्वों के प्रति सजग करने हेतु प्रशिक्षण कराये जाने हैं, जिससे उनकी मानसिक सोच का दायरा बढ़े एवं उनकी कार्यक्षमता का विकास हो।

ग्राम सभा की बैठकों में महिलाओं की पर्याप्त उपस्थिति से महिलाओं के विकास संबंधी मुद्दों पर विचार–विमर्श होता है। घरेलू हिंसा रोकने के लिये ऊषाकिरण योजना, गांव की बेटी और लाड़ली लक्ष्मी योजना, मुख्यमंत्री कन्यादान योजना, शासकीय नौकरी में 30 प्रतिशत पद महिलाओं के लिए आरक्षित किए गए। नगरीय निकायों में सभी स्तर के पद पर महिलाओं के लिये 50 प्रतिशत पद आरक्षित किए गए हैं। भ्रूण परीक्षण पर सख्ती से रोक लगायी जाकर महिलाओं के वर्चस्व को स्वीकार किया जा रहा हैं।

इस समय नारी संक्रमण फाल से गुजर रही है। उसका एक पांव घर के बाहर निकला हुआ है लेकिन दूसरा अभी भी रसोई की चौंखट के अंदर है। शिक्षा ने उसके क्षितिज को विस्तार दिया पर घर परिवार की लक्ष्मण रेखा उसे अब भी घेरे हुए है। अब भी पिता की दृष्टि मे दान और पति दृष्टि में भोज की वस्तु है । आज नारी स्वतंत्रता आंदोलन का जो नारा दिया जा रहा है वह नारी स्वछंदता की वकालत ज्यादा कर रहा है जिसके कारण नारी की गरिमा खण्डित हो रही है।

सम्पूर्ण भारतीय समाज में लगभग आधी आबादी सित्रियों की है किंतु स्त्रियों के पास वास्तविक सम्मान नहीं है आदिकाल से लेकर आज तक पुरूष ने स्त्री पर दासत्व ही लादा है वर्तमान भारतीय समाज में स्त्री के प्रति हिन्दू दर्शन के चेहरे मानदंडो की स्थिति आज भी परिलक्षित होती है।

हमारे देश भारत में एक तरफ मंदिरों में महिलाओं को देवी काली, दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती मानकर उनकी पूजा करते है। दूसरी ओर महिलाओं को जिंदा रहने के अवसर से भी वंचित किया जा रहा है। देश में कन्या भ्रूण हत्या की घटना बढ़ती ही जा रही है। महिला एवं पुरूष की शारीरिक संरचना भले ही एक न हो लेकिन परिवार एवं समाज में उसे कम नही आंका जा सकता है। प्रजनन भूमिका की विशेष जिम्मेदारी प्रकृति ने महिलाओं का सौपी है। कई वर्ष से कन्या भ्रूण हत्या के कारण देश मे जन्म के समय लिंग अनुपात में गिरावट तेजी से हो रही है।

इसमें कोई दो मत नहीं है कि स्वतंत्रता के बाद नारी की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन आए है तथा उसकी स्वतंत्रता और अधिकारों के लिये जहां संविधान व्यवस्था की गयी है वहीं समय समय पर नियम और कानून तथा योजनाऐं भी बनायी गयी है, लेकिन यह भी एक सच्चाई है कि नियम और कानून तथा योजनाऐं मुख्यतः महिलाओं की संख्या आज भी द्वितीय श्रेणी की है जो पढी लिखी और नौकरी पेश महिलाऐं है उनका दोहरा शोषण होता है उन पर घर की भी जिम्मेदारी है ।

आज जरूरत है तो उस शिक्षा की योजना की जो प्रत्येक गांवों में पहुंचकर नारियों को अपनी स्थिति अपने अधिकार एवं कर्तव्यों का पूर्ण ज्ञान करा सके समाज के उदार दृष्टिकोण की जिससे वह अपने जीवन को सही रूप से

चरितार्थ कर सकने में सक्षम हो सके पुरूष हृदय में नारी के प्रति उसे आगे बढाने में सहयोग देने की।

आज हमारा देश भारत भी नारी में वही सात्विक भावना तेजस्विता एवं कर्तव्यनिष्ठा का एक साथ दर्शन करना चाहता है जिससे भारतीय संस्कृति का उज्जवल पृष्ठ सहज आंका जा सके।

आज विश्व के हर देश में सभी जगह महिलाओं के समुचित विकास एवं सशक्तीकरण के लिए अनुकूल वातावरण बनता जा रहा है । इसी आधार पर लोग 21 वीं सदी को महिलाओं की सदी की संबा से विभूषित करने लगे है।

अब महिलाऐं हर क्षेत्र में पुरूषों के साथ कदम से कदम मिलाकर अपनी अंतर्निहित क्षमता के बल पर आत्म विश्वास और साहस के साथ पुरूष प्रधान समाज में अपने अस्तित्व का एहसास दिलाने का सफल प्रयास कर रही है। इसके साथ ही महिलाओं की आर्थिक सामाजिक और राजनैतिक स्थिति को सुदृढ बनाने के लिये आज कुछ प्रयास हर जगह और हर स्तर पर किऐ जा रहे है।

प्रदेश में पंचायत संस्थाओं और नगरीय निकायों में 50 प्रतिशत वन समितियों में एक तिहाई आरक्षण उपलब्ध कराया है महिलाओं की समृद्धि और विकास के लिये विभागीय बजट में अलग से प्रावधान सभी जिलों में महिला डेस्क कार्यपालिक बल में उप निरीक्षक की भर्ती के लिये 30 प्रतिशत और आरक्षक की भर्ती के लिये 10 प्रतिशत आरक्षण रानी दुर्गावती बटालियन के लिये 329 पदों का सृजन महिलाओं में रचनात्मकता को विकसित करने के लिये 02 लाख रूपये का रानी दुर्गावती पुस्कार, समाज सेवा और वीरता के क्षेत्र में एक एक लाख रूपये राजमाता विजयाराजे सिंधिया एवं रानी अबंतीबाई पुरस्कार और खेल में महिलाओं को प्रोत्साहन देने के लिये राज्य महिला अकादमी की ग्वालियर म.प्र. में स्थापना यह दर्शाती है कि महिलाओं के विकास से जुडा हर मुद्दा सरकार की प्राथमिकता मे है वन समितियों की कार्य कारिणी में 33 प्रतिशत महिलाओं की सदस्यता की गई है।

मध्यप्रदेश में महिला सशक्तिकरण के नये आयाम :—मध्यप्रदेश में महिला सशक्तिकरण को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए महिलाओं को सामाजिक आर्थिक और राजनैतिक रूप से सशक्त बनाने की पहल की गयी है प्रदेश में महिलाओं और बालिकाओं के लिए कई नये कार्यक्रमों, योजनाओं और नवाचारों को अपनाया गया है इन नवाचारों को राष्ट्रीय स्तर पर भी सराहा गया है अब मध्यप्रदेश की पहचान ऐसे प्रदेश के रूप में बनी है जहां बेटियों को बोझ नहीं बल्कि वरदान माना जाता है पहली बार प्रदेश सरकार ने स्त्री जीवन के हर पड़ाव पर मददगार योजनाऐं बनायी है ।

महिलाओं के विकास हेतु संचालित सरकारी योजनाऐं

लाड़ली लक्ष्मी योजना :— मध्यप्रदेश सरकार ने बेटी के जन्म को बोझ समझने की धारणा को खुशियां मनाने के अवसर में बदल दिया है लाड़ली लक्ष्मी योजना से मध्यप्रदेश में बेटी को जन्म से ही लखपति होने का वरदान मिला है। बीते तीन वर्ष में साढ़े सात लाख बालिकाएं लाड़ली लक्ष्मी बन चुकी है। इस लाड़ली लक्ष्मी को योजना में बढी हुई रकम जो एक लाख रूपये से भी अधिक हो दी जाऐगी जो उसके विवाह के काम आएगी।

मनरेगा से महिलाओं का सशक्तीकरण तेजी से हुआ है :—

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना से महिलाओं का सशक्तीकरण तेजी से हुआ है जनपद पंचायत नरसिंहपुर में वर्ष 2008—09 में 67802 महिलाओं ने कार्य किया जबकि वर्ष 2009—10 के अंत तक यह बढ़कर 81696 हो गयी इस आधार पर मनरेगा के आने से महिलाओं का आर्थिक विकास तेजी से हुआ है । नरसिंहपुर में वर्ष 2009—10 में 518998 महिलाओं ने कार्य किया जबकि वर्ष 2010—11 के अंत तक यह बढकर 654894 हो गयी।

रोजगार और आत्म निर्भरता के की दिशा में कार्य :—राज्य सरकार ने महिलाओं को रोजगार के अवसर तथा आश्रय देकर आत्म निर्भर बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण निर्णय लिये है और उन्हें अमली जामा भी पहनाया है।

प्रदेश में पंचायत संस्थाओं और नगरीय निकायों में 50 प्रतिशत वन समितियों में एक तिहाई आरक्षण उपलब्ध कराया है महिलाओं की समृद्धि और विकास के लिये

विभागीय बजट में अलग से प्रावधान सभी जिलों में महिला डेस्क कार्यपालिक बल में उप निरीक्षक की भर्ती के लिये 30 प्रतिशत और आरक्षक की भर्ती के लिये 10 प्रतिशत आरक्षण रानी दुर्गावती बटालियन के लिये 329 पदों का सृजन महिलाओं में रचनात्मकता को विकसित करने के लिये 02 लाख रूपये का रानी दुर्गावती पुस्कार, समाज सेवा और वीरता के क्षेत्र में एक एक लाख रूपये राजमाता विजयाराजे सिंधिया एवं रानी अवंतीबाई पुरस्कार और खेल में महिलाओं को प्रोत्साहन देने के लिये राज्य महिला अकादमी की ग्वालियर म.प्र. में स्थापना यह दर्शाती है कि महिलाओं के विकास से जुडा हर मुद्दा सरकार की प्राथमिकता मै है वन समितियों की कार्य कारिणी में 33 प्रतिशत महिलाओं की सदस्यता की गई है।

जेण्डर (बजट) :– मध्यप्रदेश में महिला सशक्तिकरण के लिये किए गये एक प्रभावी उपाय के रूप में वर्ष 07–08 से जेण्डर बजट व्यवस्था लागू की गई है । वर्ष 2011 – 12 के बजट अनुमानों के साथ जेण्डर बजट एक पृथक खण्ड के रूप में प्रस्तुत किया गया है ।

इससे राज्य सरकार द्वारा महिलाओं की शिक्षा स्वास्थ तथा आर्थिक उन्नति के लिये संचालित कार्यक्रमों और सरकार की नीतियों एवं महिलाओं के विकास के लिये वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराने में सामंजस्य स्थापित हुआ है।

प्रथम श्रेणी में ऐसे कार्यक्रम है जिनमें शत् प्रतिशत बजट महिलाओं बालिकाओं के लिये है। द्वितीय श्रेणी में ऐसे कार्यक्रम है जिनमे कुल प्रावधान की कम से कम 30 प्रतिशत प्रावधान महिलाओं एवं बालिकाओं के लिये हो जेण्डर बजट व्यवस्था अभी तक 22 विभागों में लागू कर दी गयी है।

मध्यप्रदेश में महिलाओं के विकास मे विभिन्न योजनाओं एवं संस्थाओं का योगदान (उपलब्धियां)

महिला प्रतिनिधित्व :—

1. जनवरी 2010 में सम्पन्न त्रि स्तरीय पंचयतों के प्रतिनिधियों के निर्वाचन में 50 प्रतिशत महिलाओं हेतु आरक्षित किये गये।
2. जिला पंचायत अध्यक्ष के कुल 50 पदों में से 30 पदों पर महिलाऐं निर्वाचित हुयीं जबकि केवल 25 पद ही महिलाओं हेतु आरक्षित थे।
3. गांव की बेटी योजना का लाभ दिया गया जो 24.25 प्रतिशत अधिक है।
4. संस्थागत प्रसवों की संख्या 26 प्रतिशत से बढकर 77 प्रतिशत हुई।
5. जननी सुरक्षा योजना अंतर्गत लगभग 34 लाख महिलाओं को वित्तीय सहायता प्रदान की गयी।
6. गर्भवती महिलाओं के लिये वर्तमान में 10 जिलों में काल सेंटर क्रियाशील किये गये है।
7. कन्या जन्म को संरक्षित करने के लिये राज्य स्तरीय बिटिया केम्पेन प्रारंभ की गयी है।
8. 45971 ग्रामों में आशा का चयन कर प्रशिक्षण दिया गया।

ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

डॉ.संजीव सिंह एवं विमल कुमार कौशले
भोज विश्वविधालय म.प्र

युवा शिक्षा रोजगार और चुनौतियां

भारत सुपर पॉवर बनने की ओर बढ़ रहा है। अर्थव्यवस्था की तेज रफतार से यह संभव हुआ है। एक अमेरिकी ग्लोबल गर्वनेस रिपोर्ट ने हाल ही में कहा है कि आने वाले सालों में भारत, अमेरिका और चीन के बाद दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी ताकत एव सबसे शक्तिशाली राष्ट्र होगा। इसका मुख्य कारण आज हमारे देश की बहुसंख्य आबादी युवा है और आने वाले 20–25 वर्षो में भारत की 70 प्रतिशत आबादी युवा होगी।

युवा अपने आप उत्पादक नहीं हो सकते, उन्हें उत्पादक बनाना पड़ता है। अगर भारत को सुपर पॉवर बनाना है और 25 साल बाद देश की अधिकांश युवा आबादी को एक बड़ी उत्पादक शक्ति में तब्दील करना होगा। युवा उत्पादक तभी होंगे, जब उनके पास अच्छी शिक्षा और उसके योग्यता के आधार पर रोजगार होगा। 25 साल बाद चूंकि बहुसंख्य आबादी युवा होगी, इसलिये सरकार और समाज पर स्वास्थ्य संबंधी जिम्मेदारियों का बोझ कम होगा। 25 साल बाद 70 फीसदी आबादी युवा होगी और युवा स्वास्थ्य और ऊर्जा से भरपूर होते है। अर्थव्यवस्था के विकास में इस स्थिति का लाभ उठाया जा सकता है।

भारत युवाओं का देश है और आने वाला वक्त युवा हिन्दुस्तानियों का होगा। पिछले दशक में सूचना टेक्नोलॉजी कम्प्यूटर विज्ञान तथा अभियांत्रिकी क्षेत्र में भारत में सौ प्रतिशत की वृद्धि से दुनिया भारत की ओर देख रही है। भारत सूचना प्रौद्योगिकी रसायन–विज्ञान, फार्मेसी, माइक्रोबायलॉजी .प्रबंधन के क्षेत्र में एक महाशक्ति के रूप में नम्बर एक देश बनने की राह पर अग्रसर है। अगला दशक भारत का होगा। दुनिया मानने लगी है कि हम दुनिया की टॉप अर्थव्यवस्था में होंगे। भारत को सुपर पॉवर बनाने में इसके बड़े और लगातार बढ़ते उपभोक्ता बाजार की बहुत बड़ी भूमिका है। तेज विकास दर, शहरीकरण और युवा कामकाजी लोगों के खर्च करने की बढ़ती ताकत न भारत को विशाल उपभोक्ता बाजार में बदल दिया है। 2025 में भारत में घरेलू खपत चार गुना बढ़ जाएगी

और यह दुनिया का पांचवां सबसे बड़ा बाजार बन जाएगा। कुल खपत में शहरी भारत की हिस्सेदारी 68 और ग्रामीण भारत की 32 फीसदी होगी। 2025 में भारत दुनिया का पांचवा सबसे बड़ा कंज्यूमर मार्केट बन जाएगा।

देश में 35 वर्ष तक की आयु वर्ग वाली 60 प्रतिशत जनसंख्या विश्व की सबसे बड़ी युवा शक्ति है, इस महान देश को वैभव के शिखर पर पहुंचाने के लिए यह हमारा कर्तव्य है कि युवा वर्ग को देश की समृद्धि परम्पराओं से अवगत कराते हुये देश भक्ति की भावना से ओत प्रोत करते हुये मार्गदर्शन करें। देश की मातृभाषा हिन्दी होने के बाद भी आज का युवा इससे दूरी बनाता जा रहा है। प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा की पढ़ाई तक अंग्रेजी भाषा का एकाधिकार हो चुका है। खासतौर पर प्रोफेशनल कोर्स जैसे पाठ्यक्रम पूरी तरह से अंग्रेजी भाषा में पढ़ाया जा रहा है। मुद्दा यह है कि ऐसा सिर्फ भारत में ही क्यों हो रहा है। युवाओं की माने तो इन्हें अंग्रेजी के बिना जीवन अधूरा सा लगता है। यहा सवाल यह उठता है कि जब रूस, जापान, चीन में मेडिकल, इंजीनियर व एग्रीकल्चर की पढ़ाई उनके देश की मातृभाषा में हो रही है तो क्या हमारे देश में संभव क्यों नहीं है?

हमारी शिक्षा प्रणाली हर साल करीब साढ़े छह लाख स्नातक इंजीनियर पैदा कर रही हैं। वहीं देश में प्रतिवर्ष इंजीनियर कॉलेजों में भी 30 प्रतिशत की दर से इजाफा हो रहा है। ऐसे में गुणवत्ता हाशिये पर चली गई है। जाहिर है छह लाख की बड़ी खेप देश के कॉर्पोरेट भू–भाग पर खपाना नामुमकिन है। आकड़ों की रोशनी में बात करें तो अजीब तस्वीर सामने आती है। अमेरिका में हर साल 70,000 इंजीनियर शिक्षा पूरी करते हैं और हमारे वहां अकेले आंध्रप्रदेश में हर साल तीन लाख इंजीनियरों की खेप निकल आती हैं आंध्रप्रदेश में करीब 540 इंजीनियरिंग कॉलेज हैं। वहीं यूरोप महाद्वीप में साल भर में एक लाख इंजीनियर निकलते हैं। सीमित संख्या में आने वाले इंजीनियरों की दक्षता का स्तर काफी ऊंचा होता है और हर वर्ष कॉर्पोरेट सेक्टर में इनकी मांग बनी रहती है।

नैसकॉम का सर्वे बताता है कि देश में मात्र 25 फीसद इंजीनियरों को ही नौकरी मिल पाती है। इसमें भी सबसे ज्यादा मांग सूचना प्रोद्योगिकी की है। सर्वे यह भी बताता है कि इसमें से केवल 15 फीसद द्वितीय पंक्ति में काम करने लायक होते हैं। फिलहाल आईटी क्षेत्र में करीब 25 लाख कर्मी कार्यरत हैं। हम हर साल विश्व में सबसे ज्यादा इंजीनियर देते हैं लेकिन गुणवत्ता के पैमाने पर वे खरे नहीं उतरते। इंजीनियरिंग में उच्च शिक्षा से हमारे देश के युवा किनारा किए हुए है। हमारे देश में इंजीनियर स्नातकोत्तर से ज्यादा पढ़ाई नहीं करते। देश में

पीएचडी करने वाले इंजीनियरों की तादाद 0.66 प्रतिशत है। वहीं जर्मनी, ब्रिटेन और चीन में यह प्रतिशत 7 से 9 की बीच है।

आज विदेशी कंपनियां भारत के इंजिनियर, डाक्टर को करोड़ो का पैकेज दे रही, भारत के पढ़े लिखे युवा अमेरिका, आस्ट्रेलिया, इंग्लैंड, कैनेडा आदि देशों में छाएं हुये है। संपूर्ण विश्व में शिक्षा क्षेत्र में भारत को अग्रणी माना जाता है। आज प्रबंधन शास्त्र पढ़ाने के लिये गीता की सहायता ली जा रहीं है, आई आई एम बंगलूर के फैकल्टी डीन श्री महादेवन शास्त्रीय संस्कृत वचनों को आधार बनाकर प्रबंधन शास्त्र पढ़ाते है। महर्षि महेश योगी के विश्वभर में फैले प्रबंधन संस्थानों में पाठ्यक्रमों का निर्माण वेदो के आधार पर किया गया है, लेकिन भारत में विदेशी विश्वविद्यालय आने से विदेशी विश्वविद्यालय के द्वारा भारत में हर साल करोड़ो रूपये फीस के रूप में विदेशों में चला जायेगा, साथ ही कालेजो के पाठ्यक्रमों पर भारत सरकार का कोई नियंत्रण नहीं होगा इस वजह से सांस्कृतिक मूल्यों में तेजी से गिरावट की बडी आशंका है। प्रबंध संस्थान कोलकाता के छात्र 1.6 करोड़ एवं बंगलूर के छात्र को 1.14 करोड़ रूपये का पैकेज ग्लोबल इंवेस्टमेंट बैंक दे रही है। ये छात्रो ने भारत में ही शिक्षा प्राप्त की है।

लेकिन बिना स्वदेशी के देश का विकास संभव नहीं भारत की सबसे बड़ी शक्ति इस देश की युवा शक्ति है लेकिन इस युवा शक्ति को सही दिशा की आवश्यकता होगी । तभी भारत वैभवशाली हो सकेगा। युवा वर्ग अपनी शक्ति, क्षमता, योग्यता एवं विवेक का उपयोग कर स्वामी विवेकानंद के पद चिन्हों पर चलकर समाज एवं देशहित में अपना योगदान दे जिससे राष्ट्र निर्माण में युवा शक्ति का उपयोग हो। आज युवा के सम्मुख अनेक समस्या है चहे वह उच्च शिक्षा कि हो या रोजगार की गरीबी के चलते अनेक चुनौतियो से आज का युवा लड़ रहा है। लेकिन समस्त चुनौतियो को स्वीकार कर राष्ट्र के लिए राष्ट्रवादी युवा शक्ति भारत को आर्थिक महा शक्ति बनाएंगे

Dr.Narendra Kumar Kosti
Asst.Pro.Govt.PG College Barela JBP.MP
Balram Sen .Asst.Pro.(Guest).JBP.MP.

Demography and its Effects

Abstract :- *An important of demographical study is the labor force. Study is made of economically active population both employed and unemployed, population that is not economically active such as home makers, students and income recipients, etc., time reference period, gainful worker concept and labour force concept and the status of labour.*

The sources of data for the analysis of economically active population are population census and special sample surveys.

The basic measures of economic activity or labour force analysis include the crude labour force participation rate, the crude activity rate, the general labour force participation rate, the Age-sex specific labour force participation rates, the standardized labour force participation rates, etc.

Introduction: - The term demography has been derived from two Greek words meaning Demos or the people and to draw or write. Thus literally speaking, demography is concerned about writings concerning the people. The following definitions of demography will help in the understanding of its meaning:

1. **Philip M. House and Duncan: -** "Demography is the scientific study of the size, territorial distribution and composition of population, changes therein, and the components of such changes, which may be identified as nasality, mortality, territorial movement (migration) and social mobility (change of status)."

This definition of demography is not sufficiently wide. In fact the field of demography changes according to time, place and circumstances. This point has been particularly raised by Warren S.Thompson and David T.Lewis: in their book Population problems (1965).

2. Donald J.Bogue :- "Demography is the mathematical study of size, composition and special distribution of human population and of changes overtime in these aspects through the operation of the five processes of fertility, mortality, marriage, migration and social mobility.

Although it maintains a continuous descriptive and comparative analysis of trends, in each of these processes and in their net result, its long-run goal is to developed a body of theory to explain the events that it charts compares.

3. Spengler, Vance, Ryder, Lorimar and Moore :- "Modern demography is closely related to economics, sociology, psychology, geography, mathematics, genetics, ecology. It is thus a multi-science discipline.

This has been also accepted by UNO in its publication Determinants and Consequences of Population Trends. This definition of demography may be considered as representing the present state of affairs.

The term demography was first used by Gaillard in 1855. However, some scholars maintain that the beginning of demography should be traced from John Grant's essay Natural and political observation-made upon the Pills of Mortality, in 1662.

John Graunt defined techniques of demographic analysis. He presented what is known as analysis approach. In contrast to it Robert Malthus presented what is known as problem approach.

In the words of S.N. Agarwala, "Demography is said to have its beginning in 1662 when John Graunt published in London an article entitled, Natural and Political Observations made upon the Bills of Mortality.. John Graunt was the exponent of the 'analysis-approach'

Thomas Robert Malthus can be said to be the leader of the 'problem-approach' in demography."

Generally speaking the history of demography may be traced since about three centuries back. However, quantitatively as well as quantitatively. Its development may be observed only in the 20th century. Today, demography is being considered as an independent branch of knowledge.

As Peteer R.cox has said, "It is sometimes argued that certain branches of population analysis should be distinguished from other by a separate title. In this connection the word 'demography' has occasionally been suggested as an indicator of the more learned branches of the subject; but this has not come into general use.

Rather more commonly, the expression 'population studies' is used to indicate the simpler and more descriptive demographic work. There is, however, no sharp dividing line between the various parts of demography and these expressions are used. If at all, without much consistency."

In the beginning, demography was concerned only with the enumeration of population. Gradually, it began to study population from empirical, statistical and mathematical viewpoints.

Today it studies the size, the composition and distribution of population. The size includes at a place in different periods. The composition of population includes measurable characteristics of population such as age, sex, marital stratus, education, religion, caste, health, etc. These characteristics of population organization are always changing.

Distribution of population may be studied according to communities and religious groups or according to fields of population.

Demography studies the patterns and causes of the change in the size, composition and distribution of population. It studies the influence of these changes upon different aspects of society. It studies the birth, mortality, marriage, migration and social mobility, quantitatively.

Scope of Social Demography .

The scope of social demography has been classified into two sections: Macro-demography and micro-demography. While the former includes studies of system, cultures and societies on a large scale, the later studies the individual and the family as a unit of society. Thus the later study has smaller units and it is conducted intensively.

In the words of Donald J.Bogue, “It is the study of the growth, distribution and redistribution of the population within a community, state, economic area or other local. This includes both numerical and compositional aspects and is performed by using meaningful sub-division of community or local areas.

However, Most of the population studies are conducted in the field known as macro-demography. The two fields help each other. For example, death rate is studied both from the macro and micro standpoint. Similar is the case concerning birth rate, fertility, migration, etc.

The field of demography includes the subject which are discussed in world population conferences since 1954. The two conference of 1954 and 1965 discussed the subject: fertility, death rate, migration, genetic composition, future probabilities, population and means of subsistence, techniques of population measurement and training of the demography.

Other objects included in the scope of demography are : distribution of population, qualitative aspect of demographic data, family planning, growth of population, demographic aspects of supply of labour, demographic aspect of education, demographic aspect of housing and the demographic aspect of saving and investment. The scope of demography has further increased after 1965.

The computer techniques are the contribution of this of this decade. In the words of Peter R. Cox: “Computer techniques, using stimulation, have been developed in order that stochastic variability can be provided for in various stages. This is a rapidly growing rapidly growing area of demography, and prospects for future progress are almost as important as the work already done.”

The different aspects of the study of population or social demography may be briefly described as follows:

1. Size of Population. Demography is fundamentally the study of population. Population is primarily studied in the form of its size. In India census studies of population are undertaken after every ten years.

The demographers in different countries find out the size of the population of their countries. These data are further utilized by agencies of United Nations to arrive at the size of world population. The Population Division of United Nations situated at New York studies the world population and working papers are published in this respect from time to time.

Some important data are also provided by Food and Agricultural Organization (FAO) from time to time. The Department of Economics and Social Affairs United Nations also publishes useful data from time to time.

2. Organization of Population. Population organization includes the measurable characteristics of population of a community in a country during a particular period. These characteristics include age, sex, marital status, education level, religion, caste or race and health, etc. These characteristics are generally changing.

3. Population Distribution. The distribution of population is generally studied according to geographic areas. The measures of population distribution include percentage of population and density of population.

The factors affecting population distribution are studied as geographic, social, economic and demographic. Population distribution is also studied by classification of residence. This includes rural and urban residence. It also includes the study of urban growth or urbanization. The measures of urbanization include percentage of population in urban areas, ratio of urbanaral population, size and residence of the medium inhabitant, tempo of urbanization, etc.

Study is conducted concerning the levels and trends of world urbanization and factors affecting urban-rural population distribution. Besides, urbanization is studied in almost every country by the government agencies.

4. Fertility. An important field of demographical study is fertility. It is expressed in terms of birth rate, birth order, family size, sterility and contraception, etc. The influence of biological limits and social norms upon fertility is important. The demography studies the reproductive span and theoretical maximum fertility.

He also studies psychological, social and cultural factors affecting fertility. The psychological factors affecting fertility include Adolescent Sterility, Post-Partum Sterility and Average Interval between Successive Birth, Re-productive Wastage, etc.

The social and cultural factors affecting fertility include: Intermediate Variables, Intercourse Variables, Voluntary Abstinence, Foetal Mortality from Voluntary Causes (Included Abortions), Use or Non-use of Contraceptives including Sterilization, Norms about Intermediate Variables and Family Size, etc.

Beside, Basic measures of fertility and methods of conception control are also studied. The basic measures of fertility are measures based upon performance during one year, such as The Crude Birth Rate. The General Fertility Rate, Age Specific Fertility Rate, Total Fertility Rate, Gross Reproduction Rate, Sex-Age adjusted Birth Rate. Measures based on Sex-Age distribution, Measures based on children ever born.

The methods of conception control are both male and female. The male methods of conception control include coitus interrupts. Condom. Male sterilization or vasectomy, female methods of conception control. Include the rhythm method the calendar method, the temperature method. Mechaniception, the intra-uterine device (IUD), oral contraception, female sterilization. Advances in contraceptive technology, induced abortion, etc.

On international level demography studies levels and trends of fertility in the world, factors associated with long term decline of fertility in the developed countries. Factors related to high fertility in the developing countries, differential fertility, etc.

5. Mortality. An important field of demography study is mortality. It is measured by crude rate death infant mortality rate. It includes the study of sex and Age patterns of mortality, cause of death, levels and trends of mortality in a country and in the world and mortality differentials such as urban-rural and occupational, etc.

6. Migration. Migration has been classified as immigration and emigration. In-migration and out-migration. The demographer studies general trend of migration, migratory movement, place and origin of destination, gross and net migration interval, migration streams, etc.

The Sources of data concerning migration include census surveys and population registers. The methods of measuring internal migration are direct as well as indirect. The direct measures include data concerning place of birth, duration of residence, place of last residence, etc.

The indirect measures include data concerning vital statistics, survival ratio and migration. Demography studies differential migration by age, sex, marital status and educational attainments. It studies both national as well as international migration and also migratory movement.

Labour Force. An important of demographical study is the labor force. Study is made of economically active population both employed and unemployed, population that is not economically active such as home makers, students and income recipients, etc., time reference period, gainful worker concept and labor force concept and the status of labor.

The sources of data for the analysis of economically active population are population census and special sample surveys.

The basic measures of economic activity or labor force analysis include the crude labor force participation rate, the crude activity rate, the general labour force participation rate, the Age-sexspecific labour force participation rates, the standardized labour force participation rates, etc.

The levels of labour force participtionrates are studied both among males and females. Beside national and international studies concerning employment, unemployment, underdevelopment rural unemployment, educated unemployment, etc., are undertaken by demography.

Social Demography. Social demography includes the study of demographical aspect of social institution particularly family and marriage.

The study of marriage includes marital status, mean age at marriage by census data, time trend in the age at marriage by census data, time trend in the age at marriage frequencies by sex, marriage age by status, marriage age by zones, marriage age by religious groups, marriage age by residence, differences in marriage age by educational level. etc.

It also studies the extent of widowhood, method of computation of widowhood age, trend in the mean widowhood age, widowhood age by religion mean duration of fertile union method of computation, etc.

9. Population Policy. The development of a country today vary much depends upon population policy . Population growth and socio-economic development are intimately related.

The study of population policy includes: Philosophy and guiding principles, the magnitude of the task, organizational structure, services and supplies, education and motivation, family planning progress during five year plans, etc.

Population policies in different countries are developed according to local requirements. Besides, suggestions are made by world organization in this connection.

The above discussion of the scope of the scope of demography or population studies includes only the major and established areas. The scope of demography has been constantly increasing, particularly in the last decade. Therefore, new areas of research and studies are being explored. Thus the scope is being constantly widened.

Value on International Scene

The international agencies of UNO therefore very much depend upon the demographical data gathers by the Population Division of UNO. This data points out problems of undeveloped and underdeveloped countries. Since today it has been widely realized that peace and prosperity anywhere required peace and prosperity everywhere. Therefore the developed nations have to constantly help the undeveloped and underdeveloped nations to meet their needs.

Plans at UNO must be based upon estimates of world population. And in fact this is actually being done. For example, the 1931 State of the World Population Report from the United National Fund for Population Activates (UNEPA) says that if the division of the world’s wealth remains the same as it is today the developing world will end in having 90 percent of the population while the developed countries control 80 percent of the wealth.

India today possesses about 2.4 per cent of the today land area of the world but she has to support about 16 per cent of the world population. At the beginning of this century India’s population was 236 million and according to 1991 census, the population of India is 844 million.

A Study of growth rate of India's population falls into four phases :
1891-1921: Stagnant population
1921-1951: Steady growth
1951-1981: Rapid high growth
1981-2001: **High growth with definite signs of slowing down**

During the first phase of 30 year (1891 to 1921), the population of India grew from236 million in 1891 to 251 million in 1921 i.e., just by 15 million. The compound annual growth rate was negligible i.e., 0.19 per cent per annum for the period. The growth of population was help in check by the prevalence of a high death rate against a high birth rate.

Birth and death rates were more or less equal during this period. India was in the first stage of demographic transition in this period marked by stagnant population.

The demographic data particularly include the following :-

1. **Birth rate.** Birth rate include live births. Live births the complete expulsion or extraction from its mother of a product of conception, irrespective of the duration of pregnancy, which, after such separation, breathes or shows any other evidences of life, such as beating of the heart, pulsation of the umbilical cord has been cut or the placenta is attached; each product of such a birth is considered live born.

2. **Death rate.** This include both fetal death and still birth. Fetal death is death prior to the complete expulsion or extraction from its mother of a product of conception irrespective of the duration of pregnancy; the death is indicated by the fact that after such extraction the fetus does not breathe or show any other evidence of life. A still-birth is a fetal occurring late in the gestation period, 'late' is usually defined as after 28 completed weeks of gestation.

3. **Data concerning population structure.**

   These include sex structure, age structure, marital status, literacy and educational attainments. Sex structure depicts factors effecting overall sex ratio.

Age structure shows the proportion of persons of various ages in the total population. Marital status shows the number of married, unmarried, males and females, widowers and widows, etc.

In Demography the rate of marriage is known as nuptiality. Most of the marriages are registered to be legal, in most of the countries. Marriage has been defined by UNO as the legal union of persons of opposite sex.

This has been further explained as: "The legality of the union may be established by civil, religious or other means as recognized by the laws of each country, and irrespective of the types of marriage, each should be reported for vital statistics purposes."

Beside literacy and education attainments, population structure data also show the population according to religion, rural and urban population and also the number of foreigners.

4. **Fertility date.** Fertility data include both fecundity and fertility Fecundity determined by rhythm method. Fecundity does not work in the conditions know as Parturition, Post-mortem, Amenorrhea and Anovulatory-Side. Fecundity depends upon lactation. It is also influenced by social taboos. Some persons are sterile and sub-fecund, Their number however, is generally not more than 10% of the total pairs in the population.

   Fecundity and fertility is judged by electronic computer through flowchart or diagram. The fertility data tell about sterility, family size, parity, conception, contraception and different types of factors effecting fertility.

5. **Mortality data.** These include crude death rate, average expectation of life and birth, infant mortality rate, sex and age patterns of mortality, causes of death, levels and trends in mortality and mortality differentials.

6. **Migration data.** These include immigration as well as emigration, their rate, trends and causal factors.

7. **Size of population data.** These include vital statistics. The growth and trends of population and the size are know through census surveys.

8. **Population distribution.** This data is particularly gathered on the basis of geographic areas. It also shows population distribution by classification of residence such as rural, urban, etc. beside, it also shows trends in realization and urbanization.

9. **Labour farce.** Data concerning labour force shows economically inactive population. The former includes employed as well unemployed and the later includes home makers, students and income recipients. Besides, the data shows levels of male and female labour force, age specific labour force, rural and urban force, educated and uneducated labour force, etc.

The above discussion of the various constituents of population data show that it requires large scale and detailed surveys from time to throughout the country. It is the necessary basic of all planning and development in a country.

Population data are obtained through three sources: population census, registration of vital-events and sample surveys. These may be called methods of gathering population data. There are also sources to gather population data. A brief explanation of these source and method will give an insight into the nature of population data.

The value of the study of demography is clear from the scope of this important field of study. Since the scope is constantly increasing, therefore, it shows the growing recognition of its importance.

Demography helps in the understanding of population problems particularly of the less developed regions of the world.

It also helps in planning the population of developed and undeveloped countries. International agencies are publishing data in this connection from time to time.

The importance of demographical studies is clarified by the observation of the implications of rapid population growth. The chief problem concerning population in a country is to control population growth in correction with the growth of health amenities, food supplies employment. Education and housing.

Demographical studies point out the conditions and requirement in these areas so that future development and growth may be planned accordingly in brief, the following points may be noted about the importance of demography:-

1. **Health planning.** Persistent high fertility causes significant health problems, both for the mother and the child. In most of the developing countries married women's are characterized by continuous nutritional drain from repeated pregnancies. Premature curtailment of breast feeding is an important cause of high mortality. High fertility is connected with underdevelopment of children. Since demography studies fertility and connected problem therefore its study is must for health planning of the country.

2. **Planning of food supply.** Planning of food supply means availability of adequate food for total population, both in quality as well as in quantity inadequate food supply results in growth retardation high mortality rates, poor health, low physical activity and consequently low productivity.
   Therefore food supply must have a growing correlation with population growth. Thus planning of food supply requires and presupposes population studies. In a particular nation it may not be possible to meet demands of food supply for the country. Different nations today very much depend upon other nations for food supply.

3. **Employment Planning.**Employment is an international problem these days. Unemployment and under development is fast growing not only in the economically backward countries but also in also in more developed nations. A demographic factor of considerable importance is the high dependency ratio in less

developed countries such as India where four or five persons depend upon the income of one person.

Therefore, employment planning requires study of population in all its aspect. It also requires study of migration, immigration and emigration which is an important area of demography. Thus the importance of demography in employment planning is clear.

4. **Educational Planning.**Every nation today is concerned with providing proper education to the children. The number of children however, is constantly increasing. Therefore, educational planning for children requires demographical planning. This is also required in the case of uneducated adults. For example in India more than 1/3 of all the adults are illiterate. The demographical assessment of widespread illiteracy and quantum of education required is a necessary prelude to all educational planning. The estimates about the future needs of education are also made on the basic of estimates of growth of population.

5. **Housing Planning-**Demand for housing increase with the increase in the size of population. Therefore data for mortality, fertility, migration and family formation provide basis for estimates of housing required.

For example, according to the estimates prepared by the Economic and Social Commission for Asia and the Pacific (ESCAP). The number of persons in the age-group 15-24 in the region are to likely to increase from 379 million in 1970 to 469 million by 1980, an increase of 24 per cent.

These people will marry and would like to establish their own homes. According to another estimate pre arid by ESCAP, the percentage of the urban population in the region will I reuse from 25 in 1970 to 44 by 2000.

The increase in the urban population of the region during this period will be from 507 million to 1551 million. Available statistics for the ESCAP region show that less than two housing units per thousand population were built each year during the 1960 whereas the requirement was for eleven unit per thousand population.

In Latin America there is a deficit of 20 million housing units whereas in the ESCAP region the estimated deficit is of 22 million housing units in the urban areas and 125 million in the rural areas.

6. Planning Concerning Migration.

India today, is suffering from brain-drain. Data concerning persons, migration to Western countries is necessary to estimate the extent of brain-drain. Such estimate have been made and thinking has started about methods to curb this evil. Against .Therefore data concerning emigration is gathered from time to time. Further data concerning immigration, another aspect of migration, is equally necessary since it again makes qualitative changes, in the population of the country.

For example, in India a large number of poor, illiterate and famished immigrants are coming from Bangladesh for last several year, creating difficulties particularly in the States of West Bengal and Assam.

Data concerning these immigrants has to be gathered from time to time so that some sort of restriction may be put upon it..

This it is clear that migration statistics are very important for the government as well as non-government agencies.

The most important theory in the history of demography was presented by Thomas Robert Malthus (1766-1834) Among his most important works was his famous Essay on population entitled: An Essay on The Principle of Population as It Affects the Future Improvement of Society, With Remarks On the Speculations of Mr. Godwin , M.Condorcet and Others, This essay was published anonymously. It, however become one of the most controversial books of modern times, and brought both honor and criticism to the author.

Its importance as a landmark in the history of population can be judged by the fact that year of its publication is reckoned as the base year for the study of population doctrines.

Utopia of William Godwin

William Godwin published his book Enquiry Conceding Political Justice, in 1793, which presented a Utopian ideal of perfect society. It this society, according to him, "There will be no war, no administration of justice as it is called, and government." Beside this, there will be neither disease, anguish, melancholy nor resentment. Every man will see with ineffable ardor the good of all.

Challenge by Malthus

This utopian thesis was challenged by Malthus. He pointed out that the tendency of the population to grow faster than the means of subsistence gradually leads to human misery and creates impediments in the path of progress. He laid more emphasis on criticism of the Poor Laws in the 2nd edition of his Essay published in 1803. This edition contains substantial statistical data in support of arguments. It proposed moral constraints as a preventive against rapid growth of population.

Next five years in the life of Malthus now entitled: An Essay on the principle of population or a view of its past and Effects on Human Happiness, with an Inquiry into our Prospects Respecting the Future Removal of Mitigation of the Evils which it Occasions. In 1872 was published the 7th edition of the Essay.

The Central Theme of Malthusian Theory

Malthus started his Essay by laying down two "First, that food is necessary to existence of man." "Secondly, the passion between the sexes is necessary and will remain nearly in its present state."

He argued, "Assuming they may postulate as granted, say that the power of population is definitely greater than the power in the earth to produce subsistence for men. Population, when unchecked increase in a geometrical ratio. Subsistence increase only in an arithmetical ratio. A

slight acquaintance with numbers will show the immense—of the first power in comparison with the second.”

The following propositions were put forth by Malthus, to establish his theory:

Population is necessarily limited by the means of subsistence.

Population invariably increases where the means of subsistence increase unless prevented by some very powerful and obvious checks.

These check and the cheeks which repress the superior power of population and its effects on a level with the means of subsistence, are all resolvable into moral restraint, vice and misery.

This definition of demography is not sufficiently wide. In fact the field of demography changes according to time, place and circumstances. Although it maintains a continuous descriptive and comparative analysis of trends, in each of these processes and in their net result, its long-run goal is to develop a body of theory to explain the events that it charts compares. John Graunt defined techniques of demographic analysis. He presented what is known as analysis approach.

In contrast to it Robert Malthus presented what is known as problem approach. The composition of population includes measurable characteristics of population such as age, sex, marital stratus, education, religion, caste, health, etc.. While the former includes studies of system, cultures and societies on a large scale, the later studies the individual and the family as a unit of society. This is a rapidly growing rapidly growing area of demography, and prospects for future progress are almost as important as the work already done. These characteristics include age, sex, marital status, education level, religion, caste or race and health, etc. These characteristics are generally changing. Study is conducted

concerning the levels and trends of world urbanization and factors affecting urban-rural population distribution. Besides, urbanization is studied in almost every country by the government agencies. Basic measures of fertility and methods of conception control are also studied. The basic measures of fertility are measures based upon performance during one year, such as The Crude Birth Rate. The General Fertility Rate, Age Specific Fertility Rate, Total Fertility Rate, Gross Reproduction Rate, Sex-Age adjusted Birth Rate. Measures based on Sex-Age distribution, Measures based on children ever born.

The methods of conception control are both male and female. The male methods of conception control include coitus interrupts. Condom.. In-migration and out-migration. The demographer studies general trend of migration, migratory movement, place and origin of destination, gross and net migration interval, migration streams, etc. The former includes employed as well unemployed and the later includes home makers, students and income recipients. Besides, the data shows levels of male and female labour force, age specific labour force, rural and urban force, educated and uneducated labour force, etc. Unemployment and under development is fast growing not only in the economically backward countries but also in also in more developed nations.

The demographical assessment of widespread illiteracy and quantum of education required is a necessary prelude to all educational planning. The estimates about the future needs of education are also made on the basic of estimates of growth of population. , large number of emigrants make a qualitative change in the population of a country particularly because most of the emigrants are highly qualified persons and technical hands.

This is particularly true of underdeveloped countries like India. Unemployment and under development is fast growing not only in the economically backward countries but also in also in more developed nations.

The demographical assessment of widespread illiteracy and quantum of education required is a necessary prelude to all educational planning.

The estimates about the future needs of education are also made on the basic of estimates of growth of population. , large number of emigrants make a qualitative change in the population of a country particularly because most of the emigrants are highly qualified persons and technical hands.

Dr.Vinay Patel , Principle
Paramhans Institution of Education, Narsinghpur
Ajay Kumar kushwaha ,Asst.Pro Mahajoli Govt College,JBP,MP
Santosh Puri Gosami .Asst.Pro. Mahakoshal College JBP (Guest)

Analytical study of Urbanization of Village and its on Tribes

Abstract:-

Marginalization of city tribes is an analytical assessment of the contextual specific in an urban situation. the urban areas have failed to meet the demands of this increasing population pressure resulting in large gaps in provisioning of basic amenities of housing, drinking water, sewerage, transportation etc. deprivation of such services has resulted in burgeoning of slums with conditions unfit for human habitation. social security to urban poor is provided through Rashtriya Swasthya Bima at strengthening (RSBY) which aims at strengthening the pension and health insurance safety nets for all kind of labourers.

Key Words:- Apathy, deprivation , isolation ,land status ,new vitality, urban tribes

Introduction:- India in its historical context represented a tribal society with off and on infiltration of diverse cultural elements. Political ups and downs, socio-cultural turmoil, economic restructuring and exposures to tides of national integration – all are triggering factors of alteration and diversification of societal forces in the NE region of India. Urbanization process is bedrock on which many structural changes reset. Marginalization of city tribes is an analytical assessment of the contextual specific in an urban situation

India’s urban population has grown rapidly over the last century from 25 million in 1901 to 377 million in 2011 which constitute 31.2 % of the total population in the country. But the urban areas have failed to

meet the demands of this increasing population pressure resulting in large gaps in provisioning of basic amenities of housing, drinking water, sewerage, transportation etc. deprivation of such services has resulted in burgeoning of slums with conditions unfit for human habitation. Most of the urban poor are involved in informal sector activities where there is a constant threat of eviction, removal, confiscation of goods and almost non-existent social security cover.

At present, 17.7 % of urban population comprising 65 millio people lives in slums (census 2011). The pace of urbanization is likely to accelerate over time and it is estimated that by 2030, another 250 million people would be added to the Indian cities. If not handled appropriately, this will give rise to urban poor. The report of the 'Expert' Group to review the methodology for measurement poverty' headed by c. Rangarajan has put the number of urban poor at 102.5 million in 2011-12, surviving on daily consumption expenditure of Rs.47 or less. However it is argued by many that instead of measuring urban poverty just in terms of consumption expenditure, it needs to be defined in terms of access/non-access of basic amenities.

Methodology :-

The tribal groups have emerged as one of the segments of the city. the Paper analyses the status of these groups in the urban setup .City tribes in this Paper are those People who were the original inhabitants in the city having there own land . Urban poverty being multi-dimensional, various vulnerabilities faced by the poor in cities and towns. In these Paper Primary and secondary data is used.

Issue of urban Poverty:-

The poverty alleviation programmers of the government were completely rural centric earlier. It was only after the seventh five year

plan that urban poverty was considered as a separate issue by the policy makers, this shift in understanding that urban poverty is not a mere spill over of rural poverty and hence needs to be dealt with separately was a positive step forward. Further, the rate of decline in urban poverty is slower and also uneven compared to rural poverty. Around 40 % of the urban poor are concentrated in the states of Bihar, Madhya Pradesh, Odessa, Rajasthan, and Uttar Pradesh.

Average urban consumption has been rising much faster than rural consumption. In fact, the gap between the two has widened considerably over the last decade and has been accompanied by increasing inequality between different sections of urban society. According to NSS 68^{th} round, the richest 10% of the population in urban areas have an average monthly per capita expenditure (MPCE) about 11 times more than same figure is 7 times for the rural areas. The distribution of population is generally studied according to geographic areas. The measures of population distribution include percentage of population and density of population.

The factors affecting population distribution are studied as geographic, social, economic and demographic. Population distribution is also studied by classification of residence. This includes rural and urban residence. It also includes the study of urban growth or urbanization. The measures of urbanization include percentage of population in urban areas, ratio of urban all population, size and residence of the medium inhabitant, tempo of urbanization, etc.

Study is conducted concerning the levels and trends of world urbanization and factors affecting urban-rural population distribution. Besides, urbanization is studied in almost every country by the government agencies.

The different aspects of the study of population or social demography may be briefly described as follows: -

1. Size of Population. Demography is fundamentally the study of Tribal population: - Population is primarily studied in the form of its size. In India census studies of population are undertaken after every ten years.

The demographers in different countries find out the size of the population of their countries. These data are further utilized by agencies of United Nations to arrive at the size of world Tribal population. The Population Division of United Nations situated at New York studies the world population and working papers are published in this respect from time to time.

Some important data are also provided by Food and Agricultural Organization (FAO) from time to time. The Department of Economics and Social Affairs United Nations also publishes useful data from time to time.

2. Organization of Tribal **Population.** Population organization includes the measurable characteristics of population of a community in a country during a particular period. These characteristics include age, sex, marital status, education level, religion, caste or race and health, etc. These characteristics are generally changing.

3. Population Distribution. The distribution of population is generally studied according to geographic areas. The measures of population distribution include percentage of population and density of population.

The factors affecting population distribution are studied as geographic, social, economic and demographic. Population distribution is also studied by classification of residence. This includes rural and urban residence. It also includes the study of urban growth or urbanization. The measures of urbanization include percentage of population in urban areas, ratio of urban population, size and residence of the medium inhabitant, tempo of urbanization, etc.

Study is conducted concerning the levels and trends of world urbanization and factors affecting urban-rural population distribution.

Besides, urbanization is studied in almost every country by the government agencies.

4. Fertility. An important field of demographical study is fertility. It is expressed in terms of birth rate, birth order, family size, sterility and contraception, etc. The influence of biological limits and social norms upon fertility is important. The demography studies the reproductive span and theoretical maximum fertility.

He also studies psychological, social and cultural factors affecting fertility. The psychological factors affecting fertility include Adolescent Sterility, Post-Partum Sterility and Average Interval between Successive Birth, Re-productive Wastage, etc.

The social and cultural factors affecting fertility include: Intermediate Variables, Intercourse Variables, Voluntary Abstinence, Fetal Mortality from Voluntary Causes (Included Abortions), Use or Non-use of Contraceptives including Sterilization, Norms about Intermediate Variables and Family Size, etc.

Beside, Basic measures of fertility and methods of conception control are also studied. The basic measures of fertility are measures based upon performance during one year, such as The Crude Birth Rate. The General Fertility Rate, Age Specific Fertility Rate, Total Fertility Rate, Gross Reproduction Rate, Sex-Age adjusted Birth Rate. Measures based on Sex-Age distribution, Measures based on children ever born.

The methods of conception control are both male and female. The male methods of conception control include coitus interrupts. Condom. Male sterilization or vasectomy, female methods of conception control. Include the rhythm method the calendar method, the temperature method. Mechaniception, the intra-uterine device (IUD), oral contraception, female sterilization. Advances in contraceptive technology, induced abortion, etc.

On international level demography studies levels and trends of fertility in the world, factors associated with long term decline of

fertility in the developed countries. Factors related to high fertility in the developing countries, differential fertility, etc.

5. Mortality. An important field of demography study is mortality. It is measured by crude rate death infant mortality rate. It includes the study of sex and Age patterns of mortality, cause of death, levels and trends of mortality in a country and in the world and mortality differentials such as urban-rural and occupational, etc.

6. Migration. Migration has been classified as immigration and emigration. In-migration and out-migration. The demographer studies general trend of migration, migratory movement, place and origin of destination, gross and net migration interval, migration streams, etc.

The Sources of data concerning migration include census surveys and population registers. The methods of measuring internal migration are direct as well as indirect. The direct measures include data concerning place of birth, duration of residence, place of last residence, etc.

The indirect measures include data concerning vital statistics, survival ratio and migration. Demography studies differential migration by age, sex, marital status and educational attainments. It studies both national as well as international migration and also migratory movement.

Government interventions for urban Poor :-

The ministry of housing and urban poverty alleviation (MOHUPA) is the nodal agency at the level of union government responsible for development of urban poor. Urban poverty being multi-dimensional, various vulnerabilities faced by the poor in cities and towns.

The government policy therefore addresses the occupational, residential and social needs simultaneously in a comprehensive and integrated manner with a targeted focus on the vulnerable groups so that a definitive impact can be made on ground. The most significant policy intervention in urban development in recent times is the emphasis on urban renewal through the Jawaharlal Nehru national urban renewal

(JNNURAM) in the 10th five year plan (FYP). There are also other schemes which address various vulnerabilities of the urban poor.

Occupational vulnerability: besides providing shelter, a major focus of Mahopac is on improving livelihood sources for the urban poor. To this end, Swarnsjayantishahari Rozgar yojana (SJSRY) was launched in 1997, restructured as National Urban livelihood mission (NULM) in 2013. The mission aims to cover 786 cities in its first phase under the 12th plan enabling urban poor to access gainful self-employment.

The mission would also address livelihood concerns of the urban street vendors by facilitating access to suitable spaces, institutional credit and social security. However, studies have shown that wage employment component of SJSRY has generally been used for casual municipal works, and thus has created no additional employment.

In case of self- employment High cost of processing and monitoring small loan agreements deters the banks from extending credit, and therefore the overall coverage of the scheme is rather limited.

Residential vulnerability: in order to address the residential vulnerability of urban poor, two sub- Mission, basic services for urban poor (BSUP) and integrated housing and slum development program me (IHSDP) were launched under JNNURM in 2005-06. The major objective of these sub- Mission was to construct dwelling units for the poor and also provide basic service like drinking water, sanitation, sewerage etc. at the beginning of Twelfth FYP, the technical group constituted by MoHUPA, on urban housing shortage, estimated a need of 18.78 million dwelling units for urban India. However, out of 1.6 million houses sanctioned under BUSP and IHSDP till data, 50% of the dwelling units have been completed and 36% of them have been occupied by the beneficiaries (economic survey 2013-14). Problem in acquisition of land,

lack of state governments to rise matching funds and to meet reform Conditionality's are some of the reasons for slow progress in JNNURM. In 2012-13 BSUP, IHUSDP and RAY together constitute only 36% of the total JNNURM expenditure. This shows greater emphasis on

city development and neglect of urban poor. Since the funding in JNNURM is divided between Gol, states and urban local bodies (ULBS) based on the population of the city. There is an Inbuilt bias in In favor of bigger cities and states with higher share of urban population in the country.

Social vulnerability: social security to urban poor is provided through RashtriyaSwasthyaBima at strengthening (RSBY) which aims at strengthening the pension and health insurance safety nets for all kind of laborers.

Conclusion: - The government policy therefore addresses the occupational, residential and social needs simultaneously in a comprehensive and integrated manner with a targeted focus on the vulnerable groups so that a definitive impact can be made on ground. The tribal groups have emerged as one of the segments of the city. the Paper analyses the status of these groups in the urban setup .City tribes in this Paper are those People who were the original inhabitants in the city having there own land. Marginalization of city tribes is an analytical assessment of the contextual specific in an urban situation. the urban areas have failed to meet the demands of this increasing population pressure resulting in large gaps in provisioning of basic amenities of housing, drinking water, sewerage, transportation etc. deprivation of such services has resulted in burgeoning of slums with conditions unfit for human habitation. social security to urban poor is provided through Rashtriya Swasthya Bema at strengthening (RSBY) which aims at strengthening the pension and health insurance safety nets for all kind of labourers.

Dr.Dilip Hazari, Pricipal Maharashtra Management College. JBP . MP.
Dr.Devendra Vishwakarma
B.com.M.A (Economics, Rural Development),
MBA, Phd in Economics.RDVV

Food Security in India: Challenges & Opportunities

Abstract :- *The statistics speak about the gravity of problems of unemployment and poverty which demand an immediate solution.* [(1)] *The objective of providing food, cloths, and shelter had adopted by India sine independence and the long journey from socialism to liberalization in last sixty year of independence. India seems so far from achieving this objective. Indian growth has captured the world attention and India is now seen as one of the poles of the new world order. The benefits of Indian growth by contrast, have not percolated beyond the middle class. That means India has not made a serious enough efforts on poverty. Thus a problem of poverty and its eradication has now become a challenge for the government of India.*

Introduction:-

Definition and Measurement of Poverty:-India lacks appropriate and reliable data for estimation of the extent of poverty. The NSSO (National Sample Survey Organization) data on consumption **expenditure** provide such information that can be used for determining the incidence of poverty both in urban and rural sectors. For the study of poverty in India economists relied on this data. It is generally agreed that only those people who fail to reach a certain minimum kind of consumption standard be regarded as a poor. The planning commission of India has adopted the definition provided by the ‘Task Force on projection of Minimum Needs and Effective Consumption Demand’ According to which a person is below poverty line if his daily consumption of calories is less than 2400 in rural areas and 2100 in urban areas. On this basis the cut-off points

turn out to be Rs 49 for rural areas and 2100in urban areas at 1973-74 prices.

Using the methodology suggested by the Expert group estimates there has been a modest reduction in the incidence of poverty since 1987-88. In 1993-94 the overall population below poverty line was 36.00 percent. While according to the report of the N.C. Saxena committee constituted by the ministry of Rural Development, Government of India says 49.1% population in the country is living below poverty line and 23% of poor do not have any ration card.

Suresh Tendulkar committee's report on poverty estimates have been accepted by the planning commission recently. Prof. Tendulkar finds that in 2004-05, 37% of Indian population was living below poverty line. This figure is high as compared to figure given by planning commission according to which 27.5% were living below poverty line.

According to the World Bank, more people are living in extreme poverty in developing countries and it also adjusted the recognized yardstick for measuring global poverty to $ 1.25 from $ 1 per day. The world bank estimates that 41.6 % of Indians live on less than USD 1.25 a day, the international poverty line. The below graph shows the contrast between the number of BPL people.

Food Security Act And Poverty :- According to United Nation 220 million people in India suffer from hunger and the prevalence of hunger found in all age groups. Per capita availability of food grains in India was 190 kg per person per annum in 1979-80, it declined to 186 kg. In2004-05. According to Food and Agriculture organization (FAO) of united Nations about 100 million people have moved to the category of hungry people around the world in the three years from 2004 to 2007-08 and

India ranked 65 out of 84 countries in the Global Hunger Index of 2009, below north Korea, Sudan and Zimbabwe.

If the Tendulkar committee's estimate is accepted the burden on central exchequer for implementing the food security act would increase and the quantity of subsidized food grain to be given to BPL card holders would compel the government to increase the subsidy on the food grain.

Government's attempt to underestimate the figures of people living below poverty line is completely absurd instead the government is politicizing this important issue. It seems that the government is constantly trying to reduce the number of poor people and the subsidy on food grain of BPL families.

Public Distribution System for Eradication of Poverty: - Public distribution system has vital role in alleviating of poverty. If the public Distribution system function well the poverty can be alleviated rapidly. Because the delivery of subsidized food grain is done by PDS (Public Distribution System) but it seems, PDS is system is corrupted and dominated by the rich and inflectional persons. Former finance minister Chidambaram himself admitted in a budgetary speech that "There are difficulties and leakage of 36 present throughout the country. But who is responsible for the PDS we provide the food grain and we provide the subsidy.

Table No.01: Central Govt.Expenditure on Food Subsidy.

S.No	Year	Expenditure (In Crores Rs)
1	1980 - 81	650
2	1990 - 91	2450
3	2000 - 01	12120
4	2009 - 10	58242
5	2011 - 12	72823
6	2012 - 13	75000

Food waste was denounced by farm ministers and policy makers gathered in Berlin as almost 1 billion people in developing countries go hungry. Consumers in rich countries dispose of 220 million metric tons of food waste every year, equal to the entire food output of sub-Saharan Africa, jose Graziano da Silva, the director general of the United Nations' Food and Agriculture Organization, told 64 agriculture ministers meeting in Berlin.

"We must change our way of thinking, we must have more education, we must have discussion about best-before dates," German Agriculture Minister llse Aigner said. "Every food item thrown away is wasted."

One Third of the food produced in the World every year is lost or Wasted, amounting to 1.3 billion metric tons, according to Graziano da Silva. As many as 925 million people faced hunger Worldwide in 2010, based on the FAO's most recent estimate. The minister meeting in Berlin said food should be treated "responsibly and carefully," particularly to reduce waste, according to a joint declaration by countries including Germany, France Japan and the U.K. on Jan. 21.

"In developed countries, the Waste of food is really something that is a concern," Graziano da Silva said. "Even today, We produce enough food, despite that we have 1 billion people undernourished."

World food Prices tracked by the FAO reached the highest ever last February on surging grain prices, before slipping 11 percent through December. The FAO food-price index averaged a record 228 points last year, 23 percent more than in 2010 and above the 200 points recorded in 2008, when food riots erupted from Haiti to Egypt. The index began in1990. Wheat and corn climbed for a third consecutive day in Chicago today.

"We see our brothers and sisters in Africa suffering from hunger, at the same time we see people in developed countries having too much food and suffering from diseases such as obesity," Indonesia's Agriculture Minister Suswono Asyraf said.

The abundance and ubiquity of food in developed economies means consumers there take their mealfor granted, without considering what goes into its production, said Dacian Ciolos, the European Union’s agriculture commissioner.

“it’s not because we have easy access to food that we can waste it,” Ciolos said. “if we let these foods rot, we waste financial resources, we waste natural resources and we also waste labor. It’s the grim statistic that just won’t budge: new child malnutrition numbers are out for India, and there is no good news to be had. The exhaustive door-to-door survey covered a fifth of India’s children and found that 42.3per cent of children under the age of five are underweight for their age, 58.8 per cent are stunted and 11.4 per cent so severely underfed as to be considered Wasted.

These figures are significant in part because some Indian nationalists reject the findings of international organizations that have warned that the child malnutrition situation is not improving even as the economy has grown at nearly 10 per cent per year over the last decade.

In fact, about as many Indian children are malnourished now as were at the beginning of the economic liberalization period two decades ago: the number has declined at best by two or three per cent.

As the Globe reported in 2009, the reasons why India continues to have such high malnutrition rates have less to do with levels of poverty than they do with persistent social inequality, particularly between men and women. The reason, according to research from the International Food Policy Research Institute, that many poorer African nations nevertheless have better-nourished children than India dose is that in those African states, women have much more autonomy in terms of personal mobility, work and household spending, and as a consequence, their children eat better. A child under five is almost twice as likely to be underweight in India as is a child in sub-Saharan Africa.

As a result of earlier efforts made during the planning period, India could able to minimize the intensity of faming and food problem. In fact

India has’ maintained self sufficiency in the food grain, particularly cereal production during the planning era. However, it has not been able to provide adequate food require for an active and healthy life of the majority of people. The goal of balanced diet is still a distant dream. Therefore, food security occupies important role to maintain the equilibrium between the availability of food grain and adequate distribution of food grains to the people at reasonable price. In fact the food security necessities timely reliable and nutritionally adequate supply of food grain be available on long term basis to the weaker section . Thus it implies the government has to ensure the continuous progress in food grain production so that it takes care of increasing population and also increasing demand for food grain being resulted from increased income. Therefore food security is viewed as the ability to assure on the long term basis that the food system-provides the people access to timely, reliable and nutritionally adequate supply of food.

Objective of the study: - In this paper an attempt is made to examine relevant aspects of food security in India such as 1) growth in food grain production, 2) the performance of public distribution scheme and 3) issue of poverty and unemployment with respect to food security.

Methodology: - The method used for the present study the material is used in secondary data ,review of books & Journal .Present a detailed account of research methodology pressured in the course of review and investigation Methodology

Discussion and Result :-

1. Growth in Food grain Production :-

The availability of adequate domestic food grain in the country is the main component of food security. In this respect , India has made continuous progress in the food grain production. It was 82,0 million tones in 1960-61 which increased to 176.4 M.T. in 1990-91 and further raised to 203.0 MT in 1998-99. In case of cereal support it was 69.3 million tones...in 1960-61 that increased to 162.1 million tones in 1990-91 and further increased to 188.2 MT in 1998-99. While the progress of

pulses could not remain satisfactory' during the planning period. It was 12.7 MT in 1960-61, raised marginally to 14.3 MT in 1990-91 and 14.8 MT in 1998-99.

Among the individual crops rice and wheat arc major crops which contribute to was food security. Output of wheat increased by 5.51 per cent during 1960-90, followed by rice (2.58). The post globalization period showed that output of wheat increased by 3.19 per cent followed by rice (1.84%) during 1991-99. As compared to earlier period post globalization period did not show impressive achievement in the level of output of rice and wheat. Moreover, the per capital availability of food grain also reflects the position of food security. It was 449.6 grams per day in 1960 which increased to 476.4 grams per day in 1990 then reduced to 467.4 grams per day in 1999. The per capita availability of cereal was 384.1 grams per day in 1960 which raised to 435.3 grams in 1990 and further reduced to 38.6 grams in 1999. The reduction in per capita availability of pulses has adversely affected protein intake of pourers. Because it is recommended that intake of pulses should be 40.4 gram per day for balanced diet. In this respect ninth five year plan states that though self sufficiency of food production has been achieved, the population still lacks access to balanced food. It is a matter of great concern that even thought cereal production has kept pace with the increasing requirement and average per capital intake of cereals have remained satisfactory, there fall in the consumption of pulses. Therefore it is an urgent need to raise the output of pulses.

2. Public Distribution Scheme :- Public distribution scheme serves several objectives simultaneously namely : 1)to cope with emergency situation such as drought, famine, 2) to distribute food grain to the weaker section at subsidized at subsidized rates and 3) to guarantee remunerative prices to farmers. The Government of India Procures food grain in the areas with surplus production and distribute them in at subsidies rates to the poorers through PDS. Initially PDS had operated as an instrument of price stabilization as an alternative channel to private

trade. However the welfare importance of the PDS has been recognized since the formed of revamped PDS and Targeted PDS (TPD_S). The system follows a two tier subsidized pricing structure for families below poverty line (BPL) and for families above poverty line (API), the former represents the poorest of the poors. As per 1998-99 poverty line, monthly expenditure per head of Rs. 300 in rural area and Rs. 400 per head in urban areas used to determine the population below poverty line. Considering an average family of 5 persons, family earning Rs.1500 per month in rural area and Rs. 2000 in the urban areas fail below poverty line. The government is committed to issue 10 Kg. of foodgrain per month per BPL family at a price equal to half of economic cost of FCI. Under the revised scheme it is increased to 20 Kg. per head to BPL families, it is estimated that food grain requirement to the extent of 72 lakh tones for BPL families and 103 lakh tones for APL families annually. The supply of food grain for the BPL families is guaranteed to the states by the central, and additional quantities required by the states would depend on the availability of stock of food grain in the central pooh At present these are 4.6 lakhs PDS outlets in the country. In order to expand the network of PDS there has been continuous increase in PDS expenditure. It was Rs. 295 corers in 1974-75 which raised to Rs. 5,377 corers in 1995-96 and further Rs. 9,000 crores in 1998-99 The PDS expenditure now occupied 3.19 per cent to Central Government’s total expenditure and 0.60% to G.N.P. Moreover, rice, wheat, sugar and kerosene accounted for nearly 86.0 per cent of the PDS sale. The sugar alone accounted for 35.01% followed by rice (27.0%), wheat (10.0%) and kerosene (15.0%). Course cereals such as jowar, bajra and other course grain which are largely consumed by the poorers accounted for less than one per cent of total PDS sales. Moreover the share of pulses, the main source of protein for the poorers accounted for less than 0.2 per cent. Moreover it is observed that the spates an average off take annually around 17.4 MT of food grain from FCI of which the share of BPL off take is 7.1 MT and that of APL is 10.3 MT. The allocation of wheat to PDS ranged from 9 to 11 million tones while off take ranged from 5.0 to

9 MT. Recently FCI is facing the problem of the surplus buffer stock norms. It is being occurred largely due to the fact that the majority of BPL families do not have enough purchasing power so that they cannot afford to purchase the food they requires even at subsidized rates. Therefore the issue of food Security is mainly related to poverty, and unemployment. Moreover, food security at household level particularly at targeted group is an issue of great importance where million of poorers suffer from persistent hunger and malnutrition. In fact the poorers should access timely reliable and nutritionally adequate supply of foodgrain.

It is observed that FCI buy superior food grain particularly wheat, rice and supplies them for PDS.

However large quantity of food grain find their way to private open market and the PDS outlets supply inferior foods to the poorers and they have to accept whatever is supplied to them. Alternatively they more particularly APL families do not accept inferior quality of food from PDS, rather they prefer to buy from open market. As a result there has been a steady decline in the off take of food grain from FCI. It is observed that the wheat for PDS has declined from 8.78 MT to 4.83 MT and rice off take reduced from 9.94 MT to 8.0 MT.

Discussion of Findings :-

Moreover the issue of food subsidy is also important. The gap between the economic cost incurred by the FCI toward procurement, storage, distribution and wastage of food grain and its average realization based on the issue prices under PDS has been widening over the year. This gap is filled by the Central Government through consumer subsidy. In the past the government used to make adjustment in the PDS issue price of rice and wheat consequent to an increase in the minimum support price a much short time lag. However, issue price had not been adjusted by the government in line with the increasing minimum support price since 1994. On the country issue prices for BPL families were actually reduced from June 1997. Some increase in the issue prices for APL households from January 1999 may help reduced this burden. However it showed that the food subsidy has been continuously increasing over a

period. It was Rs. 2,850 Crores in 1991-92 which increased to Rs. 5,377 Crores in 1995-96 and further raised to Rs. 8,200 Crores in 1909-2000.

Problem: - Every seventh person in the world is an Indian and every third poor person in the world is also an Indian. The statistics speak about the gravity of problems of unemployment and poverty which demand an immediate solution. [1] The objective of providing food, cloths, and shelter had adopted by India sine independence and the long journey from socialism to liberalization in last sixty year of independence. India seems so far from achieving this objective. Indian growth has captured the world attention and India is now seen as one of the poles of the new world order. The benefits of Indian growth by contrast, have not percolated beyond the middle class. That means India has not made a serious enough efforts on poverty. Thus a problem of poverty and its eradication has now become a challenge for the government of India.

There are several approaches for delivering subsidized food to poor household one option is cash transfer to BPL household's Bank accounts, a second is distribution of food coupons and third option is to distribute food grain entitlement through the NREGA system. In each case, the main Weakness is the last link in the distribution chain. The PDS shop owner, the food coupon distributor, the NREGA card distributor. If they are corrupt, there will be leakage. It is difficult to prevent inflectional and corrupt distributors from diverting the grain for poor households. There is nothing anyone can close that leak.

The answer is than to set up parallel institution of the poor through which good and other BPL entitlements can be channeled. The Radhakrishnan committee on credit related issues has reported that such institution presents in India in the form of 'Women's Self Help Groups' and 'Bachat Gat' in Maharashtra as well as in south states are functioning well for alleviation of rural poverty. If these SHG (Self Help Groups) are used for distributing PDS grain, BPL cards or NREGA job card, we would see a sharp improvement and the effectiveness in anti-poverty

programmers and right to food beneficiaries would automatically meet to justice.

CONCLUSION: -

Food security involve the availability of food to the population in the country. However to make adequate food available to all, it is necessary that the poorers should have enough purchasing power so that they can acquire the food they need. Moreover increasingly higher production of food grain, dose not imply guarantee for ensuring food security to the poorers. At the household level, food security implies having physical and economic access to food grain that are adequate in term of quantity, quality and affordability. This implies the prices of food grain and purchasing power in the hand of poorers. It is a reality that the supply of subsidized food grains through PDS has not resulted in improvement household level food security. The self-sufficiency of food grain at national level and availability of food grain at affordable cost at local level have not got translated into household level food security for the poorers. Hence food security should be linked through employment oriented programmers. Employment opportunities be generated in the backward area in view to raise income level thereby purchasing power of the poorers. Planning commission estimated unemployment to the extent of 106 Million during 1997-2002. Moreover it is observed that employment elasticity to the GDP for the economy was 0.40 during 1983-84 and reduced to 0.38 during 1997-2002. This was occurred due to decline employment elasticity of manufacturing sector from 0.33 to 0.25 and in agriculture it was 0.50. This implies the reduction in employment elasticity ultimately reduce purchasing of power go the people and in turn affected adversely the demand for PDS foodgrains. Thus it reflects the fact that employment opportunities are not created at substantial level in the economy during the globalization period. More specifically poorers do not have much scope for employment. Therefore, food security be

considered as one of the poverty alleviation measures.

The connection between economic growth and other objectives as stated above is not as simple as it is often believed in our country. It has been observed in a number of less developed countries that economic growth generally benefits the elite groups and as a result of it economic inequalities grows. India's experience is precisely the same over the period. The growing rate of poverty over the year is generally attributed to this basis weakness in the approach of the government. (3)

References:-

Tendulkar,Suresh.(2009):Committee Report .
Mishra & Puri ,Indian Economic Problems.
Saxena,N.C.(2009):Committee Report.
United Nations .(2009):Global Hunger Index Report.
Minocha,Dr.A.C. (2011):"Planning for Poverty Reduction in India ".Sage Publication,New Delhi.
K.N.Dr.Tripathi.(2010):"Psychology in India",Sage Publication,New Delhi.
Chand ,A."Poverty in India – Research and Policy"Gian Publishing House ,New Delhi.
Alagh,Y.K.(1995):"Poverty and Food Security : Toward a Policy System ".Economic and Political weekly Vol.30,N0.52.
Dantwade,M.L(1993):" Agicultural Policy :prices and Public Distribution System:A Review ".Indian Journal of agricultural Economics,Vol.T 7,No.2.
Dutta & Sundarum, INDIAN Economy 2012-13.
Economic Survey 2012-13.
Geetha ,S.and Suryanarayana,Mill.(1993):Economics and Political Weekly,No.35 ,August,29.
Gopalan.(1995):"Towards Food and Nutrition Security ",Economics and Political Weekly,Vol.30,no 32.

ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

Dr.Archana Pathak & Dr.Renu Pandey
Alloysis College Jabalpur MP.

Library Information and its important

Abstract :- *The information technology refers to a mosaic of technology, products & techniques combined to provide new electronic dimension to information & retrieval activities. Govt. has appointed (councilors) who help people through free consultation on their health problems. Various channels/frequencies on radio/television (both govt. owned & private) relay information, hold interview, cross examine health & medicine experts on current & chronic health disabilities , where people can even infract with guest facilities (Dr's/health experts etc) over phone during the course of their discussions being held, and get an first hand information.*

Key words: techniques, channels/frequencies. Information technology.

Introduction: – Past one & half decade has witnessed unprecedented development in computer advancements / technology, which resulted in economical computing resources to come with in easy reach. The computer's ability to store & process vast amount of information & on the other hand communication technology with it's ability to transmit this information from one location to another, converged to from "Information technology" or informatics. The information technology refers to a mosaic of technology, products & techniques combined to provide new electronic dimension to information & retrieval activities.

Information technology is changing the modes & speed of communication & transforming the world into global village.

People in India are progressively becoming aware & health conscious than they were a decade back, even the women keep track of their health parameters which effects their living & health especially if they are working women. Government on the other hand is doing its job by spreading health consciousness through various agencies like, media

(both electronic & Print) , campaigns, free distribution of medicines, vaccines, hospital facilities etc. in every primary health centers. Govt. has appointed (councilors) who help people through free consultation on their health problems. Various channels/frequencies on radio/television (both govt. owned & private) relay information, hold interview, cross examine health & medicine experts on current & chronic health disabilities , where people can even intact with guest facilities (Dr’s/health experts etc) over phone during the course of their discussions being held, and get an first hand information, remedy on health related issues, people can even watch various symptoms and actually see how to differentiate one aliment from another on tv.

Various health magazine and journals, not to mention newspapers are available on book stores, libraries and internet to gain better understanding of health related issues, which, it is pleasing to note the working women in Jabalpur city are gradually, but surely gaining access to.

REVIEW OF RELATED LITERATURE:-

In the present study, it is not possible for the researcher to get access to the entire published and un published due to time limits and huge information boom. However an attempt has been made to review the related literature.

Gittelsohu (1994) focused on eliciting women’s health concern from their own persectives. Studies have been relied extensively on the use of qualitative ethnograpic research methods to provide insight in to women’s health benefits, their fear and their health seeking behaviour. The focus has been on listing to women.

Kar, S.B., Pascual, K.C. and Hazelton, T. , Empowerment of women for health development; a global perspective, journal of health and population in developing countries, source; snehndu B. Kar, Google scholar. Has focussed on health related issues of womenfolk and ways of tackling them.

Chaterjee, M., Wallia, S., and Kohli, S., (1997) occupational health of women workers in unorganized sector. Deals with working women and how they can be equipped with knowledge and understanding of keepimg healthy. While identifying the problems related with it.

Objectives of study: –

Keeping in the view the roll of information technology in health awareness among working women in jabalpur city, the study aims to explore the following specific objectives.

1. To study in the level of information awareness among working women of Jabalpur city.
2. To study the availability of information services in institutional libraries.
3. To study the role of information technology in health awareness with special reference to television, radio, internet etc.
4. To study the roll of literature on health namely book, magazines and health columns in news papers.
5. To study the roll of media especially health channels and health programmes related by Doordarshan and Indian channels and foreign channels on health.

Research methodology –

The present study shall be based on survey method.

Tools – Questionnaire shall be used as tool to collect data.

Expected outcomes of the study: –

1. The working women's are more aware about health now in comparison to the past.
2. The media especially has brought awareness about health, by health related programs and health channels.
3. The working women mostly get information about health awareness by electronic media. They especially see the health programmers.
4. The percentage of working women's who read health magazines' and health news items in newspapers are low.
5. Indians and foreign channels give information about health awareness which includes especially nutrition, family planning and health problems etc.

6. Doordarshan and Akashwani also give health programs but very little working women see or listen to these programs.
7. Electronic media plays an important role in giving information about health programs to working women.
8. The working women are quite aware of yoga programs broadcasted. by different T.V. channel.
9. Today internet is a major player, which provides information in healthcare to working women.
10. Information technology is helpful in providing information health insurance coverage.

India in its historical context represented a tribal society with off and on infiltration of diverse cultural elements. Political ups and downs, socio-cultural turmoil, economic restructuring and exposures to tides of national integration all are triggering factors of alteration and diversification of societal forces in the NE region of India. Urbanization process is bedrock on which many structural changes rest.

"The common ground between library science and information science, which is a strong one, is in the sharing of their social role and in their general concern with the problems of effective utilization of graphic of records. But there are also very significant in several critical respects, among them in:

(1) selection of problems addressed and in the way they were defined;
(2) theoretical question asked and frameworks established;
(3) the nature and degree of experimentation and empirical development and the dependence of the progress and evolution of interdisciplinary approaches.

All of differences warrant the conclusion that librarianship and information science are two different fields in a strong interdisciplinary relation, rather than one and the same field, or one being a special case of the other."

The tribal pockets in the hills and outskirts have very good potentiality to be developed as indigenous spots to provide eco friendly centers of attraction.

Urban development management system has to gear it up. This would give a new dimension to the prime city of North East India.

A similar development has place in large parts of the world. In Denmark, for example, the ‘Royal School of Librarianship’ in 1997 changed its English name to The Royal School of Library and Information Science. Another indication of this shift is that Library Science Abstracts in 1969 changed its name to Library and Information Science Abstracts. In spite of this merge are the two original disciplines (library science and information science) still by some considered to be separate fields while the main tendency today is to use the terms as synonyms, but with different connotation.

In the beginning of the 21st century one tendency has been to drop term “library” and to speak about information department or I-schools. There has also been an attempt to revive the concept of documentation and speak of Library, information and documentation studies (or science). Another tendency, for example in Sweden, is to merge the fields of Archival science, Library science and Musicology to integrated field: Archival, Library and Museum studies.

Conclusion: - The media especially has brought awareness about health, by health related programs and health channels. The working women mostly get information about health awareness by electronic media. They especially see the health programmes.The percentage of working women’s who read health magazines’ and health news items in newspapers is low.Indians and foreign channels give information about health awareness which includes especially nutrition, family planning and health problems etc.Doordarshan and Akashwani also gives health programs but a very little working women see or listen to these programs. library science and information science, which is a strong one, is in the sharing of their social role and in their general concern with the problems of effective utilization of graphic of records.

Reference: –

1. Chen Martha towards economical freedom, 2005.
2. Prashar R.G., information and its communication. New Delhi, millions press, 1991. P.no.-13
3. Rowley, J.E. and turner, C.M.D. dissemination of information. London, Andra Deutsch, 1976. P.no.-17.
4. Information, communication and society, 4-New Delhi, IGNOU, 1993, p.no.- 27-28.
5. Reddy, P. Adinarayana and K. Hemlata. Health conciousness among women. New Delhi, Uppal publishing house, 2003.
6. Sahoo, K.C. information management with its application. Ludhiana. Medallian press, 2004.

ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

Dr.Devendra Vishwakarma.S\o shri S.L Vishwakarma
M.A (Economics, Rural development), MBA, LLB
RDVV Jabalpur MP

Intellectual Property Right and Economic Development

ABSTRACT :- *The effect of copyright law changes upon the efforts of creative individuals to create new copyright – protected products is also rather inconclusive. However, those few papers that have looked at this have generally concluded that there is indeed a positive effect – the stronger the protection, the greater the creative effort – but by most accounts the effect is not great. The Economic arguments presented in this paper provide a strong justification for the protection of geographical indication in the developing world. In contrast to more commercialized products, indigenous products with strong links to indigenous people have an advantage in establishing a geographical indication.*

Introduction :- Intellectual Property Rights are legal right, Which result from intellectual activity in industrial, scientific, literary & artistic fields. These rights Safeguard creators and other producers of intellectual goods & services by granting them certain time-limited right to control their use. Protected IP right like other property can be a matter of trade, which can be owned, sold or bought. These are intangible and non-exhausted consumption.

TYPES/TOOLs OF IPRs:

a. Patents.
b. Trademarks.
c. Copyrights and related right.
d. Geographical Indications.
e. Industrial Designs.
f. Trade Secrets.
g. Layout Design for Integrated Circuits.
h. Protection of New Plant Variety.

Objective: - The objective of the scheme is to enhance awareness of MSME about Intellectual Property Right (IPRs) to take measure for the protecting their ideas and business strategies. Effective utilization of IPR tools by MSMEs would also assist them in technology up gradation and enhancing competitiveness.

These initiatives are proposed to be developed through Public-private partnership (PPP) mode to encourage economically sustainable models for overall development of MSMEs. Under this programmed financial assistance will be provided for taking up the identified initiatives. Eligible applicants/beneficiaries will have to contribute minimum 10% of the GDP financial support for availing assistance under the scheme.

Important points of Intellectual property right are :-

Intellectual property right are customarily divided into two main areas

1. Copyright and right related to copyright.
2. Industrial property.

The protection is usually given for a finite term (typically 20 year in the case of patents.

While the basic social objectives of intellectual property protection are as outlined above, it should also be noted that the exclusive right given are generally subject to a number of limitations and exceptions, aimed at fine-tuning the balance that has to be found between the legitimate interests of right holders and of users.

Intellectual Property Right and Economic Development:-

One of the most interesting findings of the literature on IPR and economic development (Masks (2000) and Chen and puttitanun (2005) showed that there was a U-shaped relationship between the strength of a country's IPR regime and the country's per capita GDP using a cross-section sample of countries. If one is

willing to give the result a temporal interpretation, it suggests that a country's IPR regime is not independent of its level of economic development.

Research Mythology: - In these Paper secondary data is used ,Research Journal, books ,etc

Research in the Economics of copyright. Empirical studies of both the demand and supply sides of the market for copyright protected products have been discussed. The clearest message that emerges from the analysis is that not enough empirical research has been carried out. This is especially true compared with the amount of theoretical research that exists.

In terms of copyright industries, really the only empirical research we have are the macro-economic impact student that point to the copyright industries being in rather good health relative to the economy in general, at least in most of the countries surveyed.

On the supply side, the most active area of research has been on the issue of earnings, although much of that has not been directs to earning to earning from copyright royalties as such, but rather to earning of creative individuals.

The effect of copyright law changes upon the efforts of creative individuals to create new copyright – protected products is also rather inconclusive. However, those few papers that have looked at this have generally concluded that there is indeed a positive effect – the stronger the protection, the greater the creative effort – but by most accounts the effect is not great.

The demand side of market for copyright-protected products has been studied less intensively than the supply side. Economists have concentrated their attention on the effects of the existence and operation of markets for pirate products upon legitimate trade.

Conclusion: - The Economic rationale for protecting geographical indications is provided as a theoretical framework from which to start with empirical research on the topic.

The Economic arguments presented in this paper provide a strong justification for the protection of geographical indication in the developing world. In contrast to more commercialized products, indigenous products with strong links to indigenous people have an advantage in establishing a geographical indication.

References:-

Abernathy, W. and J. Utter back, 'A Dynamic Model of Process and Product Innovation', *Omega*, Vol. 3, N. 6,1975

Arrow, K., 'Economic Welfare and the Allocation of Resources for Invention', in The Rate and Direction of Inventive Activity, R. Nelson (ed.), Princeton University Press, Princeton, US, 1962.

Davis, L. and K. Kjær, 'Appropriability Strategies by Small Biotech Firms in Medico Valley: Does Location in the Cluster Matter?', The DRUID Summer Conference, Copenhagen, Denmark, June 2003b.

Dahlander, H., 'Appropriating Returns from Open Innovation Processes: A Multiple Case Study of Small Firms in

Open Source Software', mimeo, 2004.

Gupta, V., 'Determinants of Incidence and Modes of Alliance: A Study of the Indian Information Technology Industry', PhD dissertation, Indian Institute of Management, India, 2004.

Hall, B.H. and R.H. Ziedonis, 'The Patent Paradox Revisited: An Empirical Study of Patenting in the US Semiconductor Industry, 1979-1995', *Journal of Economics*, Vol. 32, N. 1: 101-128, 2001.

ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

तरन्नुम खान (शोध छात्रा)
संस्कृत पालि एवं प्राकृत विभाग रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भासकालीन समाज में पर्दा प्रथा, स्त्री स्वतंत्रता तथा नारी सम्मान

महाकवि भास को उपलब्ध संस्कृत साहित्य के प्रथम नाटककार होने का गौरव प्राप्त है महाकवि भास का समय ई.पू. चौथी शाताब्दी माना जाता है। भास की रचनाओं में उस काल की नारियों का पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि विभिन्न स्थितियों में वर्णन प्राप्त होता है।

विवाहिताओं के लिये पर्दा प्रथा– भासकालीन समाज में पर्दा प्रथा विद्यमान थी। राजपरिवारों में विवाहित स्त्रियों के लिये अवगुण्ठन अनिवार्य था। जब वे महल से बाहर जाती थीं तो घूंघट लिया करती थीं। बिना अवगुण्ठन के इन स्त्रियों को देखना दोषयुक्त माना जाता था, किंतु कुछ परिस्थितियों में उनका अवगुण्ठन में रहना अनिवार्य नहीं था। यज्ञ, विवाह, आपत्ति या संकट तथा वन में स्त्रियाँ बिना अवगुण्ठन के रहती थी और इस स्थिति में दूसरे लोगों के द्वारा इन्हें देखना दोषरहित या निर्दोष माना जाता था। वनगमन में समय सीता अवगुण्ठन में रहती है तब राम उन्हें घूंघट हटाने के लिये कहते हैं–

''स्वरै हि पश्यन्तु कलत्रमेतद् वाष्पाकुलाक्षैर्वदनैर्भवन्तः।
निर्दोषदृश्या हि भवन्ति नार्यो यज्ञे विवाहे व्यसने च।।''1

कौशल्या, सुमित्रा तथा कैकेयी आदि रनिवास जब दशरथ की प्रतिमा के दर्शन के लिये नगर से बाहर बने प्रतिमा गृह में आती हैं तब इन सब महारानियों के घूंघट लेने का उल्लेख मिलता है?2 महारानियाँ, काञ्चुकीय आदि अनुचर वर्ग के साथ बाहर विहार या देवता दर्शन आदि के लिये जवनिका से आवृत्त प्रवहण या पालिका में जाया करती थीं। 3 स्वप्नवासवदत्तम् में वासवदत्ता, उदयन आदि के समक्ष अवगुण्ठनवती होकर जाती है। वासवदत्ता की धात्री वसुंधरा, वासवदत्ता को पहचान लेती है। तब राजा उदयन, वासवदत्ता का घूंघट हटाने का आदेश देता है और वासवदत्ता पहचानी जाती है–

राजा–भवतु, पश्यामस्तावद् रूपसादृश्यम्। संक्षिप्यतां जवनिका।4

स्त्रियाँ बाहर जाते समय की अवगुण्ठन लिया करती थी, किन्तु राजमहल के अंदर परिवार के सदस्यों के समक्ष अवगुण्ठन में नहीं रहती थीं। पर्दा प्रथा के पालनार्थ सर्वसाधारण के समक्ष न आने वाली अन्तः पुर की स्त्रियाँ कभी–कभी पर्दे का त्याग कर देती थीं। उरूभम् में दुर्योधन के घायल होने का समाचार सुनकर उनकी पत्नियाँ व्याकुलता के कारण बिना अवगुण्ठन के रणक्षेत्र तक चली आती है जिन्हें बिना अवगुण्ठन के रणक्षेत्र में देखकर दुर्योधन को बहुत कष्ट होता है–

.... यन्मे प्रकाशीकृतमूर्धजानि रणं प्रविष्टान्यवरोधनानि।।5

अवगुण्ठन के अतिरिक्त राजपरिवार की विवाहित महिलाएँ परपुरूष का दर्शन नहीं करती थीं। यहाँ तक कि उनके लिये परपुरूष का वर्णन सुनना भी अनुचित माना जाता था।

जब कौशल्या आदि महारानियाँ प्रतिमागृह में प्रवेश करने वाली होती हैं तब सुमंत्र अंदर किसी युवा राजकुमार को देखकर उन्हें अंदर आने के लिये मना करते हैं, 6 किंतु जब पुजारी संमुत्र से कहते हैं कि यह कोई और नहीं कुमार भरत हैं। तब परपुरूष के न होने की पुष्टि हो जाने पर महारानियाँ प्रतिमागृह के अंदर प्रवेश करती हैं। उस समय भी वह अपने चेहरे पर घूंघट डाले हुये रहती हैं जब भरत सुमंत्र से अपनी माताओं की दशा पूछते हैं तब वे अपना घूंघट हटाकर भरत से मिलती हैं?

स्वप्नवासवदत्तम् में वासवदत्ता परपुरूष का दर्शन नहीं करती है।8 तथा पद्मावती, वासवदत्ता के इस कार्य में उसकी सहायता करती है– पद्मावती– अम्मो। परपुरूषदर्शन परिहरत्यार्या। भवतु, सुपरिपालनीयः खलु मन्नयासः।9 वासवदत्ता परपुरूष का वर्णन सुनना भी अनुचित मानती है। 10 रानियों के अन्तःपुर में अन्य पुरूष का प्रवेश निषेध था। काञ्चुकीय जैसे विश्वासपात्र तथा वयोवृद्ध सेवक अन्तःपुर में प्रवेश कर सकते थे। 11 अन्तःपुर के द्वारा पर प्रतीहारी उपस्थित रहती थी जो लोगों के आने पर सर्वप्रथम उनसे मिलती थी। तत्पश्चात् अन्तःपुर के अंदर जाकर महारानियों को सूचित करती तथा उनकी आज्ञा से आगन्तुक को अंदर लाती थी।12 इस प्रकार राजपरिवार की विवाहित नारियों के लिये पर्दा प्रथा प्रचलित थी। वे अवगुण्ठन लेकर बाहर जाया करती थीं अथवा जनसामान्य के सामने आती थीं। अवगुण्ठन के साथ–साथ वे परपुरूष का दर्शन भी नहीं करती थीं।

राजकन्याओं के लिये पर्दा प्रथा– भासकालीन समाज में राजकन्याओं के लिये अवगुण्ठन की व्यवस्था नहीं थी और न ही उनके लिये परपुरूष दर्शन का निषेध था। भास ने प्रतिज्ञायौगन्धरायण में कन्या दर्शन को निर्दोष बताया है– कन्यका दर्शनं निर्दोषमिति। 13 इसीलिए जब राजकुमारी वासवदत्ता यक्षिणी के मंदिर जाती है तब कन्या दर्शन को निर्दोष जानकर ही यात्री पालकी के पर्दे को हटा देती है और जब पालकी कारागार के द्वारा के सामने से निकलती है तब कारागार के द्वारा पर खड़ा उदयन बिना आवृत्त पालकी में बैठी वासवदत्ता को भली प्रकार से देख लेता है। 14

राजकन्यायें पुरूष आचार्यों से शिक्षा ग्रहण करती थी। वासवदत्ता की माता अंगारवती वासवदत्ता के लिये एक वीणा आचार्य को नियुक्त करना चाहती है। बाद में महासेन और अंगारवती उदयन को वासवदत्ता का वीणा आचार्य नियुक्त करते हैं।15 अतः राजकन्याऐं पुरूषों से शिक्षा भी ग्रहण करती थीं। प्रतिज्ञायौगन्धरायण में वासवदत्ता विवाह से पूर्व अवगुण्ठन में नहीं रहती है। वह जनसामान्य के बीच अपनी हथिनी पर सवार होकर जकक्रीड़ा के लिये जाती है।16

इसी प्रकार राजकुमारी पद्मावती भी बिना अवगुण्ठन के तपोवन में जाती है और वहाँ तपस्विजनों को तपोवनोपयोगी सामग्री को लेने पर निमंत्रण देती है। 17 साथ ही पद्मावती परपुरूष दर्शन का निषेध नहीं करती है। परिव्राजक वेशधारी यौगन्धराण राजकुमारी पद्मातवी के समक्ष आवन्तिका को न्यास रूप रखने की याचना करता है तथा पद्मावती उसकी याचना की स्वीकृति देती है। 18

यद्यपि राजकन्याओं के लिये अवगुण्ठन की अनिवार्यता नहीं थी तथा उन्हें बाहर आने जाने की स्वतंत्रता प्राप्त थीं, किन्तु फिर भी राजकन्याओं को परपुरूष संपर्क से

दूर रखने का प्रयास किया जाता था। पंचरात्रम् में राजा विराट को बृहन्नला के रूप में अन्तःपुरू में निवास किये हुए अर्जुन के उत्तरा के साथ संबंधों पर संदेह होता है– 'उत्तरासन्निकर्षस्तु मां बाधते।'19

में राजा विराट की बृहन्नला के रूप में अन्तःपुर में निवास किये हुए अर्जुन के उत्तरा के साथ संबंधों पर संदेह होता है– 'उत्तरासन्निकर्षस्तु मां बाधते।'19

राजकन्याऐं एकांत में परपुरूष से नहीं मिल सकतीं थीं। इसीलिए कुरंगी अविमारक से चोरी–छिपे कन्यान्तःपुर में मिलती है।20

इस प्रकार विवाह के पूर्व राजकन्याओं के लिये अवगुण्ठन या पर्दा अनिवार्य नहीं था और न ही उनके द्वारा परपुरूष के दर्शन में कोई दोष था, किन्तु विवाह के पश्चात् उनके लिये पर्दा प्रथा का अनुपालन करना अत्यावश्यक था। जिस प्रकार वासवदत्ता प्रतिज्ञायौगन्धरायण में विवाह के पूर्व कुमार्यावस्था में पर्दे में नहीं रहती है, किन्तु विवाह के पश्चात् स्वप्नवासवदत्तम् में वह सर्वसाधारण के समक्ष अवगुण्ठन में जाती है और परपुरूष का दर्शन नहीं करती है।

निम्नवर्ग की कन्याओं के लिये पर्दा प्रथा– भास के समय निम्नवर्ग की कन्याओं के लिये न तो अवगुण्ठन आवश्यक था और न ही उन्हें पर पुरूष के संपर्क से रोका जाता था। इन कन्याओं के सर्वसाधारण के समक्ष आने में कोई मनाही नहीं थी। वे सार्वजनिक उत्सवों में पुरूषों के साथ भाग लिया करती थीं। पंचरात्रम् में राजा विराट के जन्मोत्सव समारोह में गोपकन्याओं के भाग लेने तथा गोप युवकों के साथ नाच–गाकर आनंद मनाने का उल्लेख आया है। 21 बालचरितम् में युवक–युवतियाँ समाराहे में एक साथ भाग लेते हुये हल्लीसक नृत्य करते हैं। 22

गणिकाओं के लिये पर्दा प्रथा– यद्यपि गणिकाएँ प्रकाश नारी कहलाती थीं, किंतु उनके बाहर जाते समय अवगुण्ठन लेने का उल्लेख आया है। गणिका वसंतसेना को प्रवहण में बैठकर शकार के पास जाने हेतु घूंघट करने का निर्देश आया है। 23

दासियों के लिये पर्दा प्रथा– दासियों के लिये पर्दा प्रथा का प्रावधान नहीं था। अविमारक की चेरी का नगर भ्रमण के लिये जाना इस बात की पुष्टि करता है।24

स्त्री स्वतंत्रता तथा नारी सम्मान– भासकालीन समाज में पर्दा प्रथा विद्यमान थी, किन्तु ऐसा नहीं है कि पर्दा प्रथा होने से स्त्रियाँ परतंत्र थीं उनकी स्थिति निम्न थी या उन्हें सम्मान प्राप्त नहीं था। भासकालीन समाज में स्त्रियों को पर्याप्त सम्मान दिया जाता था। स्त्रियों के प्रति समाज में निम्म या दोगली सोच नहीं थी। वधू को पुत्री के समान स्नेह व आदर दिया जाता था 25 वहीं देवरों के द्वारा अपनी भाभी को माँ के समान सम्मान व स्नेह दिया जाता था। भाभी का अपने देवरों से स्नहेपूर्ण बातें करना, 26 ससुराल में मायके के समान प्रदत्त स्वतंत्र वातावरण को दर्शाता है। स्त्रियाँ परिवार में प्रसन्न रहती थीं। वे हँसती खेलती थीं। उन्हें बाजार आने जाने की स्वतंत्रता थी। 27

पर्दा प्रथा होने पर भी रानियाँ सार्वजनिक उत्सवों में अपने पति के साथ भाग लिया करती थी। पंचरात्रम् में दुर्योधन के द्वारा यज्ञ के आयोजन पर समस्त राजाओं का अपनी पत्नियों के साथ यज्ञ में सम्मिलित होने का उल्लेख आया है–

''सर्वेरन्तः पुरैः सार्ध प्रीत्या प्राप्तेषु राजसु।
यज्ञो दुर्योधनस्यैष कुरूराजस्य वर्तते।।'' 28

एक तथ्य यह भी है कि राजमहलों की नारियों का जनसामान्य के द्वारा बहुत अधिक सम्मान किया जाता था और उस समय सम्मान को प्रदर्शित करने के लिये सर्वसाधारण द्वारा उन्हें देखा नहीं जाता था। इस बात की पुष्टि राम के उस कथन से हो जाती है जहाँ वह पुरवासियों को सीता को निःशंक भाव से देखने के लिये कहते हैं। 29 अतः जनसामान्य के सम्मान के कारण ही संभवतः राजपरिवार की नारियाँ अवगुण्ठन लेती थी। उदाहरण स्वरूप वर्तमान में भी गाँवों में बहुऐं अपने श्वसुर के समक्ष घूंघट में ही जाती हैं। तथा श्वसुर द्वारा उनका चेहरा नहीं देखा जाता है। यह उनके प्रति सम्मान प्रकट करने का एक तरीका है।

इसी प्रकार अन्तः पुरी की कड़ी सुरक्षा तथा नियमों के पीछे स्त्रियों की सुरक्षा का भाव ही सर्वप्रमुख है क्योंकि स्त्रियाँ शारीरिक रूप से पुरूषों की अपेक्षा दुर्बल होती हैं और अपनी सुरक्षा नहीं कर पाती हैं कदाचित इसीलिए उन्हें रक्षणीया मानकर उनकी सुरक्षा के लिये अन्तःपुर में रक्षकों को नियुक्त किया जाता था। 30 अतः राजकुल की स्त्रियाँ अन्तःपुर में बंद नहीं रहती थीं, बल्कि वे स्वतंत्रतापूर्वक बाहर आ जा सकती थीं।

नारी का समाज में आदरणीय स्थान था। एक नारी के वचन की प्रतिबद्धता को पूर्ण करने के लिये ही दशरथ को राम का राज्याभिषेक रूकवाना पड़ा। 31 इतनी बड़ी घटनाओं के नेपथ्य में एक नारी के वचन को पूरा करने का ही संकल्प था तथा एक स्त्री की आज्ञा को शिरोधार्य कर राम चौदह वर्ष के वनवास को गये थे।32 एक स्त्री की रक्षा के लिये ही राम ने रावण का वध किया था। 33 अतः प्रस्तुत घटनाऐं तत्कालीन समाज में नारी के गौरवमयी स्थान को दर्शाती है। यदि समाज में नारी का इतना अधिक सम्मान नहीं होता तो उसको दिये वचन की लाज भी नहीं रखी जाती और न ही उनकी आज्ञा मानी जाती।

महाकवि भास की विस्तृत सोच तत्कालीन वातावरण में विद्यमान नारी सम्मान व नारी का आदर्श मानने वाली भावना को दर्शाती है। भास ने तो एक नारी के विषय में सदियों से चली आ रही परम्परागत उस सोच को बदलने का प्रयास किया जो मूल स्त्रोत रामायण में भी नहीं है। अतः यह उस समय के वातावरण का ही प्रभाव है। भास ने नारी को सम्मान देने के लिये प्रतिमानाटक के कथानक में ऋषि शाप की पूर्णता के लिये कैकेयी द्वारा विवाह शुल्क की याचना करायी। भरत के ननिहाल में रहने को करण बताकर राम का वनवास मँगवाया और मानसिक असंतुलन को कारण दर्शाकर चौदह दिन के स्थान पर चौदह वर्ष वनवास बताकर कैकेयी के निर्दोष सिद्ध करने का प्रयास किया। 34 कैकेयी के प्रति यह नई सोच, उस समाज में नारी सम्मान को दर्शाती है जिससे प्रेरित होकर महाकवि भास ने नारी से जुड़ी बुराई का बड़ी सहृदयता के साथ परिष्कार किया है।

स्त्रियों को रक्षणीय मानकर उनकी रक्षा की जाती थी चारूदत्त राजश्यालक शकार से त्रस्त वंसतसेना को अपने घर में शरण देता है। वसंतसेना को अपने घर संरक्षण देने के कारण शकार चारूदत्त को वसंतसेना को घर से बाहर निकाल देने का संदेश भेजता है। अन्यथा उससे मरणान्तिक बैर की धमकी देता है, किन्तु चारूदत्त शकार की धमकी से नहीं

डरता है। वह घर आयी वसंतसेना की रक्षा करता है। इसके पश्चात् चारूदत्त वसंतसेना को उसके घर सुरक्षित भेजने के लिए विदूषक को साथ भेजता है।35

परिवार में नारी की निर्णय में भागीदारिता थी यद्यपि परिवार का मुखिया पुरूष होता था तथापि नारी का भी परिवार में महत्वपूर्ण स्थान था। निर्णय लेने से पूर्व पति पत्नी से परामर्श लिया करते थे। 36 दशरथ के द्वारा अपना निर्णय सुना देने के पश्चात् कैकेयी के कारण उन्हें अपना निर्णय वापिस लेना पड़ता है। 37 राम के वनगमन पर सीता राम के रोकने पर भी नहीं रूकती है और उनके साथ वन जाती है। 38 इस प्रकार भासकालीन नारियों की निर्णय में सहभागिता थी।

समाज में नारियों के प्रति पुरूषों के ह्रद्य में आदर व सम्मान का भाव था। अच्छे चरित्र की स्त्रियों का सम्मान किया जाता था। वसंतसेना के जन्म से गणिका होने पर अपने उदात्त चरित्र के कारण वह सभी से सम्मान पाती है। स्त्रियों के साथ सभ्य व्यवहार किया जाता था। जब चारूदत्त वंसतसेना को धोखे में परिचारिका समझ लेता है त बवह अपने इस व्यवहार के लिये वसंतसेना से क्षमा माँगता है। 39 नारी के द्वारा दी गई धरोहर को महत्वपूर्ण व संरक्षणीय माना जाता था। धरोहर के चोरी हो जाने पर उसके बदले बहुमूल्य मुक्तावली प्रेषित करना। 40 नारी के अत्यंत महत्वपूर्ण व सम्मानीय स्थान को सूचित करता है।

दूतवाक्यम् में श्रीकृष्ण द्रौपदी के चीरहरण के दृश्य वाले चित्रफलक को देखकर खिन्न होते हैं और दुर्योधन से कहते है कि कुल की वधुओं के अपमान से प्रसन्न होना दुर्योधन की निरी मूर्खता है। 41 वधुओं के हाथ से स्पर्श किया हुआ रक्षा सूत्र तत्कालीन समाज में स्त्री की महत्ता को दर्शाता है। 42

प्रत्येक काल में विभिन्न समाजों में कुछ न कुछ प्रथाऐं प्रचलित रहती हैं जिनका पालन समाज के व्यक्तियों के द्वारा किया जाना आवश्यक होता था। अतः पर्दा प्रथा भी तत्कालीन समाज का एक रिवाज स्परूप प्रतीत होती है जिससे नारी सम्मान को ठेस पहुँचती है और न ही इससे नारी बंधन में जकड़ी हुयी दिखायी देती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पर्दा प्रथा की विद्यमानता से नारी सम्मान को आंच नहीं आती है। अवगुण्ठन तत्कालीन समाज में एक आदर्श का प्रतीक था जो विवाहित महिलाओं की विनम्रता, कुल की मर्यादा तथा लज्जा को प्रदार्शित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भासनाटकचक्र– प्रतिमानाटक– 1/29, पृष्ठ संख्या 55, चौखम्बा विद्या भवन वाराणसी, संस्करण 2002
2. वही, तृतीय अंक, पृष्ठ संख्या 100
3. वही, प्रतिज्ञायौगन्धरायण– तृतीय अंक, पृष्ठ संख्या 93–94
4. वही, स्वप्नवासवदत्तम्– षष्ठ अंक, पृष्ठ संख्या 164
5. वही, उरूभंगम् 1/38 पृष्ठ संख्या 34
6. वही, प्रतिमानाटक–तृतीय अंक, पृष्ठ संख्या 108
7. वही, पृष्ठ संख्या 110
8. स्वप्नवासवदत्तम्–प्रथम अंक, पृष्ठ संख्या 34
9. वही, पृष्ठ संख्या 35

10. वही, तृतीय अंक, पृष्ठ संख्या 66
11. वही, प्रतिमानाटक–प्रथम अंक, पृष्ठ संख्या 37
12. वही, पृष्ठ संख्या 188
13. वही, प्रतिज्ञायौगन्धरायण–तृतीय अंक, पृष्ठ संख्या 93
14. वही, पृष्ठ संख्या 93–94
15. वही, द्वितीय अंक, पृष्ठ संख्या 53, चतुर्थ अंक, पृष्ठ संख्या 124, स्वप्नवासवदत्तम् षष्ठ अंक, पृष्ठ संख्या 154
16. वही, प्रतिज्ञायौगन्धराण, पृष्ठ संख्या 102,105
17. वही, स्वप्नवासवदत्तम्, प्रथम अंक, पृष्ठ संख्या 22–23
18. वही, पृष्ठ संख्या 24–25
19. वही, पंचरात्रम्, द्वितीय अंक, पृष्ठ संख्या 107
20. अविमारक– चतुर्थ अंक, पृष्ठ संख्या 88–89
21. वही, पंचरात्रम्, द्वितीय अंक, पृष्ठ संख्या 51,53 बालचरितम् तृतीय अंक पृष्ठ संख्या 59
22. वही, बालचरित्रम्–तृतीय अंक, पृष्ठ संख्या 59
23. वही, चारूदत्त–चतुर्थ अंक, पृष्ठ संख्या 89
24. वही, अविमारक–द्वितीय अंक, पृष्ठ संख्या 27
25. वही, प्रतिमानाटक–द्वितीय अंक, पृष्ठ संख्या 63,74,76
26. वही, चतुर्थ अंक, पृष्ठ संख्या 136,140,147
27. वहीं, प्रथम अंक, पृष्ठ संख्या 20,23,34, तृतीय अंक, 107, सप्तम अंक, पृष्ठ संख्या 204
28. वहीं, पंचरात्रम् 1/2 पृष्ठ संख्या 3
29. वही, प्रतिमानाटक–प्रथम अंक, पृष्ठ संख्या 55
30. वही, अविमारक, द्वितीय अंक, पृष्ठ संख्या 43, तृतीय अंक, पृष्ठ संख्या 63
31. वही, प्रतिमानाटक प्रथम अंक, पृष्ठ संख्या 31
32. वही, पृष्ठ संख्या 49
33. वहीं, सप्तम अंक, पृष्ठ संख्या 198, अभिषेक नाटक, षष्ठम अंक, पृष्ठ संख्या 102
34. वही, प्रतिमानाटक षष्ठम अंक, पृष्ठ संख्या 192–194
35. चारूदत्त, प्रथम अंक, पृष्ठ संख्या 39, पृष्ठ संख्या 37, प्रथम अंक, पृष्ठ संख्या 43
36. वही
37. वही, द्वितीय अंक, पृष्ठ संख्या 80
38. वही, प्रथम अंक, पृष्ठ संख्या 50
39. वही, पृष्ठ संख्या 40
40. वही, पृष्ठ संख्या 42, तृतीय अंक, पृष्ठ संख्या 87
41. वही, दूतवाक्यम्, पृष्ठ संख्या 20
42. वही, प्रतिज्ञायौगन्धरायण–प्रथम अंक, पृष्ठ संख्या 10

सूर्या वर्मा (शोध छात्रा)

बैगा–जनजाति की शिक्षा में आने वाली कठिनाईयाँ

भारत की जनसंख्या का एक बड़ा भाग शहरी एवं ग्रामीण सभ्यता से दूर जंगलों, पर्वतों, घाटियों तथा दुर्गम स्थानों में निवासित हैं। जिसकी आर्थिक, सामजिक, शैक्षणिक, राजनीजि स्थिति आज भी अन्य विकसित समुदायों की तुलना में अत्यंत पिछड़ी हुई हैं। इस समुदाय को 'आदिवासी, 'वनवासी' तथा 'वनपुत्र' तथा संवैधानिक शब्दावली में 'अनुसूचित–जनजाति' के नाम से जाना जाता हैं।

' अध्ययन क्षेत्र डिण्डौरी जिला का विकासखण्ड समनापुर की जनसंख्या 4,259 हैं जिसमें पुरूष जनसंख्या 2,133 एवं महिलाओं की जनसंख्या 2.126 हैं जिसमें शिक्षित बैगा जनसंख्या मात्र 140 हैं जो इनकी शिक्षा के प्रति उदासीनता का सूचक हैं।[2]

चूँकि इन जनजातियों की अपनी विशिष्ट संस्कृति कला, रीति–रिवाज, धर्म परंपराये, भोजन, आवास, भाषा, साहित्य चिकित्सा–पद्यति, मृतक–संस्कार आदि हैं अतः इस दृष्टि से मध्य–प्रदेश भारत का सबसे बड़ा जनजातिय समूह हैं।

मध्यप्रदेश में छत्सीसगढ़ सहित 46 अनुसूचित जनजातियाँ की पहचान की गई हैं जिसमें गोंड सबसे बड़ी जनजाति हैं। इसके आलावा बैगा अगरिया, सहारिया, पहाड़ी कोरबा, भारिया, बिरहोर, आबूझमाडिया आदि को 'विशेष पिछड़ी जनजातियों' की श्रेणी में रखा गया हैं।[3] 'दी शेड्यूल एरिया एण्ड ट्राईबन कमीशन' ने इन जनजातियों को चार वर्गों में बांटा है, इसमें से सबसे अविकसित जनजातियों के क्षेत्र में 'शेड्यूल एरिया' का 'अनुसूचित–क्षेत्र' कहा जाता हैं। मध्यप्रदेश में सात विशेष पिछड़ी जनजातियाँ हैं इनका रहन–सहन, खानपान, स्थिति, शिक्षा का प्रतिशत, जनजातियों के प्रादेशिक औसत से कम है। इसका प्रमुख कारण आधुनिक–शिक्षा–प्रणाली के प्रति उदासीनता एवं पैतृक–शिक्षा (धर्नुरविधा, चिकित्सा पद्यति) के प्रति अपनत्व की भावना तथा जागरूकता का आभाव हैं। इस कारण भारत–सरकार ने इन्हें विशेष जनजातियों के उपवर्ग में रखा गया हैं एवं बैगा आदिम–जनजाति को राष्ट्रीय मानव घोषित किया गया हैं। ये उपवर्ग निम्नलिखित हैं।[4]

तालिका

मध्यप्रदेश की विशेष पिछड़ी जनजाति एवं निवास क्षेत्र

क्र.	विशेष पिछड़ी जनजाति	मुख्य निवास क्षेत्र
1.	बैगा	बैगाचक, डिण्डौरी जिला, मंडला जिला
2.	भरिया	पातालकोट क्षेत्र, छिंदवाड़ा जिला
3.	कोरबा	हिलकोरवा
4.	कमार	मुख्यरूप से रायपुर
5.	आबूझमाड़िया	बस्तर जिला
6.	बिरहोर	छत्तीसगढ़

स्त्रोतः शोधप्रबंध ''मध्यप्रदेश की बैगा जनजाति की सामाजिक, सांस्कृतिक पारिस्थिकीय परिवर्तन एवं सामंजस्य की समस्याए'', 2002

अतः पंडित जवाहर लाल नेहरू ने भी आदिवासियों के विकास हेतु कुछ सिद्धांत प्रतिपादित किये जो निम्नलिखित हैः–

1. जनजातियों को अपनी प्रतिभा के अनुरूप विकसित होने देना चाहिये उन पर कुछ भी थोपना नहीं चाहिये। हमें उनकी संस्कृति को प्रोत्साहित करने का प्रयत्न करना चाहिये।
2. हमें प्रशासन एवं विकास कार्यों के लिए स्वयं के लोगों के दलों को प्रशिक्षित एवं तैयार करना चाहिये। प्रारंभ में निश्चित ही कुछ कार्यकर्ता बाहर से लेने होगे लेकिन जनजातीय क्षेत्रों में बाहर के लोगों के प्रवेश से बचना चाहिये।
3. जनजाति में समूहों के कृषि, भूमि, वन, शिक्षा संबंधी अधिकारों का ध्यान रखना चाहिये।
4. अज्ञान, शोषण, गरीबी और पिछड़ापन का मुख्य रूप से कारण अशिक्षित, होना हैं अतः शिक्षा ही एकमात्र साधन हैं, जिसके द्वारा अनुसूचित जनजाति की उन्नति संभव हैं। शिक्षा के द्वारा ही हमें इनमें आत्मसम्मान, आत्मविश्वास एवं सृजन की नयी शक्ति जागृत कर सकते हैं। अतः शिक्षा ही परिवर्तन ला सकेगी और इन्हें इस योग्य बना सकगी कि वे भारतीय समाज में अपना विशिष्ट स्थान बना सकें।

अंत में निष्कर्षतः हम कहे कि, ''अशिक्षित आदिवासी बैगा उन्नति के अवसरों का लाभ नहीं उठा पा रहे है तो अतिश्योक्ति न होगी। यह स्थिति आदिवासी–जनजाति बैगा के संदर्भ में विशेष रूप से देखी जा सकती है। क्योंकि वे आज भी पिछड़े शोषित, अशिक्षा के अंधकार में भटकते हुये समाज से अलग हो गये हैं। परिणामतः स्वतंत्रता पश्चात् विकास के जो अवसर है उनका पूरा लाभ उनतक पहुँचने के मामले में शासन ने अपनी तरफ से कोई प्रयास नहीं छोड़ा लेकिन अथक प्रयास के बावजूद भी वे निरक्षर क्यों हैं? इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त न हो सका।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद के अनुसार ''राज्य शासन की यह जिम्मेदारी हैं कि कमजोर वर्ग विशेषकर आदिवासी की शिक्षा से संबंधित गतिविधियों में तेजी से विस्तार करें।'' इसके लिए आदिम जाति–कल्याण विभाग का गठन किया गया है, जो उनकी शैक्षणिक गतिविधियों का संचालन करता है।

तलिका 1.1

विभाग द्वारा संचालित शैक्षणिक–संस्थाएँ (जिला–डिण्डौरी)

क्र.	विकास खण्ड का नाम	प्राथमिक शाला		माध्यमिक शाला		हाईस्कूल		उ.मा.वि.		कन्या परिसर	एकलव्य आवासीय विद्यालय
		बालक	कन्या	बालक	कन्या	बालक	कन्या	बालक	कन्या		
1.	डिण्डौरी	165	04	68	01	06	01	07	–	01	01
2.	अमरपुर	111	06	34	02	06	02	02	–	–	–
3.	समनापुर	114	05	39	02	04	–	03	01	–	–
4.	करंजिया	138	–	33	02	07	01	01	–	–	–
5.	बजाग	86	18	44	02	07	–	03	01	–	–
6.	शहपुरा	164	13	74	07	11	02	04	01	–	–

7.	मेंहदवानी	108	01	44	01	06	01	02	–	–	–
योग		886	47	336	17	50	07	25	03	01	01
कुल योग		993		353		57		28		1	1

स्त्रोंतः सहायक आयुक्त, आदिवासी विकास डिण्डौरी, जिला–डिण्डौरी (म.प्र.)

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि जिला डिण्डौंरी में कुल 933 प्राथमिक शाला हैं, जिसमें शोध अध्ययन क्षेत्र विकासखण्ड समनापुर में 114 बालक एवं मात्र 05 कन्या हैं, कुल 353 माध्यमिक शाला है जिसमें 39 बालक एवं मात्र 02 कन्या व कुल 57 हाईस्कूल है जिसमें 04 बालक हैं जबकि कन्या एक भी नहीं है, कुल 28 उ.मा. विद्यालय है जिसमें 03 बालक, 01 कन्या है। कन्या शिक्षा परिसर व एकलव्य आवासीय विद्यालय 01–01 हैं।

अनुसूचित–जनजातियों को अन्य लोगों की बराबरी में लाने के लिए आदिवासी–क्षेत्रों में शालायें खोली गयी हैं, भवनों का निर्माण किया गया हैं तथा विशेष वित्तीय आवंटन किया गया हैं तथा आश्रम शालायें, आवासीय विद्यालय खाले गये हैं। आंगनबाड़ी, औपचारिक–शिक्षा तथा प्रौढ़–शिक्षा पर विशेष बल एवं शिक्षा का अधिकार भी दिया गया है।

अतः इन सब प्रयासों के बावजूद मध्यप्रदेश के जिला डिण्डौरी में आदिवासी आदिमजाति बैगा की शिक्षा में भागीदारी एवं उनका शिक्षा का स्तर भी कम क्यों है? यह जानने के लिए शोधार्थी द्वारा शोधविषय ''बैंगा जनजाति की शिक्षा में आने वालल कठिनाईयाँः एक अध्ययन'' का अध्ययन किया जा रहा हैं।

1.1 जनजाति का अर्थ एवं परिभाषाएँः

जनजाति का अर्थः– जनजाति निश्चित भू–भाग पर निवास करती हैं। जिसकी अपनी भाषा, संस्कृति, रीतिरिवाज, परंपराये तथा राजनीतिक संगठन होता है तथा ये अंतर्विवाही होते हैं। इनकी प्रमुख परिभाषाऐं निम्नलिखित हैः–[6]

जनजातियों से संबंधित परिभाषाएँः– नृशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों और साहित्यकारों ने अपने–अपने क्षेत्र की आवश्यकताओं के अनुरूप जनजाति संबोधन हेतु शब्दों को चुना है। रिगले लीके और ग्रिग्रसन की दृष्टि में 'एबोरिजनल' तथा 'नेटिव' शब्द अधिक उपयुक्त हैं। हैमनडार्क के लिए 'ट्राइब' शब्द ही पर्याप्त हैं। मार्टिन एवं रिसले ने उन्हें 'आदिवासी' कहा। हट्टन ने 'आदिमजाति' तथा सरवेन्स ने 'वन्यजातियों' की संज्ञा दी हैं, एवं धुरिये ने इन्हें 'अनुसूचित जनजाति' के नाम से संबोधित किया है।

1. हॉबल के अनुसार (2005)ः ''किसी भी जाति का एक सामाजिक समूह होता हैं जो एक विशेष भाषा बोलती हैं तथा जिसकी अपनी विशिष्ट संस्कृति होती हैं, जो इन्हें दूसरे जनजाति समूहों से अलग करती हैं इनका अपना राजनीतिक संगठन होता हैं।''
2. जेकब एवं स्टर्न के अनुसार (2005)ः '' एक ऐसा ग्रामीण समूह जिसकी एक समान भूमि हैं। जिस समुदाय के लोगों का जीवन आर्थिक दृष्टि से दूसरे पर निर्भर हैं जनजाति कहलाता है।''
3. गिलिन एवं गिलिन (2005)ः ''स्थानीय जाति समूहों का एक ऐसा समुदाय जनजाति कहलाता है जो एक समान क्षेत्र में निवास करती हैं तथा जिसकी अपनी एक सामान्य संस्कृति हैं।''

4. मजूमदार (2005): परिवार एवं परिवार वर्गो का एक ऐसा समूह जिसका एक सामान्य नाम हैं। जिसके सदस्य एक निश्चित भू–भाग पर निवास करते हैं एक सामान्य भाषा का प्रयोग करते हैं। तथा विवाह एवं व्यवसाय के विषय में निषेधाज्ञाओं का पालन करते हैं। जिन्होंने आदान–प्रदान संबंध तथा पारिवारिक कर्तव्य विषयक एक निश्चित व्यवस्था का विकास कर लिया हैं जनजाति कहा जाता हैं, सामान्यतः जनजाति अंतर्विवाही के सिद्धांत का समर्थन करती है तथा उसके सभी सदस्य अपने ही जाति के अंतर्गत विवाह करते हैं।''
5. इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया (2005) : '' एक जनजाति सामान्य नाम धारण करने वाले परिवारों की संकलन हैं जो एक सामान्य बोली बोलते हैं, एक ही भूखण्ड पर अधिकार करने का दावा करते हैं, अथवा दखल करते हो तथा जो साधारणतः अंतर्विवाही न हो यद्यपि मूल रूप से चाहे जैसे भी रह रहे हो।
6. रॉल्फ पिडिगटन (2005): '' हम एक जनजाति समूह की व्यक्ति के रूप में व्याख्या कर सकते है जो कि समान भाषा बोलते हो। समान भू–भाग में निवास करते हो जिसकी संस्कृति में समरूपता पायी जाती हो।''

तालिका– 1.2 मध्यप्रदेश की विशेष पिछड़ी जनजाति एवं निवास क्षेत्र

क्र.	विशेष पिछड़ी जनजाति	मुख्य निवास क्षेत्र
1.	बालाघाट	बैहर
2.	बस्तर	भानुप्रातपपुर, बीजापुर, दंतेवाड़ा, जगदलपुर, कांकेर, कोंड़ा, गाँवकटा और नारायणपुर
3.	बैतूल	बैतूल भैंसदेही
4.	बिलासपुर	कण्धौंरा
5.	छिंदवाड़ा	अमरवाड़ा, छिंदवाड़ा, लखनादौन
6.	दुर्ग	संजोरी बलोद
7.	मंडला	मंडला, निवास, रामगढ़, डिण्डौंरी
8.	राजगढ़	धर्म, जयगढ़, घरघोड़ा, जश्नपुर नगर खरसिया
9.	सरगुजा	अंबिकापुर, बैंकठपुर, भरतपुर, जनकपुर, मनेन्द्रगढ़, पाल, समरी, सीतापुर

स्त्रोतः बैगा विकास प्राधिकरण, डिण्डौंरी जिला, मध्यप्रदेश

इस प्रशासनिक खण्डों में रहने वाली निम्नांकित जनजातियाँ ही अनुसूचित मानी जाती हैः–

1. आंध्र 2. बैगा 3. मैना 4. भारिया 5. भतरा 6. कोल 7. भील 8. भुजिया 9. बिंझवार 10. बिरहुर 11. धनवार 12. कोंध 13. गदबा 14. गोंड़ 15. हलवा 16. कम्हार 17. कंवर 18. कोरकू 19. कोलाम 20. कोरना 21. मंझवार 22. मंडा 23. नरोटिया 24. उराँव 25. पारधी 26. परजा 27. साँवला 28. संवेद।

1.2 बैगा–जनजातियों की विशेषताएँ:–

जनजातियों की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक संगठन, भाषा, क्षेत्र, विस्तृताकार आदि के आधार पर पहचान की जाती हैं जो निम्नलिखित क्षेत्र, विस्तृताकार आदि के आधार पर पहचान की जाती हैं जो निम्नलिखित हैं, (शर्मा,2006)

1. सामान्य भू–भाग : बैगा–जनजाति एक निश्चित भूमि–भाग में ही निवास करती हैं इसके परिणाम स्वरूप उसका भू–भाग से लगाव एवं उसके समुदायों में दृढ़ सामुदायिक–भावना का विकास हो जाता हैं। सामान्य भू–भाग में रहने के कारण ही सामान्य जीवन की अन्य विशेषताएँ विकसित हो जाती है।
2. सामान्य भाषा : जनजाति के लोग अपने विचारों का आदा–प्रदान करने के लिए एक सामान्य भाषा का प्रयोग करते है, भाषा के माध्यम से ही वह अपनी संस्कृति का हस्तांतरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को करती हैं, किन्तु सभ्यता के संपर्क के कारण बैगा एवं अन्य कई जनजातियाँ द्विभाषी हो गयी है।
3. विस्तृत आकार : बैगा–जनजाति कई परिवारों का संकलन होता हैं इसमें कई वंश, समूह, गोत्र, तथा भ्रातदल होते हैं यही कारण है कि इनकी सदस्य संख्या अन्य क्षेत्रीय समुदायों से अलग है।
4. अंतर्विवाही : बैगा–जनजाति के सदस्य अपनी ही जाति में विवाह करते हैं
5. एक नाम : प्रत्येक बैगा–जनजाति का अपना कोई नाम अवश्य होता है, जिसके द्वारा वह अपनी पहचान बनाता हैं उसके सदस्य अपना परिचय जनजाति के आधार पर ही देते है।
6. सामान्य संस्कृति : बैगा–जनजाति की अपनी विशिष्ट संस्कृति रीतिरिवाज, प्रथाये, लोकाचार, नियम, कला, धर्म साहित्य, चिकित्सा–पद्यति, जादूटोना, नृत्य, संगीत, रहन–सहन, आचार–विचार विश्वास मान्यताएँ होती हैं।
7. आर्थिक आत्मनिर्भरता : बैगा–जनजाति अपनी आर्थिक आवश्यकताओं को स्वयं ही पूरा करने के सक्षम होती है। शिकार, फलफूल एकत्रित करने, पशुचारण एवं कृषि, गृहउद्योग आदि के द्वारा अपनी आवश्यकता की वस्तुएं जनजाति के सदस्य स्वयं ही जुटा लेते है, यद्यपि कभी–कभी वह अपने पड़ौसी समाजो से विनिमय भी करती है।
8. राजनीतिक संगठन : बैगा–जनजाति का अपना निजी राजनीतिक संगठन होता है इसने अधिकांश एक वंशानुगम मुखिया होता है जो परंपराओं का पालन करने, नियंत्रण बनाये रखने, एवं नियमों का उल्लंखन करने वालों के लिए दण्ड का विधान करने की व्यवस्था करता है।

   - राष्ट्रपति द्वारा घोषित आदिवासी को सूची में रखने के लिए अग्रलिखित विशेषताओं को ध्यान में रख गया हैं।[7]

1. जनजाति परिवारों का समूह है।

2. जनजाति की अपनी भाषा है।
3. हर जनजाति की अपनी विशिष्ट संस्कृति होती है।
4. इसका विवरण सुनिश्चित भू–भाग पर होता है।
5. स्वंत्रत सुरक्षात्मक संगठन होता है।
6. गोत्र तथा अंतर्विवाही समूह की विशेषता होती है।
7. जनजाति का उपागम होता है।
8. इनका जीवन स्तर प्राथमिक वनोत्पाद आधारित होता हैं।
9. ये विकास की दृष्टि से पिछड़े होते हैं।
10. इनका निवास स्थान (दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र) दूरस्थ होता है।

1.3 जिला डिंडौरी में आदिम जनजाति बैगा[8] :–

हमारे देश की भौगोलिक–स्थिति की सभ्यता एवं संस्कृति पर गहरा प्रभाव पड़ा हैं। बड़ी–बड़ी नदियाँ, पर्वत, देश को अनेक भागों में बांटने में सहायक हुये है। देश के हृदयस्थल मध्यप्रदेश में बसा डिंडौरी जिला आदिवासी आदिमजाति बाहुल्य जिला हैं इस जिले में प्रमुख रूप से बैगा–जनजाति निवासरत् है जिसे भारत–सरकार द्वारा राष्ट्रीय–मानव घोषित किया गया है। इसके अतिरिक्त कोल, परधान, भूमिया और आगरिया जनजातियाँ है। इस जिले का क्षेत्रफल 6.128 वर्ग कि.मी. है। इसके पश्चिम में जबलपुर, उत्तर में उमरिया शहडोल जिला है, एवं दक्षिण में मंडला जिले से घिरा है। डिंडौरी जिले में वनों की अधिकता हैं। यहाँ की जलवायु समशीतोषण है। जिले के मैदानी–भागों में जनजातियाँ निवास करती है जबकि आदिम–जनजाति बैगा दुर्गम पहाड़ी भागों पर निवासरत् हैं। जिले की कुल जनसंख्या 5,80,730 हैं। इनमें से कुल बैगा–जनजातीय जनसंख्या 43,443 है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत–वर्ष के राज्यों का पुर्नगठन किया गया है। नम्वबर 1956 को मध्यप्रदेश का गठन किया गया। वर्ष 1998 के पूर्व तक मध्यप्रदेश राज्य में 45 जिले थे। वर्ष 1998 में पुनः 16 नये जिले का गठन किया गया। 25 मई 1998 को मंडला जिले से पृथक होकर डिंडौरी जिला अस्तित्व में आया। जिले की पहचान बैगाचक से है जिसमें बैगा आदिम जाति के 52 गांव सम्मिलित हैं जिसमें सर्वाधिक बैगा जनजाति बैगाचक के चाड़ा गांव में है। जिसका विकासखण्ड बजाग है।

मध्यप्रदेश राज्य पुर्नगठन एक्ट 2000 के तहत 1 नम्वबर 2000 को मध्यप्रदेश राज्य का पुर्नगठन किया गया हैं। मध्यप्रदेश के 61 जिलों में से छत्तीसगढ़ अंचल की स्थापना की गई है। तत्पश्चात् वर्ष 2003 में 3 जिले अनूपपुर, अशोकनगर, बुरहानपुर बनाये जाने से साथ अब वर्तमान मध्यप्रदेश में 48 जिले हैं। डिंडौरी जिला मध्यप्रदेश राज्य के दक्षिण–पूर्व सीमा पर स्थित है।

सतपुड़ा श्रेणियों तथा नर्मदा–बेसिन के मध्य नव–निर्मित डिंडौरी–जिला प्राकृतिक–सौंदर्य तथा वनसंपदा से संपन्न किन्तु आर्थिक दृष्टि से अत्यंत पिछड़ा है। यह

जिला भू–मध्यरेखा से $22^0$17 से $23^0$22 उत्तरी अक्षांश तथा $80^0$35 से $80^0$58 पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। समुद्रतल से इसकी ऊँचाई 885 मी.से 1100 मी. हैं। इसका ढाल पूर्व–पश्चिम हैं। जिसमें नर्मदा नदी एवं सहायक नदियाँ खरमेर मचरार, चकरार आदि बहती है। यहाँ पर ग्रीष्मकालीन तापमान सामान्य तथा शीतकालीन हैं। वार्षिक वर्षा 125 से.मी. है। जिले के विभिन्न भागों में काली, पीली, पहाड़ी किस्म की मिट्टी पायी जाती है। जो कंकरीली हैं। यहाँ जलस्तर प्रायः नीचा है।

जिले में 38 प्रतिशत भू–भाग पर सालबीज, महुँआ, आँवला, हर्रा, बहेरा, चिंरौजी, महुलायनपत्ता, शहर, औषधी, जड़ीबूटियाँ वनोपज के रूप में प्राप्त की जाती है। यहाँ करोड़ों वर्षो के फॉसिल्स बिखरे पड़े है यहाँ पुरातात्विक दृष्टि से कुमर्रामठ, लक्ष्मण मडवा, अमोल देवनाला, देवहारगढ़ दर्शनीय स्थल है।

कृषि की दृष्टि से 59 प्रतिशत भू–भाग उपयुक्त है। यहाँ की खेती वर्षा पर निर्भर हैं। अधिकांश भाग भर्रा एवं पथरीला हैं। यहाँ अरहर, चना, मसूर, रामतिल, राई, सरसों, कोदो–कुटकी, मक्का, सावा हैं। यहाँ शक्ति के साधन नगण्य है जिसमें रेत, पत्थर, मिट्टी बॉक्साइड आदि है।

प्रशासनिक दृष्टि से यह 3 विधानसभा क्षेत्रों (शहपुरा, डिंडौरी बजाग) 2 तहसीलों, 7 जनपद, 927 गांव (841 राजस्व गांव, 81 वनग्राम) 364 ग्राम पंचायत, 2 नगर पंचायत, 1 जिला पंचायत तथा 7 विकासखण्ड हैं। जिले की आबादी 5,80,730 है। जो प्रदेश का 0.96 प्रतिशत है। इसमें 50.23 प्रतिशत पुरूष तथा महिला 46.76 प्रतिशत है। जनसंख्या वृद्धिदर (1999–2001) 13.23 प्रतिशत हैं जिसमें जनसंख्या का घनत्व 78 तथा लिंगानुपात 991 है अर्थात् प्रति 1000 पुरूषो पर 983 स्त्रियां है। कुल जनसंख्या का 95.37 ग्रामीण प्रतिशत हैं, जबकि 4.63 प्रतिशत शहरी है।

जिले की साक्षरता 54 प्रतिशत है। इसका मुख्य कारण गरीबी है जो कुल जनसंख्या का 37 प्रतिशत है एवं गरीबी से नीचे जीवनयापन करने वाले 58 प्रतिशत है तथा जन्मदर 28, मृत्युदर 10, शिशु मृत्युदर 96 तथा मावन मृत्यु 5 हजार हैं।

जिले में यातायात का मुख्य साधन सड़के हैं। विकासखण्ड तक के नगर व गांव कच्ची–पक्की सड़कों से जुड़े है तथा आदिवासी अंचल कच्चे मार्ग तथा पगडंडी से जुड़े है। जिले में बड़े उद्योगों का आभाव हैं। यहाँ पर कुटीर एवं लघुउद्योग ही पाये जाते हैं। यहाँ का मुख्य व्यवसाय कृषि, पशुपालन, तथा वनोपज–संग्रहण है। अन्य सहायक धंधे में ईट बनाना, बांस से टोकनियाँ बनाना है, चराई करना, दोना–पत्तल बनाना, कोयला बनाना, लकड़ी एवं लोहे की वस्तुएँ, औजार तैयार करना हैं, तेल निकालना, गिट्टी बनाना, सीमेंट के पाईप लाईन सब्जी उगाना, दुग्ध उत्पादन आदि है।

तालिका 1.3

विकास खंडवार विशेष पिछड़ी जनजातिः ग्राम व जनसंख्या (जिला–डिण्डौरी)

क्र	विकासखण्ड का नाम	ग्राम	जनसंख्या		योग	परिवार
			महिला	पुरूष		
1.	डिण्डौरी	34	1,674	1,595	3,269	801
2.	शहपुरा	19	980	983	1,963	976
3.	करंजिया	23	1,732	1,696	3,428	697
4.	बजाग	23	2,746	2,824	5,570	1,154
5.	मेहंदवानी	37	1,358	1,376	2,734	598
6.	समनापुर	28	2,126	2,133	4,259	920
7.	अमरपुर	38	1,074	1,146	2,220	532

स्त्रोत : बैगा विकास प्राधिकरण, जिला डिण्डौंरी (म.प्र.)

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि शोध अध्ययन क्षेत्र जिला डिण्डौरी के विकासखण्ड समनापुर में कुल 28 गाँव है, इन गांवों में कुल 2,126 महिला एवं 2,133 पुरूष है। जिसका कुल योग जनसंख्या 4,259 है। यहाँ 920 परिवार निवासरत् है।

1.4 आदिम जनजाति बैगा का सामाजिक–जीवनः–

1. उत्पत्ति–[9] बैगाओं की उत्पत्ति के संबंध में कोई प्रमाणिक ऐतिहासिक साक्ष्य प्राप्त नही हैं, फिर भी रसेल एण्ड हीरालाल ने बैगाओं को भूमिया की शाखा माना है। किवदंती के अनुसार ''नागा बैगा और बैगिन, बैगाओं के आदिपुरूष माने जाते है।

एक बैगा धारणा में नागा बैगा तुम्बे में से पैदा हुए। तुम्बे से दो आदमी निकले। पहला नागा बैगा हुआ व दूसरा गोंड। नागा बैगा टंगिया लेकर जंगल काटने चला गया और गोंड ने नागर संभाल लिया।

2. निवास– बैगा मध्यप्रदेश की आदिम संस्कृति संपन्न (Primitive Tribes) जनजाति है। इसका मुख्य निवास जिला डिण्डौरी के बैगाचक के घने जंगलों समनापुर बालाघाट, बिलासपुर, राजनंदगांव तथा अमरकंटक के पहाड़ी अंचलों में है। जिला डिण्डौरी बैगाचक क्षेत्र में कुल 52 गांव है। सबसे बड़ा बैगा संपन्न क्षेत्र चाड़ागांव है जो बजाग विकासखण्ड के अंतर्गत आता है। यहाँ आज भी दुर्गम पहाड़ी क्षेत्र में निवासित बैगा–जनजाति को अपनी आदिम संस्कृति से समामिलन करते हुये देखा जा सकता है। इनके सामाजिक जीवन के अन्य पक्ष है [10] :

1. रहन–सहन :

बैगा–जनजाति के लोगों में सच्चाई, ईमानदारी, सीधापन, प्रसन्नता, निश्चिन्तता आदि विशेषताएं पाई जाती है। इस जनजाति के लोगों का प्रायः रंग सांवला कद ठिगना, नाक चपटी होती हैं ये स्वाभिमानी, आत्मनिर्भर और अल्पभाषी होते है। बैगा स्त्रियों के माथे पर अर्द्ध चन्द्र या त्रिशूल का गुदना गुदवाती हैं। इन गुदने के पीछे ऐसा विश्वास किया जाता है कि मृत्यु होने पर शरीर यही छूट जाता है और गुदने के साथ जाते हैं।

पुरूष लंगोटी या छोटी–धोती पहनते है। छोटा सा कपड़ा पगड़ी के काम लाते हैं। स्त्रियां लंबी धोती पहनती हैं। जिसे ये लोग सैलारी लुगरा कहते है। स्त्रियाँ एल्यूमीनियम एवं पीतल के आभूषण पैरों एवं हाथों में धारण करती हैं। गले में हमले जिसमें चांदी के सिक्के गुंथे और लकड़ी की छोटी कंघी खुची रहती है। स्त्रियां सिर ढंकना आवश्यक नहीं मानती है। इस जनजाति में पर्दाप्रथा नहीं है। नामकरण किसी पेड़ पौधे, पशुपक्षी नदियों दिनों और महीनों आदि के आधार पर रखने की प्रथा है।

2. आवास :

बैगा–जनजाति द्वारा बेबर कास्त (स्थानांतरित कृषि) करने के कारण इनका कारण निवास भी बदलता रहता था। लेकिन आजकल स्थायी कृषि करने लगे है, जिससे इनका निवास स्थायी हो गया है। लकड़ी मिट्टी और बांस के बने इनके घर पहाड़ी ढलान या पर्याप्त कृषि योग्य भूमि के पास होते हैं। मकान के केन्द्रीय हिस्से में अन्न रखने की कोठी होती है। मकान के पास ही पशुओं के लिए एक पृथक स्थान रखा जाता है।

3.भोजन :

बैगा–जनजाति के भोजन के कोदो, कुटकी, मक्का और सांवां का पेय मुख्य होता है जिसे पेज कहते है। दिन में 8–9 बजे भोजन कर लेते है। चावल और ज्वार गेहूँ का उपयोग करने लगे है। रोटी नहीं खाते। इनके भोजन में जंगल वनस्पतियों की मात्रा अधिक होती है जिसे ये भाजी के रूप में उपयोग करते हैं। बरसात के दिनों में नरम बांस जिसे ये लोग करील कहते हैं का प्रयोग एवं पिहरी (मशरूम) एक प्रकार की वनस्पति का उपयोग सब्जी के लिए करते हैं। इस जनजाति की मांस खाने में अधिक रूचि रहती हैं। जंगल से कंद मूल फल प्राप्त करते है। मदिरा पान के शौकीन होते हैं। घर पर ही महुँए की शराब बनाई जाती है। धूम्रपान के लिए चिलम, चोंगी एवं बीड़ी का इस्तेमाल करते है।

4. अर्थव्यवस्था :

बैगा–जनजाति की अर्थव्यवस्था वन और कृषि पर आधारित है। बैगा लोगों में हल चलाना अच्छा नहीं माना जाता है। ऐसी मान्यता है कि बैगा पुरूष हल चलकर अपनी धरती माता का पेट कैसे चीर सकते हैं? परन्तु आजकल बहुत से लोग हल चलाने लगे हैं। इनके

द्वारा पैदा की जाने वाली खरीफ फसलें हैं– मक्का, ज्वार, धान, कोदो, कुटकी, सावा, रमतिला, मडिया, कांग, झुंझरू, राहर, बरबटी, खीरा, उड़द।

डिण्डौरी जिला में बैगा–जनजाति की एक बहुत बड़ी संख्या ''बैगाचक'' में निवास कर रही है। चक का अर्थ झुण्ड या समूह होता हैं बैगा जनजाति के विशाल समूह को देखते हुए इस क्षेत्र को बैगाचक कहा गया हैं चारों तरफ से जंगल पहाड़ों से यह इलाका घिरा हुआ है।

एक लम्बे अर्से से अगम्य वन और पर्वतीय क्षेत्रों में निवास करने के कारण बैगा–जनजाति का संपर्क उन क्षेत्रों में समाप्त हो गया था जो आज आधुनिक सभ्यता और संस्कृति से जुड़ चुके है। सरकार इस जनजाति के व्यक्तियों की सर्वतोन्मुखी उन्नति के लिए कटिबद्ध है एवं विभिन्न प्रकार के विकास कार्यक्रमों में बहुत बड़ी धनराशि खर्च कर रही है। परन्तु वास्तविकता यह है कि विकास कार्यक्रमों को जितनी सफलता मिलनी चाहिए थी उतनी नहीं मिली।

5. विवाह :

बैगा–जनजाति एक विवाही एवं बहु पत्नी विवाह को सामाजिक मान्यता प्राप्त है। ये अपने गोत्र समूह के बाहर विवाह करते हैं। इसमें ममेरे, फुफेरे भाई–बहिनों के विवाह का भी प्रचलन है। विवाह की बात वर पक्ष से आरंभ होती है, कन्या की इच्छा उचित महत्व प्राप्त है। बैगा–जनजाति में सात प्रकार के विवाह पाए जाते हैं– मंगनी विवाह, उधाड़िया विवाह, दूध पलटा विवाह, पैठू विवाह, लमसेना विवाह, चोरी विवाह एवं खडौनी विवाह। इसके अतिरिक्त बैगा जाति में विधवा पुर्नविवाह की प्रथा भी पाई जाती है।

6. देवी देवता :

बैगा–जनजाति बहुदेववादी है। अनष्ठि के भय से हर प्राचीन वस्तु को देवता का पाटमान लेते हैं। देव धामों को यह लोग दो भागों में बांटते हैं। ग्राम देवी–देवता में ठाकुर देव, नारायण देव, खेरमाई, गनपती माता। गृहदेवी, देवताओं में जैसे बूढ़ा देव, बंजारी देव, दूल्हा देव आदि। गांव में एक पंड़ा (गुनिया) और एक मढ़िया होती है। अच्छी फसल की कामना से गुनिया से बीज बोने के पहले 'बिदरी बनाना' एक धार्मिक संस्कार कराया जाता है। कुछ फसलों की प्राप्ति पर भादों के माह में ''नवाखाई'' एक उत्सव मनाया जाता है। जिसमें अपने सभी देवताओं को नये अनाज का भोग अर्पित किया जाता है।

7. मृत्यु होने पर अंतिम संस्कार :

मृतदेह का अग्नि संस्कार किया जाता है चेचक से मरे व्यक्ति को और बच्चों के मरने पर गडाने की प्रथा है। मृतक के घर नौ दिन तक चूल्हा नहीं जलता है। बिरादरी के अन्य लोगों के यहाँ से मृतक के परिवार के लिए भोजन आता है। बुजुर्ग की मृत्यु पर भद्र करते है। तथा परिवार के पुरूष सदस्यों को पगड़ी बांधी जाती है। जिसे ये लोग पगबंधी कहते

हैं। बिरादरी के लोगों एवं रिश्तेदारों का भोजन होता हैं। बैगा–जनजाति में पुर्नजन्म पर विश्वास किया जाता है।

8. मनोरंजन के साधन लोकगीत, लोक नृत्य एवं त्यौहार :

बैगा–जनजाति के पास मनोरंजन के अन्य कोई साधन न होने के कारण लोकगीत एवं लोकनृत्य के माध्यम से सामूहिक तौर पर अपना मनोरंजन करते हैं। बैगा लोगों में मडई और मेले बहुत ही महत्वपूर्ण पर्व होते है। शादी विवाह या अन्य पर्व जैस मडई मेले में भाग लेने आये हुए रिश्तेदारों एवं बिरादरी के लोगों के साथ नृत्यगान किया जाता है। इनमें प्रचलित लोक नृत्य करना है। डिण्डौरी के 'बैगाचक' में प्रचलित इस लोक नृत्य का प्रदर्शन बैगा लोक नृतकों द्वारा भारत के विभिन्न भागों में किया जा चुका है। इनके लोक गीतों एवं लोक नृत्यों में स्वाभविकता और सरलता होती है। लोकगीतों में जीवन का जितना सच्चा और स्वाभाविक वर्णन उपलब्ध होता है। उतना अन्यत्र नहीं। वनग्रामों में लोगों का जीवन समस्यापूर्ण होता है। जीवन के दुख और समस्याओं को थोड़े समय के लिये भुलाकर लोकगीतों एंव लोकनृत्यों के माध्यम से अपना मनोरंजन करते हैं एवं उत्साहित व प्रसन्नचित होकर संघर्ष में पुनः जुट जाते हैं। इन लोकगीत लोक नृत्यों एवं उत्सव त्यौहारों के द्वारा समाज के अन्य लोगों के साथ अंतः क्रिया एवं अंतः संबंधों के अवसर प्राप्त होते है साथ ही दूसरों के सुखों से हर्षित और दुखों से द्रवित होते है। सुख–दुख में भागीदारी का अवसर होता है।

1.5 आदिवासियों जनजातियों के लिए संवैधानिक प्रावधान :–

1. भाग–3, अनुच्छेद 29 : ''भारतीय संविधान अल्पसंख्यकों, वंचित वर्गो एवं आदिवासियों के शैक्षिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की रक्षा करेगा।''
2. भाग–4, अनुच्छेद 46 : ''राज्य, वंचित वर्ग आदिवासी, हरिजनों, अलपसंख्यक वर्ग की शिक्षा एवं आर्थिक सहायता करके उनके पूर्ण विकास करने में सहायता देकर आगे बढ़ायेगा।''
3. भाग–12, (ए, अनुच्छेद 275) : '' सरकार द्वारा राज्य सरकार को वहाँ के आदिवासियों की प्रगति के लिए केन्द्रसरकार से आर्थिक मद्द दिलवाना।''
4. अनुच्छेद ए. 339 : ''राष्ट्र, संविधान बनने के 10 वर्ष पूर्व होने तक कभी भी आदिवासी कल्याण की जानकारी प्राप्त कर सकता है।''
5. अनुच्छेद ए. 340 : ''भारत के राष्ट्रपति किसी भी कमीशन की नियुक्त करके आदिवासी एवं पिछड़ें–वर्ग की जानकारी प्राप्त करके उनकी कठिनाईयों को अपने तरीके से दरकर सकता है।''
6. अनुच्छेद 29 (प्रथम) : ''पिछड़े–वर्ग के नागरिकों को अनुसूचित–जाति एवं जनजाति की सामाजिक एवं शैक्षिक उन्नति व प्रगति के लिए विशेष प्रावधान का उपयोग किया गया है।''

7. अनुच्छेद 29 (द्वितीय) : '' कोई भी शैक्षिक संस्था किसी भी नागरिक को शैक्षिक प्रवेश से मना नहीं कर सकता। अपनी जाति धर्म, प्रगति, भाषा, संस्कृति आदि के लिए समाज को अधिकृत किया गया है।''
8. अनुच्छेद 46 : ''राज्य के नीति निदेशक तत्वों के अंतर्गत कहा गया हैं कि शैक्षिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े का विशेष ध्यान रखना, उनकी उन्नति प्रगति करने में सहायता देना तथा अनुसूचित–जाति एवं जनजाति के व्यक्तियों को सामाजिक अन्याय, एवं सभी प्रकार के शोषणों से इनकी रक्षा करना, राज्य का उत्तरदायित्व होगा।''

1.6 कोठरी कमीशन (1964–66) में आदिवासी शिक्षा :–

कोठरी शिक्षा आयोग के अनुसार :– ''शिक्षा के अवसरों की विषमता का एक बहुत बड़ा कारण यह भी हैं कि जनसंख्या को एक बहुत बड़ा भाग निर्धन है।'' पुनः कोठारी शिक्षा आयोग के अनुसार : उन्नत वर्ग और पिछड़े अनुसूचित–जाति और जनजाति के शैक्षिक विकास का अंतर पहले जितना बड़ा ही हैं और कभी–कभी उससे की बड़ा होता है।

- कोठारी आयोग ने शैक्षिक विषमताओं के निराकरण के निम्नलिखित उपाय बताये हैं :

1. विद्यालयों में निर्धन वर्ग के बच्चों पर अधिक ध्यान देना चाहिए।
2. माध्यमिक विद्यालय तथा उच्चतर शिक्षा की संस्था में ''पुस्तक–बैंक'' का कार्यक्रम विकसित किया जाता चाहिए।
3. स्त्रियों की शिक्षा के लिए आवश्यक धन प्राथमिकता के आधार पर दिया जाना चाहिए।
4. अनुसूचित–जनजाति के बच्चों के लिए छात्रावास की योजना संचालित की जानी चाहिए।
5. आदिमजाति क्षेत्र में सरकारी संगठनों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
6. सभी क्षेत्रों तथा सभी स्तरों पर बालिकाओं की शिक्षा की ओर पर्याप्त ध्यान देना आवश्यक है।
7. माध्यमिक विद्यालयों तथा उच्च शिक्षा की संस्थाओं के पुस्तकालयों में पाठ्य–पुस्तके पर्याप्त मात्रा में होनी चाहिए। जिससे प्रत्येक छात्र उसका प्रयोग कर सकें।
8. सरकार के द्वारा ऐसी नीतियाँ अपनाना चाहिए जिससे विभिन्न जिलों में शिक्षा के अवसरों और शैक्षिक विकास की क्षमता आ सकें।
9. अध्ययन शुल्क धीरे–धीरे घटा देना चाहिए। छात्रों को पुस्तकें, स्टेशनरी, मध्यान्ह भोजन और गणवेश निःशुल्क देना चाहिए।
10. विद्यार्थियों की अध्ययन के प्रति प्रोत्साहित करने के लिए छात्रवृत्तियाँ दी जानी चाहिए।

1.7 राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में आदिवासी शिक्षा :–

1. आदिवासी इलाके में प्राथमिक शाला खोलने के काम को पहला महत्व, शिक्षा के लिए निधि तथा एन.आर.ई.पी. और आर.एल.ई.पी.जी. जनजाति–कल्याण योजनाओं के अंतर्गत प्राथमिकता के आधार पर इन क्षेत्रों में स्कूल भवनों का निर्माण किया जायेगा।
2. आदिवासी के माहौल का अपना अलक रंग होता हैं उनकी विशिष्टतः प्रायः अन्य बातों के साथ अपनी बोलियों में निहित है, अध्ययन में इनकी अहमियन नहीं भुलायी जानी चाहिए। पढ़ाई की शुरूआत उनकी अपनी भाषा से होनी चाहिए, आगे चलकर प्रादेशिक भाषा की खाई को दूर किया जा सकें।
3. पढ़े–लिखे और प्रतिभाशाली आदिवासी युवको को प्रशिक्षण देकर अपने क्षेत्र में शिक्षक बनने को प्रोत्साहित किया जायेगा।
4. बड़ी तादाद में आवासीय विद्यालय एवं आश्रम शालाएँ खोली जायेगे।
5. आदिवासियों के लिए उनकी अपनी शैलीओं और खास जरूरतों को ध्यान में रखते हुए प्रेरणादायी योजना तैयार की जायेगी।

   उच्च शिक्षा के लिए दी जाने वाली छात्रवृत्तियों में तकनीकी और अच्छी व्यवसायिक किस्म की पढ़ाई को ज्यादा महत्व दिया जाये। मनोसामाजिक प्रबंधनों को दूर करने के लिए विशेष उपचारात्मक पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जायेगी।
6. आंगनबाड़ी, अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र, और प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र आदिवासी बाहुल्य इलाके में खोले जायेगे।
7. हर कक्षा के लिए पाठ्यक्रम तैयार करते समय इस बात का ध्यान रखा जायेगा कि आदिवासी छात्र अपनी कीमती तहजीब, पहचान के प्रति सचेत रहे और उनकी सृजनात्मकता प्रतिभा का उपयोग कर सकें।
8. बड़ी संख्या में आश्रम विद्यालय व आवासीय विद्यालय खोले जायेगे।
9. उच्च शिक्षा के लिए दी जाने वाली छात्रवृत्तियों में व्यवसायिक तथा तकनीकी पढ़ाई को अधिक महत्व दिया जायेगा।

1.8 जनजातियों से संबंधित विभिन्न विकास योजनाएँ [11] :–

आदिवासी क्षेत्रों में शिक्षा की अच्छी व्यवस्था उपलब्ध कराने के लिए विभाग द्वारा डिण्डौरी जिले के अंतर्गत प्राथमिक स्तर से माध्यमिक स्तर की शालाओं एवं छात्रावास, आश्रम शालाओं का संचालन किया जा रहा हैं। वर्तमान में डिण्डौरी जिलो में 933 प्राथमिक शाला, 353 माध्यमिक शाला, 44 हाईस्कूल, 28 हायर सेकेण्डरी, 61 छात्रवास, 45 आश्रम, 01 एकलव्य आवासीय विद्यालय, 01 कन्या

क्रीड़ा परिसर शहपुरा, 01 अनुसूचित जाति पोस्टमेट्रिक छात्रावास एवं 01 पिछड़ा वर्ग पोस्टमैट्रिक छात्रावास संचालित हैं।

- मध्य–प्रदेश में आदिवासी शैक्षणिक व आर्थिक विकास की विभिन्न योजनाएँ :

1. राज्य छात्रावृत्ति :

यह छात्रवृत्ति कक्षा 1 से 10 तक की बालक–बालिकाओं को निम्न दरों पर प्रदान की जा रही हैः–

कक्षा	बालक	बालिका
1 से 5	रू. 150	रू. 150
6 से 8	रू. 200	रू. 300
9 से 10	रू. 600	रू. 800

(विशेष पिछड़ी जनजाति सहरिया, भारिया एवं बैगा के ही बालकों को कक्षा 1 से 5 में यह सुविधा है)

11. ''मध्यप्रदेश में आदिवासी विकास की योजनाएँ'', मध्यप्रदेश शासन, आदिमजाति कल्याण विभाग, जिला डिण्डौरी (म.प्र.)

2.पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति :

रूपये एक लाख आठ हजार की आय सीमा तक भारत–सरकार के स्त्रों से तथा रूपये एक लाख आठ हजार से अधिक किन्तु 3 लाख की आय सीमा तक राज्य सरकार के स्त्रों से छात्रवृत्ति एवं फीस प्रतिपूर्ति की सुविधा प्रदान की जाती हैं।

3.विदेश अध्ययन छात्रवृत्ति योजनाः

अनुसूचित–जनजाति के युवाओं को विदेशों में उच्च शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से इस योजना में प्रति वर्ष 10 छात्र–छात्राओं का चयन किया जाता है। विद्यार्थी को प्रति वर्ष अधिकतम रूपये 15 लाख तक छात्रवृत्ति दिये जाने का प्रावधान है।

4.कन्या साक्षरता प्रोत्साहन योजना :

जनजाति की बालिकाओं को शिक्षा में प्रोत्साहन देने के लिए कक्षा 5वीं, 8वीं एवं 10वीं की परीक्षा पास कर अगली कक्षा में प्रवेश लेने पर क्रमशः रूपये पांच सौ, रूपये एक हजार एवं रूपये तीन हजार प्रोत्साहन राशि के रूप में प्रदान किये जाते हैं।

मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम आदिवासी विकासखण्डों में संचालित समस्त शासकीय तथा अनुदान प्राप्त प्राथमिक तथा माध्यमिक शालाओं में मध्यान्ह भोजन का वितरण किया जा रहा है। भारत से खाद्यान्न निःशुल्क प्राप्त होता है।

5. विशेष पिछड़ी जनजाति के बालकों को निःशुल्क गणवेश प्रदायः

चयनित 15 जिलों में निवासरत् विशेष पिछड़ी जनजाति (बैगा, सहरिया एवं भारिया) के कक्षा 1 से 12 तक अध्ययनरत् विद्यार्थियों के लिए निःशुल्क गणवेश, स्वेटर, जूते–मोजे प्रदान किये जाते हैं।

6. छात्रावास/आश्रम :

कक्षा 6 से कक्षा 10 तक अध्ययनरत् विद्यार्थियों को प्री–मैट्रिक छात्रावास एवं उसके ऊपर कक्षाओं में अध्ययनरत् छात्र–छात्राओं को पोस्ट मैट्रिक छात्रावास में प्रवेश दिया जाता हैं आश्रम शालाओं में कक्षा 1 से 8 तक के छात्र–छात्राओं को प्रवेश दिया जाता है। इन छात्रावास/आश्रमों में निःशुल्क आवास, पानी, बिजली, बर्तन, बिस्तर, चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी की सेवाओं की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है।

7. उत्कृष्ट शिक्षा संस्थान (छात्रावास योजना) :

विभाग द्वारा मेधावी छात्र–छात्राओं को उत्कृष्ट शिक्षा देने के उद्देश्य से जिला स्तर पर उत्कृष्ट केन्द्र स्थापित किये गये हैं। इस योजना को विस्तार देते हुए अब विकासखण्ड मुख्यालयों पर भी उत्कृष्टता शिक्षा संस्थान (छात्रावास) संचालित किये जा रहे हैं। इनमें निवास करने वाले छात्र–छात्राओं को छात्रावासी सुविधा के अतिरिक्त कोचिंग, कम्प्यूटर शिक्षण एवं प्रति विद्यार्थी रूपये 2000/– के मान से प्रतिवर्ष स्टेशनरी भी प्रदान की जाती है।

8. छात्रगृह योजना :

पोस्ट मैट्रिक छात्रावासों में स्थान अभाव के कारण ऐसे छात्र जिन्हें प्रवेश नहीं मिल पाता है, उनके लिए इस योजना के अंतर्गत किराये पर मकान उपलब्ध कराया जाता है। किराया, पानी एवं बिजली का शुल्क विभाग द्वारा वहन किया जाता है तथा छात्रावासी दर पर पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है।

9. ग्राम पंचायतों को पुरूस्कार योजना :

89 आदिवासी विकासखण्डों में प्राथमिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण तथा अनुसूचित–जनजाति वर्ग के प्राथमिक शाला में प्रवेश योग्य बालक/बालिकाओं को शतप्रतिशत प्रवेश दिलाने तथा शाला छोड़ने की प्रवृत्ति को रोकने हेतु श्रेष्ठ कार्य करने वाली ग्राम पंचायतों को पुरूस्कार स्वरूप रूपये 25,000/– प्रति ग्राम पंचायत प्रति विकासखण्ड के मान से राशि प्रदान की जाती है।

10. सिविल सेवा प्रोत्साहन योजना :

राज्य शासन से संघ लोक सेवा आयोग तथा मध्यप्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित की जाने वाली सिविल सेवा परीक्षाओं में विभिन्न स्तरों पर सफल होने वाले अनुसूचित–जनजाति के अभ्यार्थियों को निम्नानुसार प्रोत्साहन राशि विभाग द्वारा प्रदान की जाती है:–

क्र.	विवरण	पी.एस.सी.	यू.पी.एस.सी.
1.	प्रारंभिक परीक्षा उत्तीर्ण करने पर	20,000	40,000
2.	मुख्य परीक्षा उत्तीर्ण करने पर	30,000	60,000
3.	साक्षात्कार उपरांत चयन होने पर	25,000	50,000

11. क्रीड़ा परिसर :

विभाग द्वारा प्रदेश में 100 सीटर, 17 विभागीय क्रीड़ा परिसर संचालित हैं, इनमें निवास करने वाले विद्यार्थियों को शिष्यवृत्ति के अतिरिक्त प्रति माह रूपये 100/– पोषण आहार भत्ता, प्रतिवर्ष गणवेश के लिए रूपये 350/– एवं स्पोंटस किट के लिए 500/– रूपये दिये जाते हैं। क्रीड़ा परिसरों में विभिन्न खेल विधाओं में प्रशिक्षित क्रीड़ा शिक्षकों द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता है।

12. प्रतिभावान छात्र खिलाड़ी प्रोत्साहन योजना :

विभाग द्वारा विभागीय संस्थाओं में अध्ययनरत् अनुसूचित–जनजाति के विद्यार्थियों को जिन्होंने विभिन्न राज्यस्तरीय एवं राष्ट्रीयस्तर की खेल प्रतियोगिताओं में भाग लेकर प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त किया है, उन्हें निम्मानुसार पुरूस्कार राशि से सम्मानित किया जाता है:–

क्र.	विवरण	राज्य स्तर	राष्ट्रीय स्तर
1.	प्रथम स्थान	7,000	21,000
2.	द्वितीय स्थान	5,000	15,000
3.	तृतीय स्थान	3,000	11,000
4.	सहभागिता	–––––	4,000

13. विद्यार्थी कल्याण योजना :

जनजाति के आर्थिक रूप से कमजोर विद्यार्थियों को, आकस्मिक विपत्ति, विशेष रोग से पीड़ित होने पर इलाज हेतु तथा विशेष अभिरूचि को प्रोत्साहन देने हेतु निम्नानुसार सहायता दी जाती हैं:–

कक्षा	प्रथम	द्वितीय	तृतीय
10 वीं	20,000	15,000	10,000
12 वीं	30,000	20,000	10,000

क्र.	विवरण	सहायता राशि
1.	मृत्यु पर (छात्रावास/आश्रम में निवासरत् रहते हुए)	25,000
2.	विशेष रोग केंसर, टी.बी. एवं हृदय रोग आदि	25,000
3.	असामयिक विपत्ति	5,000
4.	निःशक्त छात्र/छात्राओं को ट्रायसाईकल हेतु	3,000

14. शंकर शाह, रघुनाथ शाह/रानी दुर्गावती पुरस्कार योजना :

आदिवासी छात्र–छात्राओं के लिए माध्यमिक शिक्षा मंडल की 10 वीं एवं 12 वीं बोर्ड परीक्षा में प्रदेश में अपने संवर्ग में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले छात्र–छात्राओं को निम्नानुसार राशि से सम्मानित किया जाता हैः–

15. स्वर्ण जयंती मध्यप्रदेश अनुसूचित–जनजाति बस्ती विकास योजना :

विकास की अधोसंरचना की दृष्टि से पिछड़े रह गये आदिवासी बाहुल्य अंचलों के विकास हेतु 'स्वर्ण जयंती मध्यप्रदेश अनुसूचित–जनजाति बस्ती विकास योजना' अंतर्गत आदिवासी बाहुल्य ग्रामों में सड़क निर्माण, नाली, खरन्जा, शौचालय, शैक्षणिक संस्थाओं के बाउण्ड्री वॉल, सामुदायिक भवनों आदि का निर्माण कराया जाता है।

16. आर्थिक विकास कार्यक्रम :

एकीकृत आदिवासी विकास परियोजनाओं के माध्यम से परियोजना क्षेत्रों में निवासरत् गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन करने वाले अनुसूचित जनजाति के परिवारों को गरीबी रेखा से ऊपर उठाने की दृष्टि से रूपये 20 हजार की राशि अनुदान के रूप में उपलब्ध कराई जा रही है।

17. स्मग्र विकास कार्यक्रम :

संविधान के अनुच्छेद 275 (1) के तहत सामुदायिक विकास की दृष्टि से वंचित आदिवासी उपयोजना क्षेत्र के चिन्हित क्षेत्रों में विभिन्न प्रोजेक्ट्स के लिए विशेष रूप से राशि उपलब्ध कराई जाती है।

18. आदिवासी वित्त एवं विकास निगम की योजनाएं :

म.प्र. के आदिवासी वर्ग के हितग्राहियों को ट्रक, ट्रेक्टर, ट्राली, कृषि उत्पादन यंत्र बकरी पालन, सुअर पालन, मुर्गी पालन, मछली पालन, आटा चक्की आदि व्यवसाय के लिए सस्ती ब्याज दरों पर ऋण उपलब्ध कराया जाता है। विकलांग आदिवासी वर्ग के लिए गारमेन्टस, किराना दुकान, पान दुकान, आटा चक्की एवं अन्य व्यवसायों हेतु भी ऋण सुविधा प्रदान की जाती है।

19. वन अधिकार अधिनियम :

अनुसूचित–जनजाति और अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनिमय 2006 के तहत वन भूमि पर 31 दिसम्बर 2005 की स्थिति में काबिज जनजाति के लोगों को विहित प्रक्रिया के तहत हक प्रमाण–पत्र प्रदान किये जाने का प्रावधान है। इन वन अधिकार धारकों को कृषि विकास के लिए कपिलधारा योजना अन्तर्गत कूप निर्माण तथा सफल कूपों पर सिंचाई सुविधा हेतु डीजल/विद्युत पंप प्रदान किये जाने का अभियान शुरू किया गया है।

20. विशेष पिछड़ी जनजातियों के विकास हेतु संरक्षण सह विकास योजना :

प्रदेश की विशेष पिछड़ी जनजातियों (सहरिया, भारिया, बैगा) के विकास हेतु संरक्षण सह विकास योजना क्रियान्वित की जा रही है। 15 जिलों के 11 अभिकरणों के माध्यम से संचालित योजनाओं में शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, कृषि विकास, स्वरोजगार, प्रशिक्षण एवं आवास की योजनाएं ली गई है।

सारांश:

प्रस्तुत शोध–सारांश, शोध सारांश, शोध विषय ''बैगा–जनजाति की शिक्षा में आने वाली कठिनाईयाँ : एक अध्ययन'' बैगा बाहुल्य डिंण्डौरी–जिला के विकासखण्ड समानपुर के गांव (पौड़ी, समर्धा, कमको, पिपरियाँ) में संपन्न हुआ। चूँकि समनापुर विकासखण्ड की कुल जनसंख्या 4,259 हैं जिसमें 2,133 पुरूष व 2,126 महिलाएँ हैं। इनमें से मात्र 140 शिक्षित है। शेष 4,119 अशिक्षित है जो शिक्षा की निम्न शैक्षिक–स्थिति की घोतक है। शोध अध्ययन के दौरान शोध–क्षेत्र में पाया गया कि–

‘ शाला जाने वाले बालक–बालिका के पिता कुल योग का 33.3 प्रतिशत (सुरक्षा गार्ड, चपरासी, शिक्षक) के रूप में सेवा प्रदान कर रहे हैं, जो कुल योग का 75 प्रतिशत है। इनकी मासिक आय लगभग 3,000 है। इनके प्रायः 1–2 बच्चे है। ये आंगनबाड़ी, सर्वाशिक्षा अभियान, जनश्री, बीमा योजना, छात्रवृत्ति व छात्रावास योजना के बारे में जानते है। इनकी जानकारी जनसंपर्क टी.वी. रेडियों समाचार पत्रों आदि से प्राप्त हुई है। तथा ये बच्चों को शाला भेजने हेतु जागरूक है।

जबकि कुल योग का 66.6 प्रतिशत माता–पिता अशिक्षित है। इनका प्रमुख व्यवसाय कृषि व मजदूरी है। अर्थात् जब ग्रीष्म ऋतु में कृषि उत्पादन क्षमता कम हो जाती है तब इन्हें

आय प्राप्ति हेतु मजदूरी करनी पड़ती है। जिससे इन्हें लगभग 2000–3000 मासिक आय प्राप्त हो जाती है। किन्तु जीवनयापन की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु यह आय साधन अपर्याप्त होने पर ये संतानोपत्ति पर अधिक बल देते है। उन्हें ''कमाऊ पुत्र'' की संज्ञा दी गयी हैं इसलिए प्रायः इनके 3–4 बच्चे है। चूँकि माता–पिता अशिक्षित है। इसलिए इन्हें शिक्षा योजनाओं की जानकारी नहीं है। ये केवल नाम से परिचित है या शिक्षा–योजना जैसे आंगनबाड़ी के बारे में इतना जानते है कि वहाँ से शिक्षा, भोजन, कपड़ा, दवाईयाँ मिलती हैं इसकी जानकारी इन्हें जनसंपर्क से प्राप्त हुई है। किन्तु ध्यान देने योग्य बात यह है कि ये अशिक्षित होते हुए भी अपने बच्चों को शाला भेजने हेतु प्रयासरत् है। शाला जाने वाले बच्चों की औसत आयु 14 वर्ष तथा वे 8 वीं कक्षा में अध्ययनरत् है। अतः शाला जाने में इन्हें प्रायः स्कूल की अधिक दूरी, शिक्षक के दुर्व्यव्यवहार (विशेषकर बालिकाओं के संदर्भ में), शिक्षक द्वारा दी जाने वाली सजा (मुर्गा बनाना, घुटने टिकानाना, छड़ी से मारना, कक्षा के बाहर व अंदर खंड़े रखना), घर का काम (खाना पकाना, पानी लाना, चारा काटना व गाय को खिलाना, कपड़े धोना छोटे बच्चों को खिलाना आदि) उपज एकत्रीकरण, टोकरी बनाना, खेती में मदद, शिक्षक की भाषा समझ में न आना गणित, अंग्रेजी से भय ग ृहकार्य समझ में न आना, शौचालय, पेयजल, स्वास्थ्य, विद्युत, शैक्षिकसुविधाओं का आभाव व स्वयं का शर्मीला स्वाभाव इत्यादि समस्याएँ आती है। तथा इनके माता–पिता को बच्चों को शाला भेजते समय प्रमुख कठिनाई आर्थिक तंगी आती है।

अंततः जो बालक–बालिका इन विपरीत परिस्थितियों में सामंजस्य स्थापित कर लेते हैं, वे शाला में अध्ययन करते है तथा शिक्षक, पुलिस, नर्स, समाजसेवी व प्रतियोगी परिक्षाओं से संबंधित पर प्राप्ति की भविष्य–योजना बनाते है एवं जो बालक सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाते है वे शालात्याग कर देते है।

वही दूसरी और शालात्यागी बालक–बालिकाओं के माता–पिता का शिक्षा प्रतिशत शाला जाने वाले बालक–बालिकाओं के माता–पिता से कम हैं अर्थात् केवल कुल योग का 25 प्रतिशत पिता शिक्षित हैं (16.6) प्रतिशत प्रा.शि., 8.3 प्रतिशत मा.शि. जबकि कुल योग का 75 प्रतिशत अशिक्षित हैं। इनका प्रमुख व्यवसाय कृषि व मजदूरी है। इनकी मासिक आय लगभग 2000–3000 है। अशिक्षा के कारण ये ''छोटा परिवार सुखी परिवार'' का महत्व को नहीं समझ पाते और संतानोपत्ति–क्रिया में संलग्न रहते है। इस कारण इनके प्रायः 3–4 या अधिक बच्चे होते है जो ''कमाऊ पूत'' कहलाते है। इनके माता–पिता को प्रायः शिक्षा–योजनाओं की जानकारी नहीं है। वे केवल आंगनबाड़ी–योजना के नाम से परिचित हैं सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि से नहीं। इनकी जानकारी का मुख्य साधन जनसंपर्क है। जब इनके बच्चे स्कूल जाते थे तब इन्हें आर्थिक तंगी, उपजएकत्रीकरण व हाट में बेचना, स्वयं खेती कार्य, घर का काम आदि समस्याओं का सामना करना पड़ता था। अतः परिस्थितिवश ये अपने बच्चों को शाला से निकाल देते है या बच्चा स्वयं शालात्याग देता है।

इनके शालात्यागने की औसत आयु 14 वर्ष व कक्षा 8 वीं है। वर्तमान में ये कुल योग का 75 प्रतिशत गांव व शहर में मजदूरी करते है। शाला त्यागने के पश्चात् इन्हें अतिकटु अनुभव हुये है जैसे लॉज में कमरे की सफाई, चाय के ठेले में बर्तन सफाई, विशेषकर

बालिकाएँ रोजनदारी का काम, जबकि कुछ बालिकाएँ केवल घर का काम खेती में मद्द, खाना बनाना, कपड़े धोना, चारा काटना व पशु चराना, पानी लाना, छोटे बच्चों की देखभाल आदि है। इनकी शालात्यागने का मुख्य कारण प्रायः आर्थिक तंगी पिता का दुर्व्यव्हार, शिक्षक दुर्व्यवहार गृहकार्य न कर पाना, गणित, विज्ञान, संस्कृत आदि विषय का भय शिक्षक की भाषा समझ में न आना, शौचालय पेयजल, विद्युत शिक्षा सुविधा का आभाव आदि है, किन्तु ये शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् भविष्य में शिक्षक, नर्स, समाजसेवा व प्रतियोगिता परीक्षा से संबंधित पद प्राप्त करना चाहते थे क्योंकि इनका मानना है कि अगर से पढ़लिख जाते तो इनका कोई शोषण नहीं कर सकता, इन्हें चूल्हा नहीं फूंकना पड़ता, रोजगार व शासकीय नौकरी मिल जाती आदि। इसके साथ ही ये (व्यवसायिक शिक्षा) सर्वाधिक सिलाई सीखना चाहते हैं इसके अतरिक्त कढ़ाई, बुनाई, बढ़ईगिरी, बिजलीकार्य भी सीखना चाहते हैं।

किन्तु ये तभी संभव हैं जब ये शिक्षा के महत्व को समझेगे,जागरूक होगे परिणामतः शालात्यागी बच्चे की शाला सुचारू रूप जानने लगेगे व बैगा–जनजाति में व्याप्त निरक्षारता धीरे–धीर कम होने लगेगी तथा ये समाज के अन्य वर्गों के साथ कदम से कदम मिलाकर चल सकेंगे फलतः बहुजन सुखाय बहुजन हिताय, वसुधैव कुटुम्बकम की भावना चरितार्थ हो सकेगी।

1. बैगा विकास प्राधिकरण, डिंडोरी जिला, मध्यप्रदेश
2. वर्मा, सूर्या (2008), लघुशोध प्रबंध ''बैगा–जनजाति की भौगोलिक स्थिति एवं वनसंसाधन उपयोगिता का अध्ययन'' (डिंडोरी जिला के विशेष संदर्भ में), बाबा साहब अम्बेडकर राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान संस्थान, महूँ (इन्दौर) म.प्र.
3. शर्मा, शिवकुमार (2008), शोधप्रबंध ''मध्यप्रदेश की बैगा–जनजाति की सामाजिक, सांस्कृतिक, परिस्थितीय परिवर्तन एवं सामंजस्य की समस्याएँ'', बाबा साहब अम्बेडकर राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान संस्थान, महूँ (इन्दौर) म.प्र.
4. बागड़े, तुकाराम जी (2002–03), लघुशोध प्रबंध एम.एड. ''चंदपुर जिले के आदिवासी आश्रमशाला एवं जिला परिषद शाला एवं जिला–परिषद शालाओं के आदिवासी छात्र–छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धिः एक तुलनात्मक अध्ययन'', क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान भोपाल (म.प्र.)
5. बेस लाईन सर्वेक्षण (2005). ''डिण्डौरी का परिचय'', बैगा विकास प्राधिकरण, जिला–डिण्डौरी (म. प्र.)
6. निरगुणे, बसंत (2004). ''आदिवर्त मध्यप्रदेश की जनजातियाँ'', महावीर पब्लिशर्स, इन्दौर (म.प्र.) पेज–121–122
7. बेसलाईन सर्वेक्षण (2005), ''बैगा एक संक्षिप्त परिचय'' बैगा विकास प्राधिकरण जिला–डिण्डौरी (म.प्र.)

शिखा झारिया (शोध छात्रा)

राधावल्लभत्रिपाठी का जीवन परिचय

आचार्यराधावल्लभत्रिपाठीजी का जन्म 15 फरवरी 1949 को मध्यप्रदेश के राजगढ़ मण्डल के ब्यावरा जिले में हुआ राधावल्लभत्रिपाठी छोटे कद; पर गम्भीर व्यक्तित्व के धनी सरल –स्वभाव सम्पन्न; मृदुभाषी; बहुपठित; बहुलेखी व बहुश्रुत होने के बावजूद मितभाषी एंव स्पष्टवादी भी हैं। पिता गोकुलप्रसाद त्रिपाठी पहले विद्याालय में अध्यापक फिर प्राचार्य और फिर महाविद्यालय में प्राध्यापक रहे; सरकारी नौकरी में रहने से स्थानान्तरणों के कारण अलग–अलग जगहों पर शिक्षा हुई। सर्वाधिक छात्र जीवन बुन्देलखंड की धरती पर छतरपुर में बिताया पांचवी कक्षा से बी. ए. तक। स्नातक के बाद एम. ए. के लिए सागर आए।

एम.ए.; पी–एच् डी.; डी. लिट् आदि उपाधियों से विभूषित डॉ. अध्यक्ष के पद पर प्रतिष्ठित प्रो. राधावल्लभत्रिपाठीको संस्कृत जगत में परिचय की कोई आवश्यकता नहीं है। वे कम से कम 15 राष्ट्रीय/ अंतराष्ट्रीय प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित हैं। उन सम्मानों में से उत्कृष्ट शोधकार्य के लिए मुम्बई एसियाटिक सोसायटी के पुरस्कार; म.म.पी. वी. काणे स्वर्णपदक (1989) अखिलभारतीय प्राच्यविद्यासम्मेलन पुरस्कार (1972)(1988) कालिदास की समीक्षा–परम्परा इस ग्रन्थ पर मध्यप्रदेश संस्कृत अकादमी का भोज पुरस्कार (1992) 'लहरीदशकम्' पर उत्तरप्रदेश संस्कृत अकादमी का कालिदास–पुरस्कार 1993 'संधानम्' काव्यसंग्रह पर केन्द्र–साहित्य–अकादमी पुरस्कार 1994; कोलकात्ता हिन्दी अकादमी का राष्ट्रीय हिन्दी रत्न सम्मान 1994 तथा कनाडा का रामकृष्ण संस्कृत पुरस्कार 1998 आदि उल्लेखनीय हैं।

संस्कृत ; हिन्दी एंव आङग्लभाषा में प्रो. त्रिपाठी के लगभग 90 पुस्तक प्रकाशित है। इनमें से आदिकवि वाल्मीकि; संस्कृत–कविता की लोकधर्मी परम्परा; काव्यशास्त्र और काव्य; नाट्यशास्त्र; नाट्यशास्त्र एंव रंगमंच; नाट्यशास्त्र–विश्वकोश के 4 भाग एंव कालिदास समीक्षा –परम्परा आदि उनके प्रमुखशोधात्मक ग्रंथ हैं–**सन्धानम् 1987; लहरीदशकम् 1992; गीतधीरवम्1996; सम्प्लवः 2000; उनके 4 काव्यसंग्रह तथा प्रेमपीयूषम् 1971; प्रेक्षणसप्तकम् 1979; तण्डुलप्रस्थीयम् 1999 आदि कथा साहित्य हैं।** साथ ही इनके 130 से अधिक शोधपत्र विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। इन्होंने 15 रूपकों का हिन्दी में अनुवाद किया। इसके अतिरक्त इन्होंने हिन्दी में 35 लघुकथा एंव संस्कृत में अनेक लघुकथाएं लिखीं जिनमें से कुछ मराठी–तेलगु–मलयालम आदि भाषाओं में अनूदित भी हुई हैं।[36]

''अभिनवकाव्यालटार सूत्रम्'' में प्रतिपादित विषय वस्तु–

'अभिनवकाव्यालटार सूत्रम्' तीन अधिकरणों में विभक्त समग्र काव्यशास्त्रीय रचना है। आचार्य राधावल्लभ जी ने अपने ग्रंथ की रचना पारंपरिक रूप से की है। भारतीय शास्त्रों में मंगलाचरण की परम्परा देखी जाती है। प्रस्तुत ग्रन्थ के आदि में 'अर्थ' शब्द का प्रयोग कर मंगलाचरण की परम्परा का अनुपालन किया गया है। इसके साथ ही त्रिपाठी जी ने व्यास भरत, भामह आदि पूर्वाचार्यो का स्मरण करके अपने द्वारा कहे जाने वाले पदार्थो की प्रमाणिकता भी सिद्ध की है। अपने सिद्धांतो की स्थापना सूत्र, वृत्ति, उदाहरण और परिकर श्लोकों के माध्यम से की है।[37]

त्रिपाठी जी ने प्रथमाधिकरण को 6 अध्यायों में बांटा है। इसके **प्रथम अध्याय** में काव्यलक्षण का निरूपण किया है इसमें काव्य एवं लोक के स्वरूप को विस्तार से व्यवस्थित किया है। लोक एवं लोकोत्तर के मध्य सगति स्थापित करते हुए, कुन्तक, मम्मट, अभिनवगुप्त आदि के उक्तियों से प्रामाणिकता सिद्ध की है। लोक शब्द का निरूपण करते हुए **'लोकानुकीर्तन काव्यम्'**[38] ऐसा काव्य लक्षण दिया है लोक से संबंधित तीनों लोकों की समष्टि से है। इस प्रकार काव्य का त्रैकालित्व भी सिद्ध होता है। यह लोक काव्य में निरूपित होकर लोकोत्तर अनंत हो जाता है। साहित्य में तीनों लोकों आधिभौतिक अधिदैविक और आध्यात्मिक लोकों में से एक के बिना दूसरा नहीं रह सकता, इसलिए काव्य में भी पुरूषार्थ सिद्धि होती है जीवन की अखंडता चारों पुरूषार्थो (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) से समन्वित होकर पूर्णता को धारण करती है।

त्रिपाठी जी ने जीवन के तीन भेद किए है– अधिभौतिक, आधिदैविक, और आध्यात्मिक। वह पुनः तीन प्रकार का है व्यक्तिगत, समाजगत और ब्रह्माण्डगत। इस प्रकार लोक की व्याख्या करने के बाद 'अनुकीर्तन' की व्याख्या की है। उस लोक का अनुकीर्तन ही काव्य है, अनु अर्थात् पश्चात् कीर्तन अर्थात कथन करना। पूर्व से विद्यमान लोक का ही अनुकीर्तन होता है।

शब्दों के माध्यम से लोक के पुनराविष्करण को अनुकीर्तन कहते है। अनुकीर्तन की चार अवस्थाएँ है–**अनुन्मीलन, अनुदर्शन, अनुभव और अनुव्याहरण।**[39] इन तीनों आधिभौतिक, अधिदैविक और आध्यात्मिक लोकों का समग्र समुल्लास जीवन है। इसके बाद ऐतरेय महीदास का मत स्थापित किया है, भट्तौत की रचना प्रक्रिया दर्शन और वर्णन के भेद से दो प्रकार की है। रचना प्रक्रिया के विषय में अभिराजराजेन्द्र मिश्र के मत का खण्डन किया है। साहित्य शब्द का आशय स्पष्ट किया है और कुन्तक ने साहित्य शब्द से सहभाव अर्थ लिया है इस पर सहमति दिखाई है तथा उसे अपने काव्य में अन्तर्मुक्त माना है। सम्पूर्ण काव्य में छन्द की व्याप्ति मानते हुए साहित्य को समाज का दर्पण माना है।

द्वितीय अध्याय में काव्य प्रयोजन का निरूपण किया गया है। काव्य प्रयोजन मुक्ति माना है। सृष्टि और चेतना की दृष्टि से वह तीन–तीन प्रकार की है। ये परस्पर अनुषक्त है सृष्टि की दृष्टि से वह मुक्ति आधिभौतिकी, अधिदैविकी और आध्यात्मिकी तथा चेतना की दृष्टि से वह मुक्ति भी तीन प्रकार की है– व्यैक्तिकी सामाजिकी और ब्रह्माण्डीया। त्रिपाठी जी साहित्य को ही मुक्ति का साधन मानते है। इस प्रकार यह बताया है कि काव्य निष्प्रयोजन नहीं होता है परंतु यशप्राप्ति भी प्रयोजन नही है काव्य सृजन तो कवि का स्वभाव होता है।[40]

तृतीय अध्याय में काव्य के कारण का निरूपण किया गया है काव्य का निरूपण किया गया है काव्य का कारण जागरिता प्रतिभा है यह प्रतिभा दो प्रकार की है– संस्काररूपा तथा जागरिता। संस्काररूपा प्रतिभा के सभी में व्याप्त होती है। जागरिता अर्थात् स्पन्यशील प्रतिभा सबमें नहीं होती, स्पन्दशीलता कवि प्रतिभा का स्वभाव है।[41]

चतुर्थ अध्याय में काव्यभेद निरूपण किया गया है त्रिपाठी जी काव्य के चार भेद करते है– उत्तमोत्तम उत्तम, मध्यम और अवर जीवन के सम्पूर्ण रूप का निरूपण करने वाला महावाक्य, उत्तमोत्तम काव्य, उसके एकदेश का निरुपण करने वाला उत्तम, वस्तुस्थिति या मनः स्थिति विशेष को प्रकट करने वाला मध्यम तथा पदार्थमात्र में पर्यवसित होने वाला अवर काव्य है। नाना दिशाओं और काल से अवच्छिन्न वाक्यों का पुरुषार्थ प्रवर्तक समूह महावाक्य है।[42]

मम्मट के काव्य भेद की समीक्षा की है। इसके बाद काव्य को पौरुषेय तथा अपौरुषेय भेद ऐनिरूपण किया है।[43] इस प्रकार चतुर्विध काव्यों के अनुसार कवियों को चार प्रकार का माना है– सिद्ध, साधक, आभ्यासिक, घटक। इस प्रकार राजशेखर के मत का खण्डन करते हुए तीनों प्रकार के कवि, सारस्वत, आभ्यासिक और औपदेशिक में चार कवियों का अन्तर्भाव करते है समीक्षक के चार भेद किए है– तच्वाभिनिवेशी विषयनिष्ठ विषयिनिष्ठ और सतृणाभ्यवहारी। इन्ही समीक्षकों में ही भावकों का भी अन्तर्भाव हो जाता है।

पंचम अध्याय में शब्द के व्यापार का निरूपण किया गया है। त्रिपाठी जी ने शब्द का एक ही व्यापार माना है, वह है– संकेत। अभिधा, लक्षणा और व्यंजना ये शब्द व्यापार की वृत्तियाँ है, ये वृत्तियाँ अधिभौतिक, अधिदैविक तथा आध्यात्मिक जगत को उन्मीलित करती है।[44]

षष्ठ अध्याय में काव्य के साथ शास्त्र की सगति निरूपण किया गया है। आपने काव्य एवं शास्त्र को परस्पर उपकार्य उपकारक माना है। यह चर्चा विभिन्न तर्को एवं प्रभावों पर आधारित है। काव्य में शास्त्र तीन प्रकार से सवंमित होता है जिसे उन्होंने नाम दिया है समवेत, सङ्गत एवं बलात्।[45]

द्वितीय अधिकरण का नाम अलटारविमर्श है। इसके **प्रथम अध्याय** में अलटार के स्वरूप पर विस्तृत विचार किया गया **है।** **''अधिभौतिकाधिदैविकाध्यात्मिकविचत्रय– समुन्मीलन भूषणवारणपर्याप्ताधायकत्वमटारत्वम्''** यह अलटार का लक्षण किया है।[46] आपके अनुसार अलटार काव्य का जीवन है तथा अलटार प्रक्रिया में भूषण वारण और वर्याप्ति का समावेश किया है। इस तरह अलंकृत काव्य विश्व के लिये मंगलमय होात है साथ ही कल्याणकारी फल का दाता भी होता है।

द्वितीय अध्याय में कवि व्यापार का निरूपण किया गया है– अलम्भाव का आधान करने के लिये कवि के द्वारा सम्वाद्यमान प्रक्रिया की कविव्यापार है। कवि व्यापार के चार भेद है–**वृत्ति, रीति, मार्ग और रस।**[47] नियम वर्णगत व्यापार वृत्ति है। पद विशेषगत व्यापार रीति है। त्रिपाठी जी ने चार प्रकार की रीति बताई है– व्यारूरीति, विडम्बन रीति, चेतना रीति और वार्तालाप रीति। विश्लेषण करके कथन करना व्यास रीति है। अनुकृति के आभास से विडम्बन रीति है। मनोवृत्ति का निरूपण करने से चेतना प्रवाह रीति है। पाठक को सम्बोधिक करके लिखने से वार्तालाप रीति है अर्थविषयक व्यापार मार्ग है और आस्वाद विषयक्त व्यापार रस है।

तृतीय अध्याय में अलम्भाव स्वरूप का निरूपण, किया गया है। अलम्भाव का स्वरूप **'अलम्भावस्तु पूर्णता,'**[48] इस सूत्र के द्वारा बताया गया है। अलम्भाव का अधिष्ठान कवि प्रतिभा और मनुष्य द्वारा प्रतिष्ठित है। चेतना का व्यापक भवन इसी अलम्भाव में आता है।

चतुर्थ अध्याय में अलटार विभाग का विस्तृत निरूपण किया गया है– 'अलटारा द्विविधा– आभ्यन्तराच बाह्यच।[49] पर्याप्ति, वारण और भूषण की प्रक्रियाओं के साथ आध्यात्मिक अधिदैविक तथा आधिभौतिक भेद से ये तीन प्रकार के अलटार है। पद, पदार्थ, वाक्य, प्रकरण और प्रबन्धगत भेद से पांच प्रकार के है। शब्द व्यापार की दृष्टि से तीन प्रकार के हैं–वाच्यगत, लक्ष्यगत और व्यंग्यगत। अलटार काव्य में सदैव समवेत रहते है। आभ्यन्तर अलटार में ऊष्णता के समान काव्य में समवेत रहते है वाच्य अलटार काव्य में उसी प्रकार रहते है जैसे अग्नि में कान्तिमन्ता अर्थात् ज्वाला आदि।[50]

पंचम अध्याय में आभ्यन्तरालटार का निरूपण किया गया है। आभ्यन्तर अलटार ग्यारह है[51]– प्रेमा, आह्लाद, विषादन, विभीषिका, व्यंग्य, कौतुक, निजीविषा, अहटार, स्मृति, साक्ष्य और उदात्त इन अलटारों में भोजराज के बारह रसों का अन्तर्भाव हो जाता है। प्रेमा अलटार में श्रृंगार, आह्लाद में श्रृंगार तथा हास्य, विषादन में करूण, विभीषिका में

वीभत्स और भयानक, व्यंग्य में हास्य, कौतुक में अद्भुत् और अहटार में रौद्, स्मृति में साक्ष्य अलटार में शान्त रहा तथा उदान्त अलटार में वीर रस का अन्तर्भाव होता है।[52]

षष्ठ अध्याय में बाह्य अलटार का निरूपण किया गया है बाह्य अलटार चार प्रकार के है– संघटनाश्रित, विरोधमूलक, औपम्य–मूलक और वृत्तिमूलक कुल मिलाकर ये अठारह है।[53] इसमें अन्यथाकरण छाया, जाति और अतिशय ये चार संघटनाक्षित मूलक अलंकार है।

अपुति, विरोध, असंगति, विषम द्वन्द्व और तानव ये छः विरोधमूलक अलटार है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा और दीपक ओपम्य मूलक अलटार है। नादानुवृत्ति, यमक, श्लेष और लय नामक चार अलटार वृत्ति मूलक हैं।

तृतीय अधिकरण का नाम काव्य विशेष विमर्श के जो अध्याय विभाजन से रहित है। इसमें काव्य की पाठ्य और दृश्य[54] विधाओं का भेदोपभेद के साथ निरूपण किया गया है। त्रिपाठी जी ने श्रव्य के स्थान दर पाठ्य संज्ञा को उचित माना है, काव्य की जो विधा 'पाठ्य' कही गई है प्राचीन आचार्यो ने उसे श्रव्य कहा है। वर्तमान युग में श्रव्य के स्थान पर पाठ्य संज्ञा उचित है। इसके बाद काव्यविधा का विभाजन भाषा, अर्थचमत्कृति, कविदृष्टि, बन्ध, रीति और इन्द्रियों के आधार पर किया है। पद्य की विद्याओं में गजलगीति, मुक्तच्छन्द, समस्या काव्य आदि तथा गद्य के भेदों में निबन्ध, आलोचना कथा, उपन्यास, संस्मरण, जीवनचरित, आत्मकथा, रेखाचित्र यात्रावृतान्त आदि नवीन विधाओं को भी लक्षणान्वित किया गया है।[55]

इस प्रकार लक्षणयुक्त काव्यभेदों के साथ शास्त्र पूर्ण को जाता है।

संदर्भ सूची :

1. भारतीय काव्यशास्त्र (संस्कृत) का इतिहास पृ. 1
2. वही पृ. 3
3. वही पृ.7
4. नाट्यशास्त्र (1/14–15)
5. भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा पृ. 16
6. वही पृ. 19
7. नाट्यशास्त्र (17/94)
8. वही 17/94
9. काव्यालंकार – 1/16
10. भारतीय काव्यशास्त्र का इतिहास पृ. 40
11. वही पृ. 40–41
12. वही पृ. 47
13. काव्यादर्श (1/47)
14. भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा पृ. 49
15. काव्यालटारसूत्राणि पृ. 3

16. काव्यालटारसूत्राणि (1/1/1), (1/1/2)
17. भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा पृ. 66
18. ध्वन्यालोक 1/13
19. भारतीय काव्यशास्त्र का इतिहास पृ. 73
20. ध्वन्यालोक 1/1
21. भारतीय काव्यशास्त्र का इतिहास पृ. 120
22. वही पृ.120
23. भारतीय काव्यशास्त्र का इतिहास पृ. 166
24. वही पृ. 167
25. वही पृ.229
26. वही पृ. 230
27. भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा पृ. 101
28. आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र पृ. 75–76
29. वही पृ. 77
30. वही पृ. 78
31. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र पृ. 158
32. आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र पृ. 83
33. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र पृ.152
34. वही पृ. 141
35. वही पृ. 142
36. दृक पत्रिका पृ. 1,2,3
37. अभिनकाव्यालटारसूत्रम् विमर्श पृ. 2
38. अभिनकाव्यालटारसूत्रम् पृ. 1
39. अभिनकाव्यालटारसूत्रम् पृ. 1/1/7
40. वही पृ. 15
41. वही पृ. 18
42. वही पृ. 20
43. वही पृ. 25
44. वही पृ. 29
45. वही पृ. 32
46. वही 2/1/2
47. वही पृ. 48
48. वही पृ. 2/3/1
49. वही पृ. 2/4/1
50. वही पृ. 58
51. वही पृ. 2/5/1
52. वही पृ. 60
53. वही पृ. 2/6/1
54. वही पृ. 3/1/1
55. वही पृ. 3/1/2

ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

रागनी चौहान, (शोधार्थी)
स्नातकोत्तर हिंदी एवं भाषाविज्ञान विभाग, रा.दु.वि.वि, जबलपुर (म.प्र.)

समकालीन महिला कहानीकारों की कहानियों में नारी सशक्तिकरण

भूमिका – समकालीन कहानीकारों ने समय के साथ–साथ चलते हुए शुरू से लेकर आज तक राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक आदि स्थितियों और जीवन के परिवेश में हुए बदलावों से सामना करते हुये मनुष्य के चारों तरफ अंदर – बाहर देखा और इन सभी स्थितियों को महसूस किया, साथ ही अपने अनुभव को एक रचनात्मक मोड़ दिया, जिसके परिणाम स्वरूप 'समकालीन कहानी' का निर्माण हुआ। इस प्रकार समकालीन कहानी ने अनेकनेक दबावों, तनावों और विचारों की टकराहट के बीच से होते हुए अपनी पहचान बनाई।

'समकाली कहानी' के प्रवर्तक के रूप में गंगा प्रसाद विमल का नाम लिया जाता है। समकालीन कहानीकारों में उदय प्रकाश, अरून प्रकाश, अखिलेश, अब्दुल बिस्मिल्लाह, असगर वजाहत, काशीनाथ सिंह, कृष्णा सोबती, गोविंद मिश्र, गिरिराज किशोर, चित्रा मुद्गल, जवाहर सिंह, नासिरा शर्मा, प्रियवंद, पंकज विष्ट, मालती जोशी, मृणाल पांडे, मेहरून्निसा परवेज, अलका सरावगी, चंद्रकांता, राजेश जोशी, रमेशचंद्र शाह, रूपसिंह चंदेल, राजी सेठ, शैवाल, विजय, श्रवण कुमार, सुरेश कांटक, सुनील सिंह, सुरेश उनियाल, सृंजय, सतीश जमाली, आदि का नाम लिया जाता है।

''समकालीन हिंदी कथा–साहित्य का परिदृश्य अत्यंत व्यापक तथा संभावनापूर्ण है। इसमें महिला कथाकारों की उपस्थिति इसे ज्यादा सार्थक और वैविध्यपूर्ण बनाती है। वैसे तो पचास के दशक से ही महिला कथाकारों ने नारी–मुक्ति तथा उससे जुड़ी विभिन्न समस्याओं को बड़ी प्रमाणिकता के साथ प्रस्तुत करना आरंभ कर दिया था, किंतु आरंभ में वह आंदोलन धर्मी तथा वक्तव्य परक ही अधिक था इसके अतिरिक्त उसमें नारी – अस्मिता विशेषातः प्रेम–संबंधी आग्रह ही अधिक था, किंतु काल क्रम में महिला कथाकारों के यहाँ रचनात्मक वैशिष्टय तथा व्यापक सामाजिक – सांस्कृति के प्रश्नों को संबोधित करने की आकांक्षा देखी जा सकती है।'' स्वतंत्रता के बाद से ही कुछ महिला रचनाकारों ने अपने अनुभवों, नारी मुक्ति तथा उनसे जुड़ी कई प्रकार की समस्याओं को चित्रित करना शुरू कर दिया। पर वह शुरूआती दौर था जो इतना प्रभावकारी नहीं हुआ जितना आज है।

मैने अपने इस शोध कार्य में उन महिला कहानीकारों को लिया है जो कुछ तो सत्तर के दशक से और कुछ आठवें दशक से लिख रही है और जिन्हें विशेषतः समकालीन कहानीकारों की श्रेणी में गिना जाता है। वैसे तो हिंदी कथा साहित्य में सन् साठ के बाद से महिला लेखिकाओं का अत्याधिक संख्या में उभरकर आना इस बात की ओर इशारा करता है

कि नारी के अंदर इतनी बौद्धिक क्षमता है कि वह साहित्य सृजन कर सकती है। और पुरूष के बराबर सृजन क्षेत्र में सफल हो सकती है। यह सत्य आज स्पष्ट रूप से दिखायी दे भी रहा है। यह भी एक सत्य है कि ''नर और नारी के बीच प्राकृतिक जैविक अंतर है परंतु इन सबके बावजूद नारी की मानसिक शक्ति और उसका ज्ञान पूर्ण रूप से सिद्ध हो चुका है। कला के सृजन में नारी की संवेदनाएँ अपना एक विशेष महत्व रखती है। नारी के अनुभव और उसके जीवन का बोध पुरूष से कई अर्थों में अलग होता है। नारी के निजी अनुभव को एक नारी ही अपने ढंग से स्वाभाविकता के साथ लिख सकती है। कल्पना और यथार्थ में बहुत अंतर होता है। पुरूष के द्वारा नारी दशा को लिखना कुछ अलग ही होता है परंतु जब एक नारी ही इन दशाओं को स्वयं लिखती है तो उसका अपना ही महत्व होता है और अलग ही प्रभाव पड़ता है।'' समकालीन महिला कहानीकारों ने मनुष्य के बदलते हुए जीवन के नये रूप को गहराई से पहचानते हुए चित्रित करने का प्रयास किया है। आज इन कहानीकारों की कहानियों में नारी – जीवन, उसका मानसिक संघर्ष साकार हो उठा है। इस क्षेत्र में महिला कहानीकारों ने अपनी विशेष जगह बना ली है। अपने अनुभव के माध्यम से उन्होंने नारी की मानसिकता को बड़ी गहराई से प्रस्तुत किया है। इन लेखिकाओं ने पुरूष लेखकों की तरह नारी को केवल आदर्श रूप में ही नही चित्रित किया बल्कि नारी के विभिन्न रूपों को, उसकी पहचान को उभारा है। अपनी विभिन्न प्रतिभाओं का विकास करते हुए इन समकालीन महिला कथाकारों ने साहसपूर्ण साहित्य के सृजन में अपना विशिष्ट योगदान दिया। यही कारण है कि आज महिला कथा – साहित्य अत्याधिक मजबूत और लोकप्रिय हो गया है। प्रकृति ने पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों को अधिक प्रवण कुशल और संवेदनशील बनाया है। और यह भी माना जाता रहा कि स्त्रियों में श्रद्धा, विश्वास, सहानुभूति, ममता, करूणा, स्नेह, वेदना आदि के गुण, सहनशीलता, कोमलता के भाव अधिक होते है और यही कारणों से महिला कथाकारों के साहित्य में दिल–दिमाग को हिला देने और भावनाओं को झंझोड़ देने की क्षमता और मार्मिकता अधिक दिखाई देती है।

समकालीन महिला कहानीकरों ने पारिवारिक जीवन व उनसे जुड़ी समस्याएँ आदि में लेखनी चलाकर जो सफलता हासिल की है वह शायद पुरूषों द्वारा लिखे कथा साहित्य में कम होगा। यह महिला कहानीकार जितने अधिकार से मातृ–हृदय, शिशु क्रीड़ा, नारी – उत्पीड़न, पारिवारिक रिश्तों में पड़ती दरार आदि–आदि विषयों पर लिख सकती है उतना पुरूष नहीं लिख सकता, इसलिए आज महिला लेखन अपनी मेहनत और प्रतिभा के बल पर प्रगति की ऊँचाई पर है।

समकालीन महिला कहानीकारों की यह विशेषता रही है कि इन्होंने आमजन की संवेदना के आयाम को, खासतौर से स्त्री से जुड़े उसकी दुनिया के अनुभव को समेटने की कोशिश को दिखाया है। साथ ही साथ कई अनछुए पहलुओं को भी उजागर किया है।

इस शोध ग्रंथ में समकालीन प्रमुख महिला कहानीकारों में चित्रा मुद्गल, राजी सेठ, मृदला गर्ग, नासिरा शर्मा, चंद्रकांता, मालती जोशी, मेहरून्निसा परवेज, मृणाल पांडे, सूर्यबाला, अलका सरावगी तथा क्षमा शर्मा की उन कहानियों को शामिल किया गया है, जो मुख्यतः नारी प्रधान कहानी है और जिनमें नारी पात्र अपने जीवन के अनेक संघर्षों, विपदाओं तथा विषम परिस्थितियों के बावजूद टूटकर बिखर नहीं गये वरन् शारीरिक–मानसिक तथा आर्थिक रूप से सशक्त बनने का निर्णय लेती है, जो अपने और समूची नारी जाति के अस्तित्व की रक्षा के लिए कभी शांति से तो कभी उग्र विद्रोह करती है।

इस अध्याय में उपरोक्त प्रमुख महिला कहानीकारों की कहानियों की सूची दी गई है।

चित्रा मुद्गल

चित्रा मुद्गल की कहानियों में प्रमुख रूप से नारी मुक्ति का स्वर दिखाई पड़ता है। आपने अपनी कहानियों में महिलाओं की एक बड़ी दुनिया को बड़े ही जतन से तलाशा है। नारी मन के टूटते भावों को, इस टूटन से उपजे तनावों को, घर की चाहरदीवारी लांघ कर अपने पैरों में खड़े होने को, पितृसत्तात्मक समाज में अपने आपके लिए हक व अधिकारों के लिए लड़ते हुए, काँटों भरी राह में चलते हुए घर–बाहर के संघर्ष को कामकाजी नारी के अनेकानेक समस्याओं को, अविवाहित व तलाकशुदा महिलाओं की मनोवस्था को, बच्चे से लेकर वृद्ध तक, निम्न वर्ग से लेकर उच्चवर्ग तक के जीवन के उत्साह, तकलीफों एवं संघर्ष को, समाज में अपने अस्तित्व व स्वाभिमान और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करती नारी को, समाज में फैले अत्याचार, शोषण, भ्रष्टाचार, अमानवीयता आदि से टकराते आम–आदमी को, मनुष्यों के पारस्परिक संबंधों के सकरी होती सोच को, समकालीन समाज की स्थितियों को, आधुनिक परिवारों की समस्याओं आदि विषयों को चित्रा जी परत–दर–परत खोलती हुई दिखाई देती है।

चित्रा जी अपनी कहानियों के माध्यम से नारी जीवन से संबंधित (समस्याओं–स्थितियों–संघर्षों) सवाल उठाती है। चित्रा जी के अनुसार–''आखिर क्यों ऐसा है कि हम स्त्री–पुरूष संबंधों की कोई स्वस्थ–सम्मानपूर्ण सामाजिक छवि अब तक जिस संक्रमण प्रक्रिया से गुजर रहे हैं, वह दूर–दूर तक कोई उम्मीद पैदा नहीं करती कि वह मंच जिसकी आवश्यकता एक सुदृढ़ नींव के रूप में स्त्री–पुरूष संबंधो के लिए अभिष्ट है – कैसा बनेगा, बन भी पायेगा या नहीं । तनिक पीछे लौटे तो पाते हैं कि हमारे भारतीय

समाज मैं नैतिकता एवं मर्यादा की बेड़ियाँ इतनी सशक्त थीं, कि मानसिक धरातल पर बिलकुल विपरीत स्तरों पर जीने के बावजूद स्त्री–पुरूष का एक पति पत्नी की तरह जीना कठिन नहीं था। स्त्री घर–चौंके का काम करने और संतानोत्पत्ति की मशीन की भाँति थी और उसे अपनी नियति के रूप में स्वीकार कर लिया था, लेकिन आज स्थिति बदली है। कल तक पुरूष सत्ता समाज में बंधुआ मजदूर जैसा पशुत्व जीवन व्यतीत करने वाली स्त्री अपने घर – बाहर सभी जगह पुरूष के मुकाबले बराबरी का दर्जा ही नहीं चाहती, हिस्सेदारी भी चाहती है और स्वाभिमान पूर्वक अपनी प्रतिष्ठा भी। लेकिन सवाल उठता है कि क्या औरत के शिक्षित होने और आत्मनिर्भर होने से ही उसके अधिकरों की लड़ाई लड़ी जा सकती है? क्या औरत को कागज पर बराबरी का दर्जा दे देने से पुरूष उसको समान अधिकार देने की मानसिकता बना रहा है? और क्या बिना पुरूष की मानसिकता बदले स्त्री की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन आ सकता है? क्या पुरूष से अलग होकर स्त्री अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ सकती है? शायद नहीं, क्योंकि घर नाम की दीवारों के बीच जीवन सांसे लेता है, वह दो पहियों के सम्मिलित प्रयास से गतिमान दाम्पत्य रथ है – एक पहिया बीमार, अशक्त, अलग हो तो रथ की गति ही नहीं, उसका अस्तित्व भी खतरे में पड़ जाता है। इन्ही खतरों को अलग–अलग कोणों से उठाती हुई इन कहानियों में तब कोई घर अंह से भस्म होता है, कुंठा से ग्रस्त होता है, संकीर्णता से घुटता है, संदेही से विधता है, आर्थिक दबावों से टूटता है, पूर्वाग्रहों से दंशित होता है, नैतिकता–अनैतिकता के मानदण्डों में तुलता है, तब हमारी शक्ल अपने ही आइने से मुँह चुराने लगती है। सवाल अपने–अपने आँगन में फन फैलाने लगते है – हमारी ओर फुंकारते हुए चुनौती देते हुए– हम यानी कि व्यक्ति, परिवार, समाज, देश..................।'' (1)

चित्रा मुद्गल जी की कहानियों में बाहरी दिखावा नहीं, भीतर की एक आग हैं जो व्यवस्था के क्रूर तथा अमानवीयता का विरोध करती है। कहानियों में प्रतीक, बिंब, सहज भाषा का प्रयोग आपकी कहानियों को खास एवं ठोस बनाता है।

इस शोध कार्य में भाोधार्थी ने चित्रा मुद्गल की निम्नलिखित कहानियाँ सम्मिलित की है।

कहानी		कहानी संग्रह
1. सौदा	–	औरत की कहानी
2. जब तक बिमलाएं है	–	लपटें
3. प्रेतयोनि	–	जिनावर
4. शून्य	–	असफल दाम्पत्य की कहानियाँ

मृदुल गर्ग

मृदुला गर्ग की अधिकांश कहानियों में प्रेम का वह स्वरूप झलकता है, जो ठोस यौन संबंध पर आधारित होती है। मृदुला जी कहानियों में एक तरफ यौन विकृतियों तथा दाम्पत्येतर संबंधों को दिखाती है तो दूसरी तरफ आम जन–जीवन के बहुआयामी रंगों को दिखाती है।

मृदुला जी अपनी कहानियों में कहीं भारतीय संस्कारों वाली नारी की सहनशीलता, तो कहीं अप्रवासी भारतीय की अपने वतन लौटने की ललक, उनकी व्यथा, उनकी मनोस्थिति को प्रकट करती है। दाम्पत्य संबंधों की उदासीनता, एक तरफा प्रेम की कसक, जीवन मूल्यों का पतन, जीवन अस्तित्व की अनर्थकता और मृत्यु चेतना की दार्शनिक बातों को, बौद्धिक तेजस्विता और संवेदनात्मक गहराई को, आधुनिक जीवन की समस्याओं को पति–पत्नी के संबंधों की भावहीनता, वृद्धों की जिजीविशा, आर्थिक–विशमता, नारी की विडम्बनापूर्ण जिंदगी उसके संघर्ष तथा विद्रोह को, नारी व्यक्तित्व स्वतंत्र्य और निर्णय क्षमता को, नारी–जाति की अस्मिता और त्रासदी को, उसकी छटपटाहट, उसका द्वंद्व, उसकी विवशताओं तथा नारी–जीवन के विभिन्न रूपों आदि को लेखिका ने अत्यंत कलात्मक ढंग से अपनी कहानियों में चित्रित किया है।

आप ने अपनी कहानियों के माध्यम से पूँजीपतियों तथा उच्चवर्ग की औपचारिक संस्कृति पर तीखा प्रहार किया है एवं सामाजिक समस्याओं को उपेक्षित–वृद्धावस्था, नारी का संतान मोह, कामजनित कुठांए, सामाजिक असमानता, आर्थिक विशमता आदि को अपनी कहानियों के माध्यम से दिखाया है।

मृदुला जी की कहानियों के संबंध में योगेश गुप्त लिखते हैं–''विषय वैभिन्य की दृश्टि से मृदुला जी ने दायरे के अनेक बिन्दुओं को छुआ है। सामाजिक विडम्बनाओं पर खुलकर व्यंग्य किया है.........तो एक मजदूर की व्यथा और उसके प्रति धनी की उपेक्षा भरी सहानुभूति पर भी चुटकी काटी है। उन्होंने ढोंगी चरित्रों की बखिया उधेड़ी है तो प्रेम के अनुभव को नई विश्वसनीयता भी दी है, विवाह संस्था की एकरसता को चुनौती दी है तो उसके बिना व्यक्ति के अधुरेपन को भी नहीं बख्शा है।''(2)

मृदुला जी एक ही लीक पर कहानियाँ नहीं लिखती, नारी–पुरूष संबंधों के अलावा अपने आर्थिक राजनैतिक तथा सामाजिक संदर्भों की भी कहानियाँ लिखी है। आपकी कहानियों का दायरा अत्यंत व्यापक है। आपकी कहानियों के संबंध में बलराम जी लिखते है –''मृदुला गर्ग की कहानियाँ अनेक महिला कथाकारों की तरह सास–बहू के आँसू तोड़ प्रंसगों से अलग हटकर है और सिर्फ नारी जीवन पर ही केन्द्रित नहीं है। इन्होंने भी मानव

जीवन के विभिन्न पक्षों को विभिन्न कोणों से छुआ है और हिंदी साहित्य को कुछ अविस्मरणीय कहानियाँ दी है।''(3)

मृदुला गर्ग अपनी कहानियों में कथ्य और शिल्प दोनों को महत्व देती है। इस संदर्भ में मृदुला जी का मत है –''शिल्प कथ्य में से निकलता है। कथ्य में मौलिक तत्व होंगे तो शिल्प में भी प्रयोग होगा।। केवल शिल्प का चमत्कार कथ्य को नवीनता नहीं दे पाता। ज्यादातर नये शिल्प का प्रयोग वही करता है जिसके पास कुछ नया कहने की इच्छा हो। सफलता कितनी मिल पाती है, वह अलग बात है। ''(4)

मृदुला गर्ग की कहानियों में वर्णनात्मक शैली, विश्लेशणात्मक शैली, आत्मकथात्मक शैली, परस्मैपंदीय शैली, पूर्वादीप्त शैली, वार्तालाप शैली, स्वपन शैली फैंटेसी शैली, पत्र शैली, आंचलिक शैली का प्रयोग एवं प्रतीक, बिम्ब, भाषा (अंलकारिक भाषा, व्यंग्यात्मक भाषा) आदि एवं आवश्यकता पड़ने पर अंगरेजी, उर्दू, बंगाली, क्षेत्रिय बोली एवं भाषा का प्रयोग आपकी कहानियों को विशिष्ट और सुंदर बनाती है।

मृदुला गर्ग की निम्नलिखित कहानियाँ सम्मिलित है।

	कहानी		**कहानी संग्रह**
1.	खरीदार	–	ग्लेशियर से
2.	तीन किलों की छोकरी	–	शहर के नाम
3.	चकरघिन्नी	–	शहर के नाम
4.	बाहरी जन	–	शहर के नाम
5.	जीरो अक्स	–	मृदुला गर्ग की यादगारी कहानियाँ

राजी सेठ

आठवें दशक की प्रसिद्ध कथाकार राजी सेठ अपने–आस–पास के वातावरण से प्रभावित होकर अपनी कहानी के पात्रों की रचना करती है और इन पात्रों के माध्यम से मानवीय सोच को एक वृहत्त आयाम देती है। आप कहानी को छोर तक ले जाने या उसको सही मोड़ देने के लिए किसी चमत्कार का प्रयोग नहीं करती है। आपकी कहानियाँ सूक्ष्मता, सघनता, भाषा के भेदक व्यवहार और अंतर्दृशिट की अचूक काट एवं अर्थवत्ता लिए होती है।

राजी सेठ की कहानियों के संबंध में प्रभाकर श्रोत्रिय लिखते है कि – ''राजी ने अपनी कहानियों में वर्तमान की भूमि पर जमकर संघर्ष करने के लिए गत और आगत मूल्यों के विध्यात्मक अर्थों की खोज की है। वास्तव में विध्यात्मकता स्वयं नकारात्मक मूल्यों का निषेध है। यह प्रहार की एक शैली भी हो सकती है, जिसे राजी ने भली भँति जाना–समझा है। व्यक्ति और परिवार की सीमा में वे बहुत कुछ असीम कहती हैं। वे सपाट मॉडल रचकर एक रूढ़ि को तोड़ते हुए दूसरी रूढ़ि नहीं बनाती। पुरूष की निष्करूणता और करूणा को

एक साथ प्रचलित उपादानों के विभिन्न संयोजनों में रखकर अनुभव की पूर्णता और सृजनात्मक सामर्थ्य का परिचय देती है।

राजी उन लेखकों में से नहीं है जो चीजों को स्थान भष्ट, रूपभ्रष्ट, अनुभव भ्रष्ट करने को कला की क्षमता मानती है। वे नैसर्गिक रचती हैं अपने लेखन में न तो वे स्त्री होने से इंकार करती है, न उसे नषट करती हैं बल्कि उसे अपने जैविक नैसर्गिक रूप में स्थित करके उसकी भाक्ति और सम्भावना का सृजनात्मक उपयोग करती है। इस स्वीकार के भीतर कितने ही नकार रचते हुए राजी ने यथा स्थिति में जितने हस्तक्षेप किये हैं, उन्हें उनकी आधुनिक पहचान के लिए देखना जरूरी है। राजी की स्त्री ने पराजित पुरूष को, बल्कि व्यवस्था को, जितनी भंगिमाओं में उकेरा है और अपनी विध्यात्मक दृष्टि से जो मूल्यवत्ता अर्जित की है। उससे नये–नये सृष्टयर्थ प्रकट हुए है। वे स्त्री की खोट को भी पहचानने की कोशिश करती हैं और भरसक निरपेक्ष बनी रहकर अधिक विश्वसनीय होती है।''(5)

राजी सेठ अपनी कहानियों को विश्वसनीय और ठोस एवं प्रभावशाली बनाने के लिए संक्षेप में बिम्ब, प्रतीक, शिल्प, भाषा का सूक्ष्म तथा मनोविश्लेषण का कारगार प्रयोग करती है। आपने नारी केन्द्रित विषयों के साथ अन्य विषयों पर भी कहानियाँ लिखी है। ज्यादातर आपकी कहानी के केंद्र बिन्दु नारी ही रही है। आपकी कहानी में एक ओर वैवाहिक जीवन में होते उतार–चढ़ाव से गुजर कर वैवाहिक बंधन को बचाये रखने की कोशिश एवं संघर्ष करती स्त्रीपात्र की पीड़ा है तो दूसरी तरफ नारी प्रेम और विवाह के पुरानी मानसिकता की जंजीरो को तोड़ती नजर आती है, तो कहीं अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष करती नारी, तो कहीं, महानगर के कुण्ठाग्रस्त जीवन, संबंधों की टूटन, आर्थिक दबाव आदि देखने को मिलते है।

राजी सेठ की कहानियाँ व्यक्ति के मन में गहरा निशान छोड़ जाती है। व्यक्ति मन को परत–दर–परत खोलती है। राजी सेठ की निम्नलिखित कहानियाँ सम्मिलित की गई हैं–

कहानी		कहानी संग्रह
1. मेरे लिए नही	–	गमे हयात ने मारा
2. अंधे मोड़ से आगे	–	सदियों से

अलका सरावगी

अलका सरावगी जी की कहानियाँ जीवन के आस–पास के वातावरण, स्थितियों का, आम–आदमी के चरित्र के इर्द–गिर्द बुनी हुई होती है। अपनी कहानियों के माध्यम से सामाजिक उतार–चढ़ाव, राजनैतिक उथल–पुथल को, नारी स्वतंत्र्य व अस्तित्व, सुरक्षा के प्रति सवाल उठाती है जो एक इंसान के मन–मस्तिष्क में हलचल मचा देती है।

अलका सरावगी ने मध्य व निम्नवर्ग की सामाजिक व आर्थिक स्थितियों को बड़े ही सूक्ष्म व सरलता से अपनी कहानियों में व्यक्त किया है। आपकी कहानियाँ जीवन को नये ढंग से जीने की जिजीविशा, अनेक संघर्षों व कष्ट को झेल कर भी जीवन के प्रति आस्था बनाये रखने का संदेश देती है। अपनी कहानियों के संबंध में लेखिका स्वतः लिखती है – ''पहली रचना की संयोगवश हुई चर्चा के कारण उत्पन्न एक तरह की स्नावयिक ऊर्जा में आगे कहानियाँ लिखी गई जो मूलतः किसी एक चरित्र के इर्द–गिर्द बुनी जाकर प्रेम, स्वतंत्रता, अस्मिता जैसे शब्दों के अर्थ तलाशती थी।.........कहानियों में भी किसी–न–किसी स्तर पर उस अन्याय का विरोध था, जो हम अपने को सुरक्षित रखते हुए प्रेम और स्वतंत्रता जैसे शब्दों के साथ करते है। बात सीधी सी है– यदि स्वतंत्रता और प्रेम हमारे लिए सचमुच मूल्य हैं तो हमारी कोशिश होगी कि दूसरों को भी हम इन्हें दें। पर होता अक्सर यह है कि हमारे लिए ये मूल्य नहीं होते, बल्कि सिर्फ अपने लिए बटोरी गई सुविधा मात्र होते हैं। .... स्वतंत्रता शब्द बचपन से ही मुझे बहुत लुभाता रहा है और तभी से आसमान और चिड़ियाँ मुझे जैसे इस शब्द का अर्थ देते रहे है। इसका कारण शायद एक बंद समाज में स्त्री होने की विवशता और उससे जुड़ा अपमान ही रहा होगा। .... किंतु जैसा कि आप अन्य कहानियों में महसूस कर पाएँगे, मुझे अपनी शक्ति को जानने के लिए पुरूष–विरोधी होने की कभी जरूरत नहीं हुई। बल्कि मैंने यह जाना कि एक स्वस्थ विकसित संवेदना वाले समाज में ही स्त्री पूरे आत्मविश्वास, स्वतंत्रता और सम्मान के साथ जी सकती है, इसलिए जरूरत उस समाज को ही बनाने की है। लोग यदि ताकत की भाषा बोलेंगे तो स्त्री सबसे पहले असुरक्षित होगी। मुझे यह भी लगता है कि स्त्री का माँ होना उसकी जैविक और भावनात्मक जरूरत है– उसकी दूसरी भूमिकाएँ इस सत्य को स्वीकार करके ही तय करनी होगी। शायद एक स्वस्थ करूणावान समाज में अधिकारों के बँटवारे का झगड़ा भी नहीं रहेगा – उसमें स्त्री दलित और अल्पसंख्यक अपने को इस तरह चारों ओर से धिरा हुआ महसूस करेंगे। मैंने प्रायः देखा है कि अहन्मयता, स्वार्थपरता और असहिष्णुता जब जीवन का तर्क बन जाते है, तो वे सारे कमजोरों पर ही जोर आजमायश करते है।

अंत में अपनी कहानियों के बारे में एक और बात। मैं मानती हूँ कि कहानी का मूल धर्म बहुत कुछ बदलने के बावजूद आज भी किस्सागोई ही बना हुआ है। इस दृष्टि से वे काफी पुरानी कहानियाँ भी है। मैं खुद यहाँ से उड़ान भर पाने की प्रतीक्षा में हूँ। जीवन बहुत सुंदर और सम्भावनापूर्ण है और आखिर 'हर शौ बदलती है। ''(6)

अलका सरावगी जी की निम्नलिखित कहानियाँ सम्मिलित की गयी हैं।

कहानी		**कहानी संग्रह**
1. बहुत दूर है आसमान	–	कहानी की तलाश में
2. लाल मिट्टी की सड़क	–	कहानी की तलाश में

नासिरा शर्मा

नासिरा शर्मा जी की कहानियाँ मानव के जीवन और जगत को, उसके यथार्थ को उकेरती है। अपनी कहानियों के संबंध में नासिरा जी स्वयं लिखती हैं कि – ''ये कहानियाँ उन इंसानों की है जो बचपन से मेरे साथ है। जिन्होंने मुझे कहीं न कहीं प्रभावित किया है। अपनी जिंदगी से मेरा रिश्ता जोड़ा और मुझे ताजा अनुभूतियों से भरी दुनिया का अलग संसार दिया। उनके परिवेश से निकली कहानियों की तरह उनके पात्रों की अभिव्यक्ति भी उन्हीं की बोली में है जो कथा में रच–बस गई है क्योंकि वह बोली कही मेरी भाषाा भी है।''(7) ''इन सारी कहानियों में उस धारा को संवेदना के समंदर से पकड़ने की कोशिश की है जो मानवीय है। वास्तव में इंसान के अंदर पलती जिजीविशा मुझे सृजन के स्तर पर बाँधती है और जीने की यही छटपटाहट मुझे लिखने की प्रेरणा देती है। ''(8)

नासिरा शर्मा की कहानियों का एक सीमित दायरा नहीं है बल्कि यह देश–विदेश के फलक तक फैली हुई है। आपके लेखन का केंद्र मानवता रहा है। आपकी कहानियाँ मानवता के संबंधों की नई राह गढ़ती है। आपकी कहानियों में एक ओर भारत देश के गाँव से लेकर शहर तक, कस्बे से लेकर नगर तक, नगर से लेकर महानगर तक की सामाजिक आर्थिक–राजनैतिक आदि समस्याओं को, तो दूसरी तरफ ईरान–ईराक में क्षत–विक्षत होती मानवता, सामाजिक अव्यवस्था, राजनैतिक उथल–पुथल एवं वहाँ के लोगों के दिलों में एक संतुलित समाज की इच्छा, उनके परिवेश, दुख–दर्दों का मार्मिक चित्रण किया है। आपने अपनी अधिकांश कहानियाँ नारी को केंद्र में रखकर लिखी है जिसमें नारी के शारीरिक व मानसिक संघर्ष को दिखाया है। आपकी कुछेक कहानियाँ धर्म से संबंधित अंधविश्वास को तोड़ने एवं मुस्लिम महिलाओं को अपने भारीयत कानून का पूरा ज्ञान होने का संदेश देती है। नासिरा शर्मा इस संबंध में लिखती है कि –''इन कहानियों को लिखने के पीछे केवल आक्रोश नहीं बल्कि मेरी एक मानसिकता भी है जो मेरे गहरे संताप को इंगित करती है, जो मेरे अंदर बचपन से एक खौफ की शक्ल में घर कर गया था, जिसने मुझे धार्मिक अनुष्ठानों से दूर रखा, क्योंकि मेरे लिए धर्म का अर्थ था फसाद, घुटन, जड़ता आडम्बर और कठमुल्लापन। खौफ जो मेरे अंदर परत–दर–परत जमता जा रहा था, वह बगावत की शक्ल में हर बंधन को तोड़ने पर उकसाता रहा था। ''(9)

आपकी कहानियाँ हिन्दू मुस्लिम फसाद से पीड़ित निर्धन वर्ग की विडम्बना व्यक्त करती है, तो कहीं पुरूष प्रधान समाज में नारी को भोग की वस्तु समझने के विरूद्ध नारी अपने अस्तित्व अपने मान–सम्मान के लिए संघर्ष करती नजर आती है, तो कहीं नारी पर अत्याचारों की मार, तो कही अधिकारों का हनन का ब्यौरा तो कभी अनमेल विवाह की शिकार नारी के जीवन की छटपटाहट नजर आती है। आपकी कहानियों में भी एक ऐसे इंसान की जीने की छटपटाहट एवं कशमकश नजर आती है, जो निरंतर अपने जीवन में अपने होने के वजूद, अपनी पहचान के लिए संघर्ष कर, रूढ नीति–नियमों को तोड़कर एक नया आसमां एक नयी जमीन चाहते हैं।

नासिरा शर्मा की निम्नलिखित कहानियाँ सम्मिलित की गई है।

	कहानी		**कहानी संग्रह**
1.	अपनी कोख	–	दस प्रतिनिधि कहानियाँ
2.	मेरा घर कहाँ	–	औरत की कहानी
3.	गूंगा आसमान	–	संगसार

मालती जोशी

मालती जोशी ने ज्यादातर मध्यवर्गीय परिवार की, मध्यवर्गीय नारी की स्थितियों एवं घरेलू व पारिवारिक समस्याओं को ही केंद्र में रखकर कहानियाँ लिखी हैं। आपने नारी जीवन के विभिन्न कोणों को, नारी के शारीरिक, मानसिक व आर्थिक शोषण, नारी मन के सूक्ष्म भावों को, मानवता की गहरी संवदेनाओं को सूक्ष्म तथा विस्तृत गहराई से अपनी कहानियों में चित्रित किया है। अपनी कहानियों के लेखन के संबंध में आप स्वतः लिखती हैं –''पिछले तीस–चालीस वर्षों से अनवरत् लिख रही हूँ। सारी कहानियों को अगर एक शीर्षक में बाँधना हो तो कहना पड़ेगा कि ये मध्यम वर्ग के सुख–दुख, राग–द्वेश, आशा–आंकाक्षा से अच्छी तरह परिचित हूँ। मध्यम वर्गीय परिवार या मध्यम वर्गीय नारी मेरी कहानियों का केंद्र बिन्दु रहे हैं।

मेरी कहानियाँ मेरी तरह ही घेरलू है, घर आँगन में सिमटी हुई हैं उनका यह घरेलूपन उनकी कमजोरी भी हैं और शक्ति भी। इसी कारण वे आलोचना का शिकार भी होती है, समीक्षक उन्हें खारिज कर देते हैं और इसी घरेलूपन के कारण वे लोकप्रिय भी हैं .... मुझसे कई बार कहा गया कि मालती जी जरा अपनी चहारदीवारी से बाहर निकलिए और देखिए कि दुनिया कहाँ जा रही है–कि और भी गम हैं जमाने में गृहस्थी के सिवा। मैं इस तथ्य को जानती हूँ और मानती भी हूँ, पर क्या करूँ, कथा–बीजों के लिए बाहर भटकना मेरी फितरत में नहीं है। मैं यह स्वीकार करती हूँ कि मेरा अनुभव – क्षेत्र सीमित है,

पर मुझे इसका मलाल नहीं है। मुझे अपने आस–पास ही इतने कथा–बीज मिल जाते हैं कि बाहर झाँकने की जरूरत ही नहीं पड़ती। केवल अपने को बहुत सिद्ध करने के लिए मैं नई–नई कहानियाँ गढ़ नहीं सकती और मैं मानती हूँ कि उधार के अनुभवों से किसी श्रेष्ठ रचना का निर्माण नहीं हो सकता। एक और बात अपना औरत होना मुझे कहीं से भी हीन नहीं करता। अपने स्त्रीत्व का मैं प्राणपन से जतन करती हूँ। मेरी कहानियों में एक सौम्य–शालीन परिवेश बना रहता है। न मेरा कथ्य कभी मर्यादा का अतिक्रमण करता है, न भाषा औचित्य की सीमा लाँघती है और इसके लिए मुझे कोई प्रयास भी नहीं करना पड़ता। मैं तो इसी प्रकार के वातावरण में पली बढ़ी हूँ, इसलिए मेरे लिए यह सब सहज और स्वाभाविक है।''(10)

मालती जोशी जी की अधिकांश कहानियाँ नारी केन्द्रीत हैं। अपनी कहानियों में स्त्री जाति के दर्द के आवेग का अपने आपको प्रमाणित करने की कसक का, अपने अस्तित्व को बचाए रखने की कोशिश करती नारी का सजीव चित्रण किया है तथा पुरूष प्रधान समाज की दोहरी मानसिकता की, सामाजिक विडम्बनाओं की शिकार स्त्री की स्थिति के यथार्थ का सही निरूपण कर, नारी की मनोदशा को अपनी कहानी में अत्यंत सहजता के साथ प्रस्तुत किया है।

मालती जोशी की निम्नलिखित कहानियाँ सम्मिलित की गई हैं –

	कहानी		कहानी संग्रह
1.	पिया पीर न जानी	–	'पिया पीर न जानी'
2.	पंख तोलती चिड़िया	–	'पिया पीर न जानी'
3.	हिरोइन	–	शापित शैशव तथा अन्य कहानियाँ
4.	एक क्रांति सीमित सी	–	शापित शैशव तथा अन्य कहानियाँ
5.	अवसान एक स्वप्न का	–	औरत एक रात
6.	बोल री कठपुतली	–	बोल री कठपुतली

मृणाल पांडे

मृणाल पांडे की कहानियों मे एक नयापन दिखाई देता है। आपकी कहानियाँ कथा–रस से भरपूर होती है। कहानियों में कहीं–कहीं कविता का रस तो कहीं लचीलापन भी दिखाई देता है। आपकी अधिकांश कहानियाँ नारी केन्द्रित विषयों पर लिखी गई है। जो नारी स्वतंत्र्य पर सवाल उठाती है। आपकी कहानियाँ आज के जीवन के अनुरूप होती है जो अंत में भले ही कोई संदेश दे या न दे परंतु झूठ की दीवार को लांघ कर यथार्थ को प्रकट करने की कोशिश करती है। आप अपनी कहानियों में जीवन की व्यापकता के साथ–साथ उनके अनुभव एवं संवेदना को चित्रित करती है। मृणाल जी अपनी कहानियो के संबंध में

स्वयं लिखती है। कि –'' हर कहानी या उपन्यास घटनाओं – पात्रों के जरिये सत्य से एक आंशिक और कोतुहल भरा साक्षात्कार होता है। साहित्य हमें जीवन जीना सिखाने की बजाए टुकड़ा–टुकड़ा ''दिखाता '' है, वे तमाम नर्क – स्वर्ग, वे राग–विराग, वे सारे उदारता और संकीर्णता भरे मोड़ जिनका सम्मिलित नाम मानव जीवन है, जो साहित्य उघाड़ता है, वह अंतिम सत्य या सार्वभौम आदर्श नहीं बहुस्तरीय यथार्थ होता है। हाँ यदि जीवन में आदर्श या सत्य अनुपस्थित या अवहेलित है, तो उस विडंबना को भी वह जताता जाता है।

मेरी तहत साहित्य को रचना परोक्ष रूप से सत्य से आंशिक साक्षात्कारों की ऐसी ही एक श्रंखला पाठकों के लिए तैयार करना होता है, जिसके सहारे एक सहृदय व्यक्ति अपनी चेतना, अपनी संवेदना और अभिव्यक्ति – क्षमता का सहज ही कुछ और विस्तार होता पाए। चिंतन परक लेख और रचनात्मक लेख के बीच का फासला तर्क संगत ज्ञान और संवेदनात्मक समझ के बीच का फासला है।''(11)

अपनी कहानियों में तीखे–व्यंग्य, संरचना कौशल, सशक्त शब्दावली सार्थक बिम्ब–प्रयोग, ताराशी भाषा आदि आपकी कहानियों को विशेष बनाती है।

आपकी निम्नलिखित कहानी सम्मिलित की गई हैं।

	कहानी		**कहानी संग्रह**
1.	लड़कियाँ	–	'चार दिन की जवानी तेरी'

सूर्यबाला

''सूर्यबाला की कहानियों के संबंध में हमेशा कहा जाता है कि आपकी कहानियाँ कथ्य और शिल्प के अपने पुराने प्रतिमानों को हर बार तोड़ कर नये कथ्य और शिल्प के रूप में नजर आती है। आपकी कहानियाँ में एक तरफ स्त्री–पुरूष संबंधों के नायाब और अबोध रहस्यों को, तो कभी भावुकता के अनूठे रस को रचती है। कहानियों में चलने वालें चलन से आप हमेशा दूरी ही बनाये रखी है, परंतु इसका यह अर्थ बिल्कुल भी नहीं है कि आप समय की सच्चाइयों से इंकार करती है। आप अपनी कहानियों के कैनवास पर तीखे और तेज रंग–रेखाओं के प्रयोग से भी बचती है।

''आपकी कहानियों में दिखावा नहीं है बल्कि जीवन की सच्चाईयाँ है।''(12) आपकी कहानियों के संबंध में डॉ. चंद्रकांत बंदिवडेकर लिखते है कि–'समकालीन कहानी के सर्वाधिक प्रमुख स्वर व्यंग्य, करूणा, निषेध, विद्रोह और लाइट ह्यूमर तो सूर्यबाला की कहानियों में एक खास अंदाज में व्यक्त होते ही है। उनकी कहानियों में एक सूक्ष्म – सी प्रयोगशीलता भी है और यह प्रच्छन्न कारीगरी कुछ कम चमत्कार नहीं पैदा करती । उनकी इस विशिष्टता की पहचान ही उनकी कला का मर्ग पकड़ना है। वैसे सूर्यबाला में भावनात्मकता का पहलू अधिक जोरदार है परंतु प्रतिभावश और कलात्मक औचित्य की माँग

पर वे कहानी में जिस सूक्ष्म वैचारिक विश्लेषण का अंडर – करेंट साधती चलती है, उससे पढ़ने वाले को एक बौद्धिक परितृप्ति का आहलद भी मिलता हैं वैचारिक गंभीर्य और दार्शानिक वृत्ति उनकी कहानियों में विलक्षण सादगी के साथ समरस और सर्वत्र उलब्ध है।''(13) सूर्यबाला की कहानियाँ अत्यंत सरस, मार्मिक एवं जीवंत स्पादित करने एवं संवेदना को छूने वाली होती है।

सूर्यबाला की कहानियों के संबंध में मधुरेश जी का मत है–''सूर्यबाला ने सामाजिक विद्रुपताओं के विसादृश्य को गहरी अंतर्दृष्टि के साथ उद्घाटित किया है वे मध्यर्गीय समाज के परिचित यथार्थ को सादगी और विश्वसनियता के साथ अंकित करती है। उनकी कहानियों में कहीं कहीं व्यंग्य की अंतर्धारा भी सक्रिय दिखाई देती है, जिससे वे वर्ग – चेतना को उद्घाटित करने का काम लेती हैं साथ ही सामाजिक अंतर्विरोधों की गहरी पहचान का आभास भी देती है।

सूर्यबाला की कहानियाँ भले ही बहुत आधुनिक किस्म की स्त्री की उपस्थिति को अपना रचनात्मक सरोकार न मानती हो, या फिर सिर्फ व्यंग्य के लिए ही उनका उपयोग करती हो, लेकिन आत्मसजग और आत्मचेतस स्त्री के अनेक रूप उनकी कहानियों में मौजूद हैं। उनके यहाँ स्त्री की भूमिका पति के विरोध और कैसी भी स्पर्धा से अधिक निष्ठापूर्वक अपनी बची लड़ाई लड़ने में है। ''(14)

सूर्यबाला ने अपनी कहानियों के पात्रों के माध्यम से एक आम आदमी के मानसिक भँवर की गहराई को, गंभीरता को, अनगित संवेदनाओं को जटिल तनावों को, जीवन के सफल–असफल प्रयासों को, नारी की अत्यंत संवेदनशीलन भावनाओं को, दारूण स्थिति से संघर्ष की गाथा को, आंतरिक एवं बाह्य–ह्रदय विदारक संघर्षों आदि को अत्यंत कलात्मक ढंग से चित्रित किया है।

आपकी कहानियाँ गाँव से लेकर शहर, शहर से नगर, नगर से महानगर तक के उच्च, मध्य और निम्न वर्गों के रीतते मानवीय संबंधों एवं तेजी से निगल जाने वाली व्यवसायिकता को, प्रेम के गहरे अनुभव तथा अहसासों का भी रूप दिखाती है। आपकी कहानियाँ व्यक्ति को विश्वसनीय एवं विवेकशील होने का संदेश देती है।

सूर्यबाला की निम्नलिखित कहानियाँ सम्मिलित की गई है।

कहानी		**कहानी संग्रह**
1. 'गीता चौधरी का आखिरी सवाल'	–	गृह प्रवेश
2. पुल टूटते हुए	–	दिशाहीन मैं

मेहरून्निसा परवेज

मेहरून्निसा परवेज ने अपनी कहानियों में सर्वहारा वर्ग, शोषित वर्ग एवं मुख्यतः बस्तर जिले के आदिवासियों की दरिद्रता, शोषण, समस्याओं आदि को प्रस्तुत किया है। आप नारी हितैशी होने के कारण नारी मन की विवशता उसके दुख–दर्द, समस्या, तड़प, संघर्ष, नारी की सूक्ष्म से सूक्ष्म संदवेदना को पहचानने की क्षमता रखती है। मेहरून्निसा जी के अनुसार– ''नारी स्वतत्रंता के लिए किया जाने वाला काम पर्याप्त नहीं है। यह सब ढकोसला है। उसे जो मिला है, वह सब अधूरा और बनावटी है। उसे इस अधूरेपन और बनावटी जीवन में स्वयं निकल कर आत्मनिर्भरता और स्वाभिमान से जीना है तथा छोटे छोटे दुखों से निकल कर स्वयं को मजबूत करना है।''(15)

आपने अपनी कहानियों में आम जन जीवन के सुख–दुख गरीबी, आर्थिकाभाव से पीड़ितों की मनोवस्था का चित्रण किया है। आपकी कहानियों में कही पुरूष मन की ईर्श्या है तो कहीं पति–पत्नी के आपसी ऊब, खीज व तनाव है, तो कहीं एक निंदनीय, घृणित पति अपनी पत्नी की दया का पात्र है, तो कही पुरूष के स्वतंत्र जीवन और नारी की कठिनाईयाँ देखने को मिलती है।

आपकी अधिकतर कहानियाँ पुरूष पर आश्रित नारी की कहानी है जो कभी समाज के बनाए बंधंनो नियमों के कारण आश्रित है तो कभी आर्थिक रूप से कमजोर या अपनी ही कोमल–भावुक होती भावनाओं से मजबूर होकर पुरूष पर आश्रित है आपने एक ओर दहेज और अन्य सामाजिक बुराइयों व गहन विषयों को, तो कहीं अशिक्षा के दोष को उजागर किया है। देश विभाजन की पीड़ा, खून खराबा है तो कही, गाँव के निम्न वर्ग में अंधविश्वास व जादू टोना में यकीन रखने वालों की आस्था का वर्णन है। आपने आर्थिक तनाव, स्वंच्छद एवं अनैतिक संबंधों आदि विषयों को भी अपनी कहानियों का विषय बनाया है। आपने कहानियों के माध्यम से समाज की बुराइयाँ जन–जीवन की घटनाओं, व्यक्तिगत अनुभव, भावनाओं को बड़े ही मार्मिक ढंग से उकेरा है।

आपकी कहानियाँ मानव मन को झकझोर देने एवं उचित या अनुचित को सोचने और समझने को विवश कर देती है।

आपकी कहानियाँ सामाजिक कहानियाँ है जिसमें समाज में व्याप्त समस्याओं को किसी–न–किसी रूप में व्यक्त करती रही है। आपकी अधिकांश कहानियाँ नारी समस्याओं, कुण्ठाओं आदि को दिखाती है। वर्णनात्मक पद्धति, आत्मकथा पद्धति, आधुनिक पद्धति (फ्लैश बैक), प्रश्न–शैली प्रतीक शैली एवं सहज–सरल शब्दावली, तत्सम शब्दावली आदि का प्रयोग कहानी को विशेष, मजबूत तथा देशी–विदेशी, लोक प्रचलित शब्दों अंग्रेजी, अरबी,

उर्दू–फारसी भाषााओं का एवं अंलकार, सूक्ति–वाक्यों मुहावरों का प्रयोग कहानी को स्वाभाविक एवं सुंदर बना देती है।

आपकी निम्नलिखित कहानियाँ सम्मिलित की गई है–

	कहानी		कहानी संग्रह
1.	बीच का दरवाजा	–	गलत पुरूष
2.	अयोध्या से वापसी	–	अंतिम चढ़ाई

क्षमा शर्मा

क्षमा शर्मा की कहानियाँ फैशन की चका – चौंध से एकदम परे अपनी एक अलग ही लीक बनाती है। आप जो स्वयं देखती और महसूस करती है अपनी कहानियों में उसे दिखाती भी है। आपकी कहानियाँ आत्मविश्वास, यथार्थवाद, समझ, मानवता उदार दृष्टिकोण एवं कलात्मक तटस्था से परिपूर्ण होती है और यहीं आपकी कहानियों की विशेषता भी है। आपकी कहानियों में पर्यावरण प्रेम, शहरी जीवन के उतार–चढ़ाव के प्रतिबिंब के साथ–साथ रूढ़िग्रस्त परम्पराओं, मूल्यों का विरोध भी दिखाई पड़ता है। सभ्य और शिक्षित समाज में नारी की स्थितियों का मार्मिक चित्रण किया है। पारिवारिक रिश्तों के बीच प्रेम और उसमें घुल मिल जाने की ललक भी । तो कहीं भारतीय स्त्रियों के जीवन के बनते बिगड़ते, टूटते–बिखरते रिश्तों के बीच होते द्वंद्व, तो कहीं मानवीय रिश्तों की गर्माहट भी दिखाई पड़ती है। ''(16)

आपकी कहानियों के संबंध में विष्णु नागर जी लिखते है– ''क्षमा शर्मा की कहानियाँ स्त्री की दुनिया के जितने आयामों को खोलती है, उसके जितने संभवतम रूपों को दिखाती है, स्त्री के बारे में जितने नियमों और धारणाओं को तोड़ती है, ऐसा कम ही कहानीकारों की कहानी संग्रहों में देखने को मिलता है। क्षमा शर्मा हिंदी लेखकों की आम आदतों के विपरीत अपेक्षा छोटी कहानियाँ लिखती है जो अपने आपमें सुखद है। उनकी लगभग हर कहानी स्त्री–पात्र के आस–पास घूमती जरूर है मगर क्षमा शर्मा उस किस्म के स्त्रीवाद का शिकार नहीं है जिसमें स्त्री की समस्याओं के सारे हल सरलतापूर्वक पुरूश को गाली देकर ढूंढ लिए जाते है। इसका मतलब यह नहीं है कि वह पुरूषों या पुरूष वर्चस्ववाद को बख्शती है, उसकी मलामत वे जरूर करती है और खूब करती है मगर उनकी तमाम कहानियों से यह स्पष्ट है कि उनके एंजेडे में स्त्री तकलीफें, उसके संघर्ष और हिम्मत से स्थितियों से मुकाबला करने की उसकी ताकत को उभारना ज्यादा महत्वपूर्ण हैं वह इस मिथ को तोड़ती है कि सौतेली माँ असली माँ से हर हालत में कम होती है या एक विधुर बूढ़े के साथ एक युवा स्त्री के संबंधों में प्यार और चिंता नहीं हो सकती है, जो कि समानवय के

पुरूष के साथ होती है। वह देह पर स्त्री के अधिकार की वकालत करती है, और किसी विशेष परिस्थितियों में उसे बेचकर कमाने के विरूद्ध कोई नैतिकवादी रवैया नहीं अपनाती।

उनकी कहानियों में लड़कियाँ है तो बूढ़ी औरतें भी है, दमन की शिकार वे औरते है जो एक दिन चुपचाप मर जाती है तो वे भी है जो कि लगातार संघर्ष करती है लेकिन स्त्री की दुनिया के अनेक रूपों को हमारे सामने रखने वाली यह कहानियाँ किसी और दुनिया की कहानियाँ नहीं लगती, हमारी अपनी इस दुनिया की लगती है बल्कि लगती ही नहीं है भी। इनमें पात्र हमारे आस–पास हमारे अपने घरों में मिलते हैं बस हमारी कठिनाई यह है कि हम उन्हे इस तरह देखना नहीं चाहते, देख नहीं पाते जिस प्रकार क्षमा शर्मा हमें दिखाती हैं और एक बार जब हम उन्हें इस तरह देखना सीख जाते हैं तो फिर वे अलग व्यक्ति, एक अलग खासियत नजर आती है और हम स्त्री के बारे में सामान्य किस्म की उन सरल अवधारणाओं से जूझने लगते हैं जिन्हें हमने बचपन से अब तक प्रयत्नपूर्वक पाला है, संस्कारित किया है। क्षमा शर्मा की कहानियों की यह सबसे बड़ी ताकत है, उनकी भाषा और भौली की पुख्तगी के अलावा। ''(17)

क्षमा शर्मा की कहानियों के पात्र विशेषकर नारी पात्र ऐसे पात्र है जो अपनी आजादी के साथ जिंदगी जीने के उल्लास, उमंग से भरपूर है। यह पात्र सामाजिक मर्यादाओं एवं रुढ़ परम्पराओं की चट्टानों से टकराकर अपनी राह खुद बनाते हैं जीवन में फरेब, संघर्ष, जोखिम, असफलताओं से यह टूटकर बिखर नहीं जाते बल्कि उसका सामना कर अपनी नई पहचान बना लेते है।

क्षमा शर्मा की निम्नलिखित कहानी सम्मिलित की गई है।

	कहानी		**कहानी संग्रह**
1.	और अब	–	थैंक्यू सद्दाम हुसैन

चंद्रकांता

हिंदी की प्रसिद्ध कहानीकार चंद्रकांता जैसे स्वयं संवदेनशील है, वैसे ही संवेदनशीलता इनकी कहानियों में भी नजर आती है। आपकी अधिकांश कहानियाँ कश्मीर की सरजमीं पर आधारित होती हैं, परंतु ऐसा नहीं है कि वह सिर्फ कश्मीरी वातावरण, कश्मीरियों के ही दुख–दर्दों को व्यक्त करती है बल्कि मानवीय चेतना के कई रंग–रुपों को विस्तृत आयाम देती है।

आपकी कहानियों में ''सच के अलग–अलग चेहरे है जो कभी प्यार और भाईचारे की मिसाल तो कभी कश्मीर और पंजाब का लहुलुहान चेहरा, तो कभी मानवीय निश्छल स्नेह का सागर, प्रेम के अनेक रंग तो कभी अपनी अस्मिता के लिए जद्दोजहद करती महिलाओं का संघर्ष तो कभी बदलते समय में वृद्धों की शारीरिक, मानसिक पीड़ा व मनः स्थिति, यादों के

सहारे जीने की मजबूरी तो कभी आधुनिक व तकनीकी युग में भी लड़कियों के विवाह संबंधी विडम्बनाएँ, रुढ़ सोच तथा मान्यताओं को पारम्परिक मूल्य के नाम पर झूठी शान–शौकत और दिखावें को, तो कभी अपने ही घरों से निष्कासन और अपने ही देश में बेगाने होने की पीड़ा, तो कभी राजनैतिक व्यवस्था के दोगलेपन में एवं भौतिक समृद्धि और औद्योगिक प्रगति के बहाने मशीनी जीवन के घेरे में फंसे आम आदमी के दर्द की व्यथा, उसकी छटपटाहट को, तो कभी ठंडे पड़ते मानवीय रिश्तों के बिखरते रुप को तो कभी अपमान और पीड़ा को झेलते हुए भी भीतरी ऊर्जा और संघर्ष की शक्ति एवं विश्वास के साथ जिंदगी जीने के जज्बे को तो कभी सामाजिक, आर्थिक व्यवस्थाओं से दो–चार होते आम आदमी के मानसिक चिढ़, संघर्ष एवं यातनाओं आदि का चेहरा होता है। अपने लेखन व कहानियों के संबंध में लेखिका स्वतः लिखती है– ''अपने रचना कर्म के दौरान मैने पाया कि रचनाकार पहले–पहले निजी सुख–दुख से ज्यादा जुड़ा रहता है और धीरे–धीरे अनुभव सम्पन्नता से रचकर वृहत्तर समाज के सुख–दुख का शोक्ता बनने लगता है। मेरे लिए लेखन जहाँ भोगे हुए यथार्थ की अभिव्यक्ति है वहीं अनुभव किये सत्य की भी मैंने जिन संदर्भ एवं स्थितियो को शिद्दत से महसूस किया, व्यवस्था के जिन दंशों ने मुझे दशित किया, मैने उन्हें अपनी रचनाओं में डाला है। .... हाँ मैंने सेक्स को वक्ती फायदे के लिए कभी भुनाया नही। .. .. मैंने लेखकीय संस्कारिता को बनाये रखने की कोशिश की और कर रही हूँ। प्रेम और सेक्स जहाँ जीवन की अनिवार्य शर्त बनकर व्यक्ति के बाहरी–भीतरी परिवेश को विश्लेषित करने में मदद देते है वहाँ उनका जिक्र जरूर किया है .... अपने रचना कर्म के दौरान मैंने रचनाओं को पहले मन के भीतर पकते महसूस किया, फिर कागज पर उतारा, परंतु अक्सर कागज पर उतरने तक रचना का स्वरुप बदल जाता है। .... अपने लेखन के लिए मैंने कथ्य आस–पास के जीवन से ही चुने, उन्हें गढ़ने की जरुरत पड़ी ही नहीं क्योंकि माँग पर मैंने लेखन नही किया। हाँ, शिल्प के स्तर पर मैंने अवश्य कुछ प्रयोग किये और कर रही है।

व्यक्तिगत रुप से अपनी रचनाओं पर कुछ कहने से मैं सकुचाती हूँ, क्योंकि मैं कविवर दिनकर के कहे इन शब्दों से सहमत हूँ– ''अपने स्वप्न अपनी कल्पना की व्याख्या कवि (यहाँ लेखन) स्वयं ही नही कर सकता। ''जो कि मैं मानती हूँ कि साहित्य मात्र स्वप्न और कल्पना ही नहीं, जमीनी यथार्थ से भी गहरा जुड़ा है। .... मैं जहाँ मानवीय संबंधों के द्वंद्वों मूल्य–क्षय और अंत जगत मे घटित हलचल को सांवेगिक और वैचारिक धरातल देती हूँ, वही राजनैतिक, सामाजिक व्यवस्था के दोगलेपन और मनुषय विरोधी सत्ता के प्रतिपक्ष में बैठकर शोषित पीड़ित जन के हक में बोलती हूँ। मानती हूँ कि आस–पास गलत होते देखकर चुप रहना संघर्ष विमुखता है और साहित्यिक दायित्व की घोर अवहेलना भी। ..

.... यदि अपनी कहानियों के दोतरफा खुलने वाली वो खिड़कियाँ है, जहाँ एक तरफ समय की चुनौतियाँ और राजनैतिक–सामाजिक व्यवस्था का गुड्डिल जंजाल है, दूसरी तरफ मनुष्य की उम्मीदें, स्वप्न और स्मृतियाँ हैं दोनों के घात–प्रतिघात से जो पीड़ा संघर्ष और द्वंद्व भरे प्रश्न जन्मते हैं, उन्हीं से मेरी कहानियाँ अपनी जमीन पाती हैं। मेरे अनुभव का उत्स भी वही कहीं है और प्रश्नों के उत्तर की तलाश के लिए साहस भी। ''(18)

चंद्रकांता की निम्नलिखित कहानियाँ सम्मिलित की गई है।

कहानी		कहानी संग्रह
1. नूराबाई	–	चर्चित कहानियाँ
2. दहलीज पर न्याय	–	चर्चित कहानियाँ
3. लगातार युद्ध	–	अब्बू ने कहा था
4. तफरीह उर्फ चकई–चकरघिन्नी	–	अब्बू ने कहा था
5. काली बर्फ	–	चंद्रकांता की यादगारी कहानियाँ

निष्कर्षतः–

समकालीन प्रमुख महिला कहानीकारों ने अपनी कहानियों में मानवीय संवेदनाओं के विभिन्न रुपों को, अलग–अलग कोणों से चित्रित किया है परंतु आप सब महिला कहानीकार नारी हितैशी होने के कारण आप सबकी कहानियाँ किसी–न–किसी रुप में नारी केन्द्रीत ही रही है। आप सबने सर्वहारा वर्ग की नारी के जीवन में हुए परिवर्तन को समाज में व्याप्त रुढ़ियों व जटिल संस्कारों को न मानने वाली नारी के जीवन में आयी अनेक विद्रूप समस्याओं से निरंतर संघर्श करने को, मानसिक शोषण से उपजे नारी में हीनता के बोध एवं उसके बाद उस मानसिक शोषण से भी मुक्त होने के प्रयास को, प्रतिकूल परिस्थितियों में धैर्य और साहस का दामन पकड़े हुए घुटने न टेककर नारी हित की लड़ाई को, जीवन के बहुविध प्रंसगों को, जीवन के कटु–अनुभूतियों को, कामकाजी नारी को, कल–कारखानों में खटने वाली नारी के संघर्ष को, टुकड़ों–टुकड़ों में बँटती नारी मन की पीड़ा को, उसके संवेदनशील अभिव्यक्ति को, प्रेम व विवाह के कारण नारी समस्याओं को, काले–गोरे रंग से आँकते नारी की सौंदर्यता को, नारी के मन–मस्तिष की भावात्मक तरलता, उसकी आशा–आंकाक्षाओं को, तनाव–कुण्ठाओं को, अतंर्द्वद्व और मानसिक उथल–पुथल के भँवर में फंसी नारी के कभी सहानुभूति के तो कभी घृणा के पात्र बनने को, पति–पत्नी के बनते–बिगड़ते रिश्तों को, पारिवारिक खोखलेपन को, पुरुष सत्तात्मक समाज में नारी के साथ किये गये आमानवीय, निर्मम, क्रूर व्यवहार को, शिक्षित व अशिक्षित नारी की विडम्बनाओं को, नारी का अपने अधिकारों के प्रति पहले से सजग व सक्रिय रुप को, नारी के स्वावलंबी एवं स्वाभिमानी, आत्म–विश्वास से परिपूर्ण रुप को, नारी व्यक्तित्व, अस्तित्व व

स्वतंत्र विचारों को, नारी चेतना, नारी अस्मिता को तो कभी नारी के बोल्ड तथा बेबाक चरित्र को, तो कभी नारी की कामवासनाओं को, तलाक शुदा नारी के जीवन में दमघोंटू नियमों और सामाजिक कायदों की जंजीरों में फंसकर मजबूर हो जीवन बिताने को तो कभी अपने आपको मजबूत व सशक्त बना कर अकेले जीवन निर्वाह करने की शर्त को, नारी के साथ होते यौन–शोषण को, मर्यादाओं के नाम पर रौंद दी जाने वाली एवं आत्मछलनी होती नारी को, नारी शिक्षा आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, पारिवारिक समस्याओं आदि विषयों पर जमकर लेखनी चला कर अपने रचनात्मक प्रतिभा और एक विशिषट साहित्यकार होने का परिचय व सबूत दिया है।

यें महिला कहानीकार नारी की प्रबल हिमायती रही है। महिलाओं की स्थितियों के संबंध में मृदुला गर्ग का मानना है–''स्त्री कहीं की हो, किसी वर्ग की हो– पुरुष के लिए वह महज देह है। उसके भ्रम का शोषण और उसका यौनशोषण ही जैसे उसकी नियति है।'(19)

नासिरा शर्मा का कहना है कि– ''स्त्री के लिए जितनी भी जीवन द्रोही स्थितियाँ समाज ने निर्मित की हो स्त्री ने प्रकृति को शुरू से पहचाना है जबकि उसका कोई निजी जीवन या निजी एंकात नहीं रहा है। आम तौर पर स्त्री एक समूह के, सामूहिक जीवन के अंक रुप में ही अपना जीवन जीती आई है। उसकी आत्माभिव्यक्ति की चाहत ने ही लोक में अनगिनत रंग–रुप धारण किये है और इस तरह संसार भर में रचे गए लोकगीतों, लोक–कथाओं और लोक–कलाओं मे स्त्री के सामूहिक अनुभवों अभिव्यक्तियों के सम्पन्न स्वरुपों को देखा जा सकता है, जीवन के स्पंदन को महसूस किया जा सकता है। हर व्यक्ति, हर स्त्री के भीतर एक पूरा संसार होता है। एक समय था जब अधिकतर स्त्रियाँ अपने साथ उसे ज्यों का त्यों लेकर चली जाती है। ''(20)

क्षमा शर्मा का कहना है कि – ''जहाँ स्त्री पूरी उम्र दाल–भात पकाने में गुजार देती है मगर वह घर उसका कभी नहीं होता, जो कुछ है सो पति यानी पुरुष का है पति से पहले उसके पिता का था और पति के बाद बेटे का होगा। हाँ इस श्रृंखला को चलाने के लिए बीच की कड़ी वह स्त्री है जो बच्चों को जन्म तो देंगी मगर नाम मिलेगा पति का वह रात–दिन हाड़–तोड़ मेहनत तो करेंगी लेकिन घर की किसी चीज पर उसका हक नहीं होगा। .... सारी चल–अचल सम्पत्ति की दावेदारी और भागीदारी सिर्फ पुरुषों के बीच में ही होती रही है। माँ बहने, बेटियाँ सब इस अधिकार से वंचित रही है। आज मगर उन्हें कानूनी अधिकार मिला भी हो तो भी संपत्ति में अक्सर हिस्सा देने की कोई बात सोचता भी नहीं है। परिवार में घर के हर सदस्य की देखभाल की जिम्मेदारी अक्सर स्त्री की होती है लेकिन इसे उसके कर्तव्यों से जोड़कर देखा जाता रहा है। उसका यह श्रम कभी रेखांकित

नहीं किया जाता। इसे केयर इकॉनामी का नाम दिया जाता है।............. सबसे दुखद पहलू यह है कि यही केयर इकॉनामी स्त्रियों के प्रति हिंसा का कारण बनती है। कितने घरों में औरतों की सिर्फ इसलिए पिटाई की जाती है कि उन्होंने वक्त पर खाना नहीं बनाया। .... महिलाओं के घर से निकलकर सिर्फ राजनैतिक ही नहीं सामाजिक मुद्दों में भी जोड़ा गया। .... स्त्रियों के इतिहास में यह पहली बार है कि इतनी बड़ी संख्या में औरतें घर से बाहर निकलकर अपने पैरों पर खड़ी है।............इतना आत्मविश्वास और कुछ कर दिखाने की ललक भी औरतों में पहली बार दिखी है। मगर यह तभी हुआ जब औरतों को कुछ कर दिखाने का मौका मिला है।............. औरतों के प्रति बढ़ते यौन अपराध इस बात का प्रमाण है कि अब भी समझते हम उसे मात्र सेक्स आब्जेक्ट ही हैं। उसके प्रति अपराध कहीं भी हो सकते है घर में, दफ्तर में, सड़क पर ट्रेन में, हवाई जहाज में। नारी शिक्षा, नारी–मुक्ति, नारी–शक्ति जैसे आंदोलन हर जगह चलाये जा रहे है। क्या इन सबके साथ समाज अपनी मानसिकता को बदल सका............? यह प्रश्न बार–बार सर उठाता है। औरत के न जाने कितने चेहरे उभर आते है, कितनी ही घटनायें मन के तारों को झंकृत करने लगती हैं। कभी–कभी एवं अपनी कसौटियों के धरातल पर विचलित हो जाने का भय लगता है। समाज की आँखों में दया की पात्र बनी नारी स्वरुप न केवल खटकता है साथ–ही–साथ इस दया और सहानुभूति का विद्रोह कर उठने का मन बेचैन हो जाता है। पता नहीं बेचारगी का ये कफन औरत ने खुद अपने अस्तित्व पर डाल रखा है या पुरुषवाद समाज ने उसे उपहार के रुप में दिया है या फिर वह नारी की उपेक्षा कर, उसका तिरस्कार कर, अपनी हृदयहीनता को छुपाने के लिए उसे कमजोर साबित करने में लग जाता है और अपने दिये जख्मों को उसकी बेचारगी की चादर में ढ़कने लगता है। आज भी उसका मुरझाया चेहरा, परपराए होंठ, सूखे बिखरे बाल डबडबाई आँखों से निरंतर बह रहे आँसुओं से भरा चेहरा आँखों में जिंदा होकर उसकी बेबसी की कहानी कह रहा है। ''(21)

मृणाल पांडेय का मानना है कि – '' नारी यदि शिक्षित हो और आत्मनिर्भर हो तभी वह अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो सकती है। तभी उसके अंदर आत्म–विश्वास और रुढ़िगत परम्परा का विरोध करने तथा जीवन को बदल देने की क्षमता पैदा हो सकती है। ''(22)

मेहरुन्निसा परवेज लिखती है कि ''मैंने अपनी कलम से नारी की व्यथा लिखी है, बदले में मुझे क्या मिला ? इसका ब्यौरा मैं नहीं देना चाहती। बस इतना जानती हूँ कि मेरी कहानी को पढ़कर किसी एक नारी को भी जिंदगी का सच मिल जाए तो यह मेरा इनाम होगा। औरत का बोलना समाज ने, घरवालों ने कभी पंसद नहीं किया। औरत चुप अच्छी लगती है, जैसे देवी का रुप। .... औरत जब घर छोड़ती है कुलटा कहलाती है, पर

जब पुरूष घर छोड़ता है तो वैरागी, साधु भगवान, महापुरुष कहलाता है, जैसे तुलसीदास, भगवान बुद्ध। .... औरत केवल मीराबाई बन कर रह जाती है। ''(23)

नासिरा शर्मा, मालती जोशी, क्षमा शर्मा, मृदुला गर्ग आदि समस्त महिला कहानीकारों ने नारी की मनः स्थितियों को, नगरीय जीवन से जुड़ी नारी जीवन को, आधुनिक नारी के जीवन के संत्रास को, दाम्पत्य जीवन की विंसगतियों को, नारी के कभी शांत तो कभी विद्रोह रुप को, नारी के अनेकानेक दिशा और दशा को बड़े ही सजीवता एवं सहजता के साथ अपनी कहानियों में चित्रित किया है। आप सब समकालीन प्रमुख महिला कहानीकारों की यह सबसे बड़ी विशेषता है कि आप अपने साहित्य के माध्यम से नारी–मुक्ति का संदेश भी देती है।

संदर्भ–सूची

1. असफल दाम्पत्य की कहानियाँ – (कहानी संग्रह), चित्रा मुद्गल एवं सुरेन्द्र अरोरा, पृ. सं. 5
2. डेफोडिल जल रहे हैं (कहानी संग्रह), मृदुला गर्ग, (भूमिका से) पृ. सं. 8 एव 9
3. मृदुला गर्ग का कथा साहित्य – डॉ. तारा अग्रवाल, पृं. सं. 51से पुनर्उद्धत (समकालीन हिन्दी कहानी बलराम, पृं. सं. 132)
4. वहीं, पृं सं. 224
5. गमे हयात ने मारा (कहानी संग्रह) – राजी सेठ आवरण पृष्ठ से।
6. कहानी की तलाश में (कहानी संग्रह) अलका सरावगी, पृं. सं. 5 एवं 6
7. सबीना के चालीस चोर (कहानी संग्रह) – नासिरा शर्मा, पृं. सं. 8
8. इब्ने मरियम (कहानी संग्रह) – नासिरा शर्मा, पृं. सं. 8
9. खुदा की वापसी (कहानी संग्रह) – नासिरा शर्मा, पृं. सं. 8
10. रहिमन धागा प्रेम का (कहानी संग्रह) – मालती जोशी, पृं. सं. 7 एवं 8
11. यानी कि एक बात थी (कहानी संग्रह) – मृणाल पाण्डे, आवरण पृष्ठ से।
12. मानुष गंध (कहानी संग्रह) – सूर्यबाला आवरण पृष्ठ से।
13. वही, –''–
14. वही, –''–
15. मेहरून्निसा परवेज और उनका कहानी संसार – डॉ. जाहिदा जबीन (भूमिका से) – पृं. सं. 6
16. लड़की जो देखती पलटकर (कहानी संग्रह) – क्षमा शर्मा, आवरण पृष्ठ से।

17. नेम प्लेट (कहानी संग्रह) – क्षमा शर्मा, आवरण पृष्ठ से।

18. सूरज उगने तक (कहानी संग्रह) – चन्द्रकांता, पृं. सं. – 6,8 एवं 10

19. उपनिवेशवाद से आधुनिकता तक स्त्री कथा – खेमसिंह डहेरिया, पृं.सं. 31

20. वही, पृं. सं. 38

21. वही, पृं. सं. 42

22. वही, पृं. सं. 179

23. सोने का बेसर (कहानी संग्रह) – मेहरून्निसा परवेज पृं. सं. 20

घनश्याम गडाम, एम.फिल. (समाजशास्त्र)

अनुसूचित जाति में सामाजिक परिवर्तन

आज अनुसूचित जाति का चिंतन एक सामाजिक चिंतन है। आज आधुनिकता के आइने में अनुसूचित जाति का विभक्त रूपी चेहरा धूमिल है। आज अनुसूचित जाति का भविष्य वीभत्स परिस्थितियों में सामाजिक एवं धार्मिक चुनौतियों से भरा है, यह शोध का विषय है। आज भी ग्रामीण अचंलों में गंभीर जातीय भेदभाव है। यह भी एक विचारणीय प्रश्न है। हमें आजाद हुए कई दशक हो गये है किंतु हमारे देश का एक वर्ग सामाजिक दूषित वातावरण में जीवन–यापन हेतु विवश है। उनकी अज्ञानता, अशिक्षा, गरीबी, शोषण एवं उनकी अपेक्षा आदि उनके विकासशील मार्ग का बहुत बड़ा अवरोध है। इसे ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध कार्य मध्यप्रदेश के छिन्दवाड़ा जिले के कतिया अनुसूचित जाति में सामाजिक परिवर्तन पर केन्द्रित है।

अनुसूचित जाति –

अनुसूचित जाति मूलतः संवैधानिक अवधारणा है। अनुसूचित जाति शब्द को अंग्रेजों ने कानूनी तथा प्रशासनिक दृष्टि से प्रयोग किया। अस्पृश्य जातियाँ अथवा अछूत कही जानें वाली ये जातियाँ ब्रिटिश शासन में बहुत दिनों तक 'दलित वर्ग' के नाम से सम्बोधित की गयी थी। किन्तु सन् 1931 में जनगणना आयुक्त ने इन्हे 'बाहरी जाति' के नाम से सम्बोधित किया। सर्वप्रथम सन् 1935 में सेण्ट साइमन कमीशन ने अस्पृश्य जातियों के लिये 'अनुसूचित जाति' शब्द का प्रयोग किया, जिसे डॉ. भीमराव अम्बेडकर का भी समर्थन मिला। स्वतंत्रता के पश्चात् संविधान की धारा 341 के अंतर्गत राष्ट्रपति को यह अधिकार श्रेणी के अंतर्गत घोषित कर सन् 1935 में भारत सरकार ने अस्पृश्य जातियों को कुछ सुविधाएं देने के लिये एक अनुसूची तैयार की थी। जिनमें लगभग 429 जातियाँ सम्मिलित किये जाने के कारण ये जातियाँ अनुसूचित जातियाँ कहलाने लगी।

मध्य प्रदेश में कुल 48 अनुसूचित जातियाँ हैं। जिनकी कुल जनसंख्या वर्ष 2011 के जनगणना के अनुसार 1,13,42,320 है, जो कुल जनसंख्या का 15.62 प्रतिशत है। इनमें से बहुत सी अनुसूचित जातियाँ शोध कार्य से वंचित है। कतिया जाति पर भी शोध कार्य का अभाव है। शोध कार्य से वास्तविक तथ्य उभर कर सामने आते हैं, जिससे उनके भावी विकास का मार्ग प्रशस्त होगा। जब तक अल्प संख्यक विकास के मार्ग पर पीछे या अधूरे रहेंगे तब तक हम पूर्ण विकास से लक्ष्य से दूर ही रहेंगें। कुछ अनुसूचित जातियाँ विकास के निम्नतम् स्तर पर है। उत्तरदायी राज्यों के रूप में भौगोलिक, परिस्थितियों की अपेक्षा करना

असंभव प्रतीत होता है। अधिकतर लोग सुदूर दुर्गम एवं कम उपजाऊ क्षेत्रों में रहते है। निम्न स्तरीय ज्ञान, उनके रहन–सहन के स्तर एवं उनकी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ता न प्रदान कर पाना, इसके उत्तरदायी कारक हैं। आज अनुसूचित जाति के लोगों की संख्या बहुत अधिक है। प्रति 6 भारतीयों में एक अनुसूचित जाति का है।

कतिया जाति –

पूर्व में कातिया जाति स्वयं को क्षत्रित जाति का प्रतिबिम्ब मानते थे। गीता में वर्णा की उत्पत्ति के संबंध में कहा गया है, कि चातुवर्ण्य मया सृष्ठं गुण–कर्म विभावशः अर्थात् वर्णों से ही जाति की उत्पत्ति। पाणिनी ने अपनी अष्टाध्यायी में कुछ क्षत्रिय जाति का उल्लेख किया हे। कठ– लेना बहुत प्राचीन आर्य जाति के थे उनका उल्लेख वैदिक साहित्य तथा उपनिषदों में भी मिलता है। उनके नाम पर एक उपनिषद् कालोपनिषद भी लिखा गया है। सिकंदर के आक्रमण कालीन इतिहास ग्रंथों में कठगढ राज्य का बृहद उल्लेख प्राप्त होता है। कठों के संदर्भ में डॉ. ओम प्रकाश अपने पुस्तक प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास (पृष्ठ–44) में लिखा है– सिकंदर के आक्रमण से पराजय और भीषण विनाश से इन्हें पंजाब से उत्तरप्रदेश, राजस्थान एवं गुजरात की ओर पलायन करना पड़ा ऐसा भी उल्लेख मिलता है कि महाराज पृथ्वीराज चौहान तथा जयचंन्द्र की सेनाओं में भी इस वीर जाति सेनानी का कार्य करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि काठियावाड़े से ही इसका विस्तार उत्तर प्रदेश की ओर बढ़ा। मध्यप्रदेश में निवास करने वाली कढो या काठियों में से कुछ के गोत्र नाम नाग, नागहंसी, नागेश, नागेश आदि मिलते है। इनके इष्टदेव शिव है।

गुप्त साम्राज्य के उदय से पूर्व तथा समुद्रगुप्त के काल में (325 ई. से 375 ई.) उत्तर–पश्चिम और मध्य भारत में नागवंश के विस्तृत राज्य स्थापित हुए थे। पराक्रमी एवं समृद्धिशाली नाग राजाओं के प्रभाव से काठिया क्षत्रिय जाति अपने आपको दूर न रख सके तथा दोनों की सांस्कृतिक समन्वय हो गया। होशंगाबाद जिले की सोहनापुर तहसील (म. प्र.) के भटगांव नामक स्थान से प्राप्त जानकारी के अनुसार 13वीं एवं 14वीं शताब्दी में भटगांव नागराजाओं की राजधानी थी।

मध्यप्रदेश में होशंगाबाद कठियों का भी केन्द्र रहा है। संभवतः यही से इस जाति का फैलाव मध्यप्रदेश के शेष भाग में हुआ। अनेक भारतीय इतिहासकारों ने कठ, काठी या काठिया, कातिया को एक ही माना है, तथा इनकी उत्पत्ति क्षत्रियों से मानी गई हैं। इस जाति के उपनामों के गढ़वाल, पठारिया, काठिया, कातिया के रूप में दृष्टिगोचर हैं।

– डॉ. बुद्ध प्रकाश, (काठिया क्षत्रिय जाति की उत्पत्ति एवं विकास, पृष्ठः 7–14)

उक्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट है कि पूर्व की कठ या काठी अथवा काठिया जाति का अवशेष वर्तमान में मध्यप्रदेश की कातिया जाति हैं। कातिया जाति सुदूर जंगलों के ग्रामीण क्षेत्र के निकट बसे हैं। कृषि तथा कृषक मजदूरी इनके आय का स्त्रोत है। कुछ परिवारों के आय का स्त्रोत कृषि है तथा जिनके कृषि भूमि नहीं है। उकने आय का स्त्रोत कृषक मजदूर या अन्य गैर कृषि कार्य से जुड़ा हुआ है। अधिकतर परिवार गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन करते हैं। आज भी इन क्षेत्रों के कृषक पुरानी पद्धति से ही खेती करते है। कातिया जाति के कृषकों के पास कृषि भूमि बहुत कम है। मजदूरी हेतु बहुत से कतिया परिवार के सदस्यों को दूरस्थ शहरी क्षेत्र में मजदूरी हेतु पलायन करना पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली की उपलब्धता बहुत बड़ी समस्या है। ग्रामीण क्षेत्रों में छुआछूत पुराने रीति–रिवाजों तथा परंपराएँ विद्यमान हैं।

तालिका क्रं. 1
भारत, मध्यप्रदेश एवं छिन्दवाड़ा की जनसख्ंया एवं साक्षरता (वर्ष 2011)

जनसंख्या विवरण	छिन्दवाड़ा		मध्य प्रदेश		भारत	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
कुल जनसंख्या	2090922		72597565		1210193422	
पुरूष	1064468	50.91	37612920	51.81	623724248	51.54
महिला	1026454	49.09	34984645	48.19	586469174	48.46
ग्रामीण जनसंख्या	1585739	75.84	52537899	72.37	833087662	68.84
पुरूष	806199	50.84	27142409	51.66	427917052	51.37
महिला	779540	49.46	25395490	48.34	405170610	48.63
शहरी जनसंख्या	505183	24.16	20059666	27.63	377105760	31.16
पुरूष	258269	51.12	10470511	52.20	195807196	51.92
महिला	246914	48.88	9589155	47.80	181298564	48.08

कुल साक्षरता	1294198	71.16	43827193	70.63	778454120	74.04
पुरूष	731294	79.04	25848137	80.53	444203762	82.14
महिला	562904	63.01	17979056	60.02	334250358	65.46
ग्रामीण साक्षरता	907838	66.36	28991005	65.3	493020878	68.9
पुरूष	522433	75.17	17549814	76.6	288047480	78.6
महिला	385405	41.89	11441191	53.2	204973398	58.8
शहरी साक्षरता	386360	85.75	14836188	84.1	285433242	85.0
पुरूष	208861	90.70	8298323	90.2	156156282	89.7
महिला	177499	80.57	6537865	77.4	129276960	79.9

भारत की जनगणना, वर्ष 2011

परिशिष्ट–2

तालिका क्रं. 2

छिन्दवाड़ा जिले के विकासखण्डवार जनसख्ंया एवं साक्षरता (वर्ष 2011)

विकासखण्ड	**कुल जनसंख्या**				**कुल साक्षरता**		
	कुल परिवार	**कुल जनसंख्या**	**पुरूष**	**महिला**	**कुल**	**पुरूष**	**महिला**
तामिया वि.ख.	23290	114176	57684	56492	58.1	67.8	48.2
अरमवाड़ा वि. ख.	32929	159063	80711	78352	66.6	75.8	57.2
हर्रई वि.ख.	28629	135188	67414	67774	56.9	66.3	47.6
चौरई वि.ख.	39489	189470	97567	91903	71.2	79.1	62.9
जामई वि.ख.	49515	240547	121466	119081	61.9	69.8	54.0
परासिया वि.ख.	41582	193536	98568	94968	75.4	83.4	67.2
उमरेड वि.ख.	18419	91457	46365	45092	60.3	69.3	51.2
छिन्दवाड़ा वि. ख.	71107	337144	172361	164783	81.2	87.2	75.0

मोहखेड वि.ख.	34932	168340	85755	82585	71.1	80.5	61.3
सौसर वि.ख.	41871	181692	93465	88227	81.5	87.5	75.1
बिछुआ वि.ख.	18635	87691	44463	43228	70.2	79.1	61.1
पांढुर्णा वि.ख.	42963	192618	98649	93969	76.5	83.4	69.2
छिन्दवाड़ा वि. ख.	443361	2090922	1064468	1026454	72.2	79.0	63.0

भारत की जनगणना, वर्ष 2011

परिशिष्ट–3

तालिका क्रं. 3

छिन्दवाड़ा जिले के विकासखण्डवार अनुसूचित जाति की जनसख्ंया (वर्ष 2011)

विकासखण्ड	कुल अनुसूचित जाति जनसंख्या			
	कुल अनुसूचित जाति	पुरूष	महिला	कुल जनसंख्या से प्रतिशत
तामिया वि.ख.	5839	3002	2837	5.1
अरमवाड़ा वि.ख.	18144	9305	8839	11.4
हर्रई वि.ख.	10800	5470	5330	8.0
चौरई वि.ख.	17544	8936	8608	9.3
जामई वि.ख.	33442	16965	16477	13.9
परासिया वि.ख.	33152	16828	16324	17.1
उमरेड वि.ख.	8935	4512	4423	9.8
छिन्दवाड़ा वि.ख.	44155	22482	21673	13.1
मोहखेड वि.ख.	14271	7261	7010	8.5
सौसर वि.ख.	19871	10220	9651	10.9
बिछुआ वि.ख.	8506	4394	4112	9.7
पांढुर्णा वि.ख.	17585	9090	8495	9.1
छिन्दवाड़ा वि.ख.	232244	118465	113779	11.1

भारत की जनगणना, वर्ष 2011

परिशिष्ट–4

तालिका क्रं. 4
मध्य प्रदेश में अनुसूचित जाति एवं कतिया जाति की जनसख्ंया

विवरण	मध्य प्रदेश के सभी अनुसूचित जाति की जनसंख्या			मध्यप्रदेश के कतिया जाति की जनसंख्या		
कुल जनंसख्या	9155177	4804881	4350296	144644	74583	70061
ग्रामीण जनसंख्या	75.53	52.49	47.51	75.51	51.45	48.55
शहरी जनसंख्या	24.47	52.45	47.55	24.49	51.91	48.09

भारत की जनगणना, वर्ष 2011

परिशिष्ट–5

तालिका क्रं. 5
कातिया जाति की जनसंख्या (मध्यप्रदेश)

वर्ष	जनसंख्या	एक दशक में जनसंख्यात्मक अंतर
1991	121578	23066
2001	144644	

तालिका क्रं. 6
कातिया जाति की जनसंख्या (छिन्दवाड़ा)

वर्ष	जनसंख्या	एक दशक में जनसंख्यात्मक अंतर
1991	35371	4595
2001	39966	

अनुसूचित जातियों में शिक्षा की कमी है। अधिकतर लोग अशिक्षित या अल्प शिक्षित है। सीधे सरल रूप में जीवन–यापन करते हैं। इन समाज की अधिकतर महिलाएं अशिक्षित हैं। शिक्षा का अभाव विकास मार्ग में अवरोधक है। आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में यातायात के

साधनों का अभाव है। जिसके कारण ये लोग अन्य विकसित क्षेत्रों से कटे हुए है। अनुसूचित जाति के विकास कार्यक्रमों एवं योजनाओं के लाभ से बहुत से परिवार वंचित है। उन्हें इनकी जानकारी नहीं है तथा जातिगत भेदभाव में इन्हें आगे बढ़ने से वंचित कर देते हैं। फिर भी आज शासकीय प्रयत्नों तथा विकास की ओर अग्रसर ग्रामीण समाज की पूर्ववत स्थिति में बहुत परिवर्तन दृष्टिगोचर है हालांकि इसकी गति बहुत कम है। आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य वर्गों द्वारा उत्पन्न सामाजिक कट्टरपंथि और सामाजिक अन्याय व्याप्त है। समाज में अशिक्षा, बेरोजगारी, गरीबी, कुपोषण, दरिद्रता, शोषण आदि व्याप्त है।

सामाजिक परिवर्तन :–

परिवर्तन ही प्रकृति है और समाज उसी प्रकृति का अंग है। इस कारण सामाजिक परिवर्तन स्वाभाविक है। जिस प्रकार दिन, रात में, ऋतुओं में और जीवन में बचपन, यौवनावस्था, बुढ़ापा और मृत्यु में बदलाव होना स्वाभाविक है, उसी प्रकार समाज भी सतत् परिवर्तित होता रहता है। सामाजिक परिवर्तन एक विश्वव्यापी प्रक्रिया है। परिवर्तन शब्द को समझाते हुए श्री फीचर ने कहा है कि परिवर्तन पूर्व अवस्था या अस्तित्व के प्रकार में अंतर को कहते हैं। पहले जो अवस्था थी उसमें हुए परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन हैं।

विश्व का कोई भी समाज ऐसा नहीं हे जो बदलाव की प्रक्रिया से प्रभावित न रहा हो। समाज के संस्कृति में सदैव परिवर्तन होता रहता है, अर्थात् सामाजिक परिवर्तन एक विश्वव्यापी प्रणाली है। सामाजिक परिवर्तन समाज में आंतरिक तथा बाह्य अथवा दोनों पक्षों में हो सकता है। किसी युग के आदर्श एवं मूल में हुए बदलाव या नयापन को आंतरिक बदलाव कहते हैं और यदि किसी सामाजिक अंग जैसे– परिवार विवाह, नातेदारी, वर्ग जातीय संरक्षण में हुए बदलाव का नयापन संचरनात्मक बदलाव या बाह्य परिवर्तन कहते हैं।

‘

ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

लक्ष्मण प्रसाद दुबे

शतपथ ब्राह्मण में कर्मकाण्डीय विधान

भूमिका –

आर्यों का प्राचीन धर्मग्रन्थ वेद है। वेदों में कर्मकाण्ड, उपासना काण्ड और ज्ञान काण्ड इन तीन विषयों का प्रमुख रूप से वर्णन है किन्तु इन तीनों में प्रधान स्थान **'कर्मकाण्ड'** का ही है इसलिए वेदों में यज्ञ–यागादिकों का विशेष रूप से वर्णन मिलता है। वेदों का मुख्य विषय यज्ञ होने के कारण यज्ञों में वेद मन्त्रों का प्रयोग होता है। वेदमन्त्रों के बिना यज्ञ सम्पन्न नहीं हो सकते अतः यह स्पष्ट है कि वेद हैं तो यज्ञ है, यज्ञ हैं तो वेद है।

'वेदस्तु यज्ञार्थमभिप्रवृत्ता'[1] अर्थात् वेदों का प्रादुर्भाव यज्ञों के लिए हुआ है। यज्ञ की सिद्धि के लिए ही ऋग्वेद, यजुर्वेद एवं सामवेद की सृष्टि हुई है। वेदमन्त्रों के द्वारा देवताओं को द्रव्य का त्याग करना ही यज्ञ है। द्रव्यं देवता त्याग[2] जिस कर्म विशेष में देवता, हवनीय द्रव्य, वेदमन्त्र, ऋत्विज औरदक्षिणा इन पाँचों का संयोग हो वह यज्ञ कहलाता है–

देवानां द्रव्याहविषां ऋक् सामयजुषां तथा।
ऋत्विजां दक्षिणानां च संयोगो यज्ञ उच्यते।।[3]

यज् का अर्थ देवपूजा लोक प्रसिद्ध है, जिस कर्म में लोग यजमान से अन्नादि की याचना करते हैं, अथवा यजमान ही देवताओं से वर्षा आदि की प्रार्थना करता है, अथवा देवता ही यजमान से हवि की याचना करते हैं उस कर्म को यज्ञ कहते है। अथवा जिसमें यजुर्वेद के मन्त्रों की प्रधानता हो उसे यज्ञ कहते है।[4] यज्ञ में यजुर्वेद के मन्त्रों का विशेष रूप से प्रयोग होता है। अथवा यजुर्वेद के मन्त्रों से यज्ञ का सम्पादन होता है। यज्ञ का पर्याय अध्वर को सम्पन्न कराने वाला वेद अध्वर्युवेद यजुर्वेद ही कहलाता है।

1. विष्णुधर्मोत्तर पुराण 2/104
2. काव्यायन श्रौत सूत्र – 1/1/212
3. मत्स्यपुराण – 144/44
4. निरूक्त – 3/4/19

यज्ञों का स्वरूप

वैदिक कर्म पाँच प्रकारों में विभक्त हैं। **'स एष पञ्च विधोऽग्निहोत्रम् दर्शपूर्ण मासौ, चातुर्मास्यानि, पशुः सोमः।**[1] अर्थात् यज्ञ पाँच प्रकार का है– 1. अग्निहोत्र 2. दर्शपूर्णमास, चातुर्मास्य, पशुयोग और सोमयोग। किन्तु यज्ञों के पूर्व औपासन होम, वैश्वदेव पार्वण,

अष्टका, मासिक श्राद्ध, श्रवणा शूलगव ये सात पाकयज्ञ, अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास आग्रायण, चातुर्मास्य, निरूढ–पशुबन्ध, सौत्रामणी, पिण्डपितृयज्ञ आदि हवि र्होम से सात हवि र्यज्ञ–अग्निष्टोम, अत्यग्निष्टोम, उक्थ्य, षोडशी, बाजपेय, अतिरात्र आप्तोयाम ये सात सोम संस्थाये हैं इन सग श्रौत और स्मार्तों को मिलाकर इक्कीस यज्ञ कहे गये हैं।

स्मार्त अग्नि का आधान काल

आवसथ्य अग्नि का आधान विवाह के समय या पैतृक सम्पत्ति के विभाजन के समय किया जाता है।[2] गौतम धर्म में भी इसी मत का समर्थन किया गया है।[3] इन वचनों के अनुसार विवाह या बटवारे के पश्चात् ही स्मार्त अग्नि का आधार किया जाता है, इन दोनों अवसरों में से विवाह में चतुर्थी कर्म होम होता है, उसके पश्चात् विवाह के अवसर पर आवसथ्य अग्नि का आधान होता है। पारस्कर गृह्यसूत्र में वर्णित विधि से सम्पादित अग्नि स्मार्तग्नि कहलाती हैं।

स्मार्त अग्नि में कर्त्तव्य कर्म

प्रत्येक गृहस्थ व्यक्ति का यह कर्त्तव्य है कि वह विवाह संस्कृत अग्नि में प्रतिदिन स्र्मात कर्म होम आदि करे या दायविभाजन के समय स्थापित अग्नि में अथवा गृहपति के मरने पर गृहीत अग्नि में हवन आदि कार्य करे। अग्निहोत्र आदि श्रौत कर्म भी आवहनीय आदि अग्नियों में करना चाहिए।[1] याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार शान्तिक एवं पौष्टिक आदि कर्म गृह्य अग्नि में ही करना चाहिए। तथापि पौष्टिक आदि कर्म का अनुष्ठान शाला के बाहर करना चाहिए अतः बिना किसी शास्त्रीयवचन के आवसय्य अग्नि को अग्निशाला से बाहर ले जाने में वह लौकिक हो जायगी इसलिए सीमन्त आदि कर्म जिनका बाहर गृह प्रांगण में अनुष्ठान का विधान है, उन्हें लौकिक अग्नि में ही करना चाहिए। अतः पाकयज्ञ तथा सब अपने संस्कार उपाकर्म आदि गृह्य अग्नि में किये जाते हैं। शेष सब पुत्र संस्कार तथा शान्तिक, पोष्टिक आदि कर्म लौकिक अग्नि में ही होते हैं।

1. ऐतरेय ब्राह्मण
2. आवसथ्याधानं दारकाले दायाद्यकाल एकेषाम् पारस्कर गृह्यसूत्र 1/2/1–2
3. गौतमधर्म सूत्र भार्यादिरग्निर्दायादिर्वा 5/7

वैश्वदेवकर्म

पाक यज्ञों में दूसरा यज्ञ वैश्व देव है। यह वैश्वदेव कर्म कहा जाता है। इस कर्म में विश्व (सभी) देवताओं का यजन होता है। इसलिए यह वैश्वदेव कहलाता है। इसी को पञ्च महायज्ञ भी कहते हैं। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया हैं कि देवयज्ञ भूत यज्ञ, पितृयज्ञ, मनुष्ययज्ञ, ब्रह्मयज्ञ ये पंचयज्ञ हर गृहस्थ का नित्य कर्म है। इसका पालन करना चाहिए।[1]

पार्वण

यह श्राद्ध कर्म है। छः पुरूषों (पिता, पितामह, प्रपितामह तथा मातामह, प्रमातामह तथा वृद्ध प्रमातामह) के लिए प्रत्येक अमावस्या में किया जाने वाला श्राद्ध पार्वण श्राद्ध कहलाता हैं। यह भी नित्य हैं।

अष्टकाश्राद्ध

मार्गशीर्ष की पूर्णिमा के पश्चात् तीन अष्टका हेमन्त, शिशर की कृष्णपक्षीय चार अष्टमियों अपूय (मालपुआ) गोमांस और शाक से इन्द्र, विश्वेदेव और प्रजापति रूप पितरों के निमित्त किया जाने वाला श्राद्ध कर्म अष्टका श्राद्ध कहलाता है।

मासिकश्राद्ध

प्रत्येक माह में किया जाने वाला श्राद्ध मासिक श्राद्ध कहलाता है क्योंकि कहा गया है–**'मासि मासि वोडशनम्'।**[3] यह शतपथ ब्राह्मण का विधान है। मासिक श्राद्ध अवश्य करना चाहिए।

1. कर्म स्मार्त विवाहाग्नौ कुर्वीत प्रत्यहंगृही दपिकालाहृते वापि श्रौत वैत निकाग्निषु। पारा स्मृ. 1/37
2. दध्नातण्डुलैश्क्षतैर्वा। पा. गृ. 1/8/3
3. किये गये प्रधान याग की पुष्कलता का आपादक
4. शतपथ ब्राह्मण 11/5/5/1
5. आश्वलायन गृह्यसूत्र
6. शतपथ ब्राह्मण

श्रावणकर्म

श्रावण मास की पूर्णिमा से आरंभ कर मार्गशीर्ष की पौर्णमासी तक प्रतिदिन सायं सर्पों के लिए किया जाने वाला बलिदान श्रावण कर्म कहलाता है। पारस्कर गृह्यसूत्र में **'अथातः श्रावणा कर्म'।**[1] इत्यादि से उसका विधान है। यह कर्म एक ही बार करना चाहिए, क्योंकि इसमें काल का बन्धन नहीं है।

'

शूलगव

पारस्कर गृह्यसूत्र के **अथशूलगव।**[2] इस वचन से विहित एक कर्म शूलगव भी है। इस में गाय रूप द्रव्य का हवन होता है। कलियुग में गवालम्भन निषिद्ध होने से इसका अनुष्ठान नहीं होता किन्तु अन्य शाखा वाले '**ईशानाय स्थालीपाकं श्रपयित्वा।**[3] इस सूत्र के अनुसार गाय के स्थान पर स्थाली पाक का विधान होने से उसका अनुष्ठान करते हैं वह भी एक ही बार किया जाता है।

संदर्भ :

1. पारास्कर गृह्यसूत्र, 2/14
2. वही 3/8
3. आपस्तम्ब गृह्यसूत्र, 9/13
4. शतपथ ब्राह्मण 2/1/3/5
6. का. श्रौ. सूत्र 4/7/1

पद्म भिलावे

अभिराजराजेन्द्र मिश्र का शाश्वततावाद

भारतीय काव्य शास्त्रीय परंपरा के दर्पण में रस, अलंकार, रीति, वक्रोक्ति, औचित्य व ध्वनि सम्प्रदाय के रूप में प्रतिबिम्बित हुये हैं। जो क्रमशः भरत, भामह, वामन, कुन्तक, क्षेमेन्द्र व आनन्दवर्धन में इन्हें काव्य की आत्मा रूप में स्थापित किया है। इसी प्रकार अर्वाचीन संस्कृत काव्यशास्त्र में युगानुकूल और चिन्तन की पराकाष्ठा पर नवीन उद्भावनाओं व स्थापनाओं की परंपरा में ब्रम्हान्नद शर्मा, राधावल्लभ त्रिपाठी के साथ प्रो. राजेन्द्रमिश्र ने भी अपना अद्वितीय योगदान शाश्वततावाद के रूप स्थापित किया है।

विगत कुछ दशकों से कवियों एवं समीक्षकों के द्वारा अभिनव काव्यशास्त्र की युगानुकूल आवश्यकता को देखते हुए प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी के संयोजकत्व में डॉ. हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय सागर, (म.प्र.) तथा प्रो. अजित ठाकुर के संयोजकत्व में सरदार वल्लभ भाई पटेल वि॰वि॰ आनन्द (गुजरात) वृहद् संगोष्ठियों का आयोजन हुआ, परिणामस्वरूप नव्य काव्यशास्त्रीय मौलिक मानक ग्रन्थों का प्रणयन हुआ। इन ग्रन्थों का प्रणयन करने वाले प्रमुख आचार्य – प्रो. रेवा प्रसाद द्विवेदी प्रणीत काव्यालङ्कार कारिका, प्रो. शिवजी उपाध्याय कृत साहित्य संदर्भ, प्रो. ब्रम्हानन्दशर्माकृत काव्य सत्यलोकए प्रो. अभिराजराजेन्द्र मिश्र कृत –अभिराजयशोभूषणम् तथा प्रो.रहस बिहारी द्विवेदी कृत –नव्य काव्य तत्व मीमांसा हैं। जिन्होंने युगानुरूप नव्य काव्य शास्त्रीय लक्षणों की उद्भावनाओं तथा स्थापनाओं का प्रतिपादन किया है।

प्रो.मिश्र अर्वाचीन संस्कृत कविता के सर्वमान्य मानदण्ड की आवश्यकता का अनुभव करते हुए कहा कि सम्प्रदाय वादात्मक संशप्तकयुद्ध समाप्त कर देना चाहिए क्योंकि कुछेक आचार्यों का स्वदेशी सम्प्रदायों के साथ विदेशी सम्प्रदाय भी आकर्षित करने लगे है। यथा आचार्य ब्रम्हानन्द शर्मा ने काव्य के सत्य को काव्यात्मा माना है साथ ही प्रो. राधावल्लभत्रिपाठी के कुछ पाश्चात्य तत्वों को अपने अभिनव काव्या लंकार सूत्र में उपन्यास्त किया है–

अन्यायनिवारणाय युद्धप्रक्रिया द्वन्द्वम्।
वैयक्तिके सामूहिके वा चित्ते द्वन्द्वोत्थं कर्षणं तानवम्।आदि।[1]

द्वन्द्व (Duel) तथा तनाव (Tension) दोनो ही पाश्चात्य संस्कृति से जुड़े है जिसमें द्वन्द्व रोमन योद्धाओं की प्रथा रही तथा तनाव पाश्चात्य की ही उपज हैं। जो अब भारतीय काव्यशास्त्रीय में भी आधुनिकतावाद और उत्तराधुनिकतावाद के रूप में दखल देने लगे हैं।

प्रो.मिश्र का कथन है कि विपक्ष का खण्डन तथा स्वपक्षकी स्थापना दर्शन एवं काव्यशास्त्र में निरन्तर ही हो रहा है किन्तु इसमें भी सत्य के प्रति निष्ठा तथा शाश्वतपरम्परा के प्रति आस्था सदैव अनावरत एवं अविच्छिन्न रही है। प्राचीन मन्तव्यों को स्वीकार करना चाहिए, क्योंकि पुरातन के गर्भ में ही नूतन वस्तु का जन्म होता है, जैसे धरती के गर्भ में तिरोहित (वृक्ष ही) जड़ भले ही प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर नहीं होती फिर भी आश्चर्य हैं कि सम्पूर्ण वृक्ष का अस्तित्व उसी के अधीन होता है। नूतनता के सन्दर्भ में मत है कि –

अहञ्चाप्यास्मि सर्वत्र नूतनत्वप्रशंसकः।[2]
नूतनत्वमहोन्मादः किन्तु मह्य न रोचते।।

प्रो.मिश्र का मत है कि आधुनिकतावाद व उत्तराधुनिकतावाद जैसा काव्य की सृष्टि में कुछ भी नहीं होता है, काव्य तो कूटस्थ, शाश्वत एवं चिरन्तन होता हैं, नये पुराने का नहीं होता हैं। कालिदास आदि कवि भी अपने युग में आधुनिक तो होता है, किन्तु र्कीतिशेष होते ही वह शाश्वत का प्रतीक बन जाता है।

संस्कृत काव्यशास्त्री सिद्धान्तों में इस दृष्टि से अद्भुत सामंजस्य पूर्ण एक विलक्षण परमपरा की रक्षा परिलक्षित होती है जैसे भामह, मम्मट, विश्वनाथ आदि ने अपने काव्य लक्षणों में शब्दार्थ समष्टि का ही उल्लेख किया है। जिसका एक मात्र अभिप्राय यह है कि साहित्य और संस्कृति के सतत् परिवर्तन कालक्रम के भेद होने पर भी कुछ ऐसा तत्व होता है, जो अपरिवर्तित बना रहता है, जैसे निदाघ की वनस्पतियों के नष्ट होनेपर भी अगले पावस की वानस्पतिक सृष्टि के लिये अपने बीज बिखेर जाती है। वैसे ही साहित्य और संस्कृति का भी प्रत्येक विवर्त अगले प्रस्थान के लिये अपने बीज छोड़ जाता है। सामान्यतः इसी को परम्परा या शाश्वततावाद कहते है, जिसके द्वारा ही काव्य और जीवन धारण किया जाता है। प्रो.मिश्र ने इसी कोही परम्परावाद या शाश्वततावाद कहा है, जो अर्वाचीन संस्कृत कविता का आदर्श मानदण्ड है–

तदेव शाश्वत यन्नो कदापि परिवर्तते।
शाश्वतनैव तेनेदं धृतं काव्यञ्च जीवनम्।।
तत्तश्शाश्वततावादेश्रद्धा मम महीयसी।
येन प्रवतते सृष्टिः काव्ये धर्मेऽथसंस्कृतौ।[3]

सन्दर्भ :
1. अभिनवकाव्यालंकार सूत्र – 2.6.10/2.6.11
2. अभिराजयशोभूषणम्– प्रकीर्णतत्वोन्मेष – कारिका – 122
3. अभिराजयशोभूषणम – प्रकीर्णतत्वोन्मेष – कारिका – 133–134
ग्रन्थ– 01. अभिनवकाव्यालंकार सूत्र – डॉ.राधावल्लभत्रिपाठी

गलज्जलिका प्रकरण

प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र गजल (गलज्जलिका) को लोकगीत नही मानते हैं क्योंकि वह एक वैदेशिक गीत – विधा है जो फारसी तथा उर्दू से होती हुई संस्कृत आदि भारतीय भाषाओं में आई है। यह अवश्य है कि यह भारतीय लोकगीतों की तुलना में अधिक प्रचलित व समर्थ है वस्तुगत एवं आत्मगत संवेदनाओं के निर्वहण में।

'गजल' नामक यह गीत सर्वप्रथम फारसी भाषा में उत्पन्न होकर कन्दलित, पुष्पित एवं फलित होता हुआ बाद में मुस्लिमों के शासनकाल में प्रतिष्ठित होकर भारत वर्ष में भी प्रतिष्ठित हुआ। गुलाम, खिलजी, तुगलक, लोदी और मुगलवंश के दिल्ली के शासन करते समय यही फारसीभाषा शासनकार्य तथा साहित्य सर्जना का माध्यम बनी। मुगलों के शासनकाल में फारसी से उर्दू भाषा में यही गजल अवर्तीण हुई। मुगल वंश में उत्पन्न अंतिम बादशाह बहादुरशाह जफर के शासन में मिर्जा गालिब महान कवि हुए जो गजल के बादशाह कहे जाते हैं। उन्ही की परम्परा में मीर आदि लब्धप्रतिष्ठित गजलकार हुए जिन्होंने कि फारसी से ही मिलती – जुलती उर्दू भाषा में गजले लिखीं।

अंग्रेजी शासनकाल में जयपुर निवासी फारसी एवं संस्कृत भाषाओं में निष्पात, श्रेष्ठ कवि पण्डित, गजल विधा में पारंगत लोक विश्रुत (महामहोपाध्याय) भट्ट मथुरानाथ शास्त्री ने स्वतंत्रता पूर्व ही इस गजल विधा को फारसी गजलकारों की भाँति ही संस्कृत भाषा में अवतारणा की। इन्होंने प्रायः बाईस बहरों का प्रयोग करते हुए सैकड़ों गजल–गीतियाँ लिखी। साहित्यवैभव तथा गीतवीथी नामक दो काव्यसंग्रहों में संकलित गजल गीतियाँ 1930 ई. में बामबे स्थित निर्णयसागरप्रेस से प्रकासित हुई जिसके कुछेक उदाहरण आगे प्रस्तुत किये जायेंगे। प्रो. मिश्र इन्हें संस्कृतगजलों का प्रथम उद्गाता मानते है– संस्कृत गजलोग्दाता प्रथमो हि मया मतः।[1]शास्त्री जी के काव्यों में वैयक्तिक अनुभूतियों, करूणा और भक्तिभाव की अभिव्यक्ति अनाविलता सर्वत्र ही बनी रही है, चाहे वह आधुनिक नागरिक जीवन का चित्रण हो, या नवीन विधा गजल लिख रहे हो या आत्मव्यथा को प्रकट कर रहे हो, लय और अन्त्यानुप्रास का निर्वाह आधुनिक भारतीय भाषाओं की कविता के समान ही मिलता है। स्वयं को संम्बोधित कर शास्त्रीजी ने लिखा है–

अयिचित्तचिरेण विचिन्तयतोऽपि च चञ्चलता न गता, न गता।
ऽपि नाम निरन्तरयत्नशतैस्तव निष्ठुरता न गता,न गता।।[1]

1. अभिराजयशोभूषणम्–प्रकीर्णतत्वोन्मेष–कारिका–57

अर्थात् हे चित्त चिरकाल तक तू चिन्तन परायण है, लेकिन तेरी चंचलता नहीं गई, नहीं गई और सैकड़ों उपाय किये पर तेरी निष्ठुरता नहीं गई नहीं गई।

इसके अनन्तर इस गजल परम्परा को फारसी भाषा में पारंगत, प्रतिभापटिष्ट कविश्रेष्ठ आचार्य बच्चूलाल अवस्थी (1981–2005 ई.) ने विकसित किया। वस्तुतः इन्हीं दोनों महाकवियों के सारस्वत प्रयत्नों से फारसी गजल आज भी सुरभारती संस्कृत में सुप्रतिष्ठित है। प्रो. मिश्र अपने गुरूवार जो कीर्ति शेष है ऐसे बच्चूलाल अवस्थी को बारम्बार प्रणाम अर्पित करते हुए प्रतानिनी की भूमिका में लिखा है कि –

करेण खलु केनचित्सरसकाव्यशास्त्राऽमृतं
प्रगूढशतचिन्तनं ननु परेण षड्दर्शनम्।
दधच्च पदशासनं किमुत भाषिकालोचनं
चतुर्भुज महीसुरं कमपि बच्चूलालं भजे।।[2]

किसी एक हाथ से सरसकाव्यशास्त्र का अमृत, दूसरे हाथ से प्रगूढ़ अनन्त चिन्तन वाले षड्दर्शन, तीसरे हाथ से व्याकरण और चौथे हाथ से भाषाशास्त्रीय समीक्षा को धारण करने वाले उन महनीय चतुभुज द्विजेन्द्र बच्चूलाल की वन्दना करता हूँ।

बीसवीं सदी में गजलपरम्परा को प.शालग्रामशास्त्री, गिरिधरशर्मा नवरत्न, श्री हरिशास्त्री, रामनाथ पाठक प्रणयी, जानकीवल्लभशास्त्री, गणेशशर्मा आदि ने आगे बढ़ाया है। वर्तमान सदी के गजलकारों जगन्नाथपाठक, महाराजदीन पाण्डेय, डॉ. राजेन्द्रमिश्र, राधावल्लभत्रिपाठी, पुष्पादीक्षित आदि ने छोटी–बड़ी बहरों में गजल लिखे रहे हैं। किन्तु फारसी गजलों को उनके पुश्तैनी बाड़े (इश्क, हुस्न,आशिक, माशूक आदि) से बाहर निकालकर, उन्हें सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज पर प्रतिष्ठित करने का महान् सारस्वतश्रम प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने ही किया है।

1. संस्कृत वाङ्मय का वृहद् इतिहास (सप्तमखण्ड) – बलदेव उपाध्याय, पृ. 305
2. अभिराजयशोभूषणम्, पृ. 281

'मत्तवारिणी' प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र की बेहतर संस्कृत गजलों का संग्रह है। प्रो.मिश्र गजल को गलज्जलिका कहते है। गजल गीति के अभिप्राय को सुन–सूनकर यदि पाठक सहृदयहै तो निश्चितरूप से हर्ष एवं विषाद से प्रभावित आँखे आँसू बरसाती हैं, इसलिये प्रो.

मिश्र ने गलज्जलिका का इस नाम की प्रतिष्ठा एवं व्याख्या 1972 ई. में ही वाग्वधूटी में किया है कि–**गलन्ति जलानि नसनाश्रूणि यस्यां सा मर्मन्तुदा गीतिर्गलज्जलिका।**[1] अर्थात् नेत्रजल (अश्रु) की वृष्टि कराने के कारण उसी गीति को गलज्जलिका कहते हैं।
प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी के मत मैं– द्विपादिकाभिर्निबद्धा गीतिर्गजलमुच्यते[2] द्विपदिकाओं (शेर) से निबद्ध गीति गजल कहाती है। इस मत को प्रो. मिश्र अपूर्ण और संक्षिप्त मानते हुए कहते हैं, कि इस संक्षिप्त परिभाषा से गजल का स्वरूप ज्ञात नहीं हो सकता।
प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र का मत हैं कि :–

संवेदनमयी गीतिर्गजलाख्या, न संशयः।
यत्र प्रणय गाम्भीर्य नैष्ठिकत्वञ्च वर्णिते।।[2]
प्राणानपि पणीकृत्य सोढ्वा च शतलाञ्छनम्।
वैरिभूतेऽपि चात्मीये प्रीतिबन्धानुपालनम्।।
तथैवं रागबन्धस्य परित्यागोऽवमाननम्।
प्रियेण प्रियया वापि कृच्छ्रं तत्परिणामजम्।।
शाठ्यकैतवदुर्भावच्छल माया प्रवञ्चनम्।
अनुकम्पासमासक्तिममताशपथादिकम्।।
एवमेवेतरे भावा मानवीयाः परात्पराः।
मर्मस्पृशोऽपिसूक्ष्माश्च चेतनान्दोलनक्षमाः।।
भगङ्गीभणितिमाश्रित्य मान्यमान्यैः कवीश्वरैः।
परिकल्प्य प्रकाश्यन्ते नूनं गजल गीतके।।

1. समीक्षा सौरभम् – डॉ. अभिराजराजेन्द्रमिश्र– पृ. 196
2. अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम् – डॉ. राधा वल्लभ त्रिपाठी–सू.–3–1–09

श्रावं श्रावञ्च गीतार्थं नयने वारिवर्षतः।
ध्रुवं हर्षविषादाभ्यांसचेता यदि पाठकः।।
तत एव मया गीतिराख्यातेयं गलज्जला।
गलन्नेत्रजलत्वाद्वा सा गलज्जलिका पुनः।।[1]

गजल नाम की संवेदना से ओत–प्रोत होती हैं, इसमें कोई संशय नहीं है जिसमें वर्णित होती है, प्रेम की गम्भीरता एवं प्रेम की नैष्ठिकता। प्राणों की भी बाजी लगाकर, सैकड़ों लांछनों को भी सहकर तथा अपने लोगों के बैरी हो जाने पर भी प्रीति के अनुबंध का पालन

करना और उसी प्रकार किसी के साथ बाँधे गये प्रीति–अनुबंध को प्रेमी अथवा प्रेमिका द्वारा तोड़ देना या (अपने किसी कृत्य से) कलंकित कर देना और फिर उसके परिणामवश उत्पन्न व्यथा को झेलना। शठता, धूर्तता, दुर्भावना,छल, माया, प्रवञचना, अनुकम्पा, अतिशय आसक्ति, ममत्व, शपथादि का आश्रय तथा इसी प्रकार अन्याय भीएक से एक (श्रेष्ठ) चेतना को झिंझोड़ देने वाले अत्यंत सूक्ष्म–मर्मस्पर्शी मानवीय भाव – अत्यंत मानवीय कवीश्वरों द्वारा परिकल्पित कर, भंगी मणिति (वाक्कौशल) के सहारे निश्चित रूप से गजल – गीति में प्रकाशित किये जाते हैं।

गजल–गीति के अभिप्राय को सुन–सुनकर, यदि पाठकसहृदय है तो निश्चित रूप हर्ष एवं विषाद से प्रभावित आँखें आँसू बरसाती है, इसलिये मैंने (प्रो. मिश्र) इस गीति को संस्कृत में, गलज्जला नाम दिया है। नेत्रजल (अश्रु) की वृष्टि कराने के कारण उसी गीति को गलज्जलिका कहते हैं।

प्रो. अभिराज मिश्र गजल का संविधानक निरूपण करते हुए कहते है, कि नाना प्रकार का बन्धविस्तार इस गीत में दृष्टिगत होता है। बन्ध (Composition) की दीर्घसूत्रता को प्रदर्शित करने वाला यह (विस्तार) फारसी में बहर कहा जाता है। श्रेष्ठ गजलकार की प्रयोग–क्षमता को प्रदर्शित करने वाली यह बहर इस गजल गीति में कहीं छोटी तो कहीं बड़ी दिखाई पड़ती है। संस्कृतकविता में गणों के अक्षर विस्तार(Scanning) में जैसी स्थिति दिखाई पड़ती है उसी तरह फारसी गजल की बहर में भी एक रमणीय गण–व्यवस्था दृष्टिगोचर होती है। कहीं पर वह बहर 'मुतकारबे मुसम्मन सालिम' तो कहीं पर 'बहरे कामिल मुसम्मन' कहीं जाती है। इन बहरों में 'मफऊल–फऊलून–फाइलुन' आदि संज्ञा से प्रसिद्धगण व्यवस्थित होते हैं। फारसी छन्दशास्त्र की गजल की बीर में गणक्रम निश्चित होता है।[1]

1. अभिराजयशोभूषणम् – प्रकीर्णतत्वोन्मेष–कारिका–60–67

प्रो. मिश्र कहते है कि बन्ध विस्तार का अर्थ है गणों का विस्तार संस्कृत के छन्द शास्त्र में जैसे वर्णिक छन्दों का विस्तार एक अक्षर से छब्बीस अक्षर तक देखा जाता है। आचार्य भरत ने नाट्यशास्त्र में कहा है कि एक अक्षर के बन्ध का उक्त, दो अक्षर के बन्ध को अत्युक्त, तीन अक्षरीय बन्ध मध्य, चार अक्षरीय बन्ध प्रतिष्ठा, पांच अक्षरीय बन्ध सुप्रतिष्ठा,छः अक्षरीय बन्ध गायत्री, सात अक्षरीय बन्ध उष्णिक्, आठ अक्षरीय बन्ध अनुष्टुप, नौ अक्षरीय बन्ध वृहती, दस अक्षरीय बन्ध पंक्ति, ग्यारह अक्षरीय बन्ध त्रिष्टुप, बारह अक्षरीय बन्ध जगती, तेरह अक्षरीय बन्ध अतिजगती, चौदह की शक्वरी, पन्द्रह की अतिशक्वरी, सोलह की अष्टि, सत्रह की अत्यष्टि, अठारह की धृति, उन्नीस की अतिधृति, बीस की कृति, इक्कीस की प्रकृति,

बाईस की आकृति, तेईस की विकृति, चौबीस की संस्कृति, पच्चीस की अतिकृति, छब्बीस की उत्कृति तथा सत्ताईस, अट्ठाईस अक्षरों के बन्ध को मालावृत्त कहते है। इस प्रकार एक से छब्बीस अक्षर तक अर्थात् उक्त से उत्कृति तक संस्कृत छन्दों का विस्तार है।

प्रो. मिश्र कहते है कि बहर रूप पर्याय वाले इसी प्रस्तार में अगणित वृत्तों का जन्म होता है। नाट्य शास्त्रकार का भी कथन है कि– इन छन्दों का अनेक प्रकार वाला पृथक्–पृथक् भेद हुआ करता है, जिन की संख्या असंख्य है जिसे विद्वानों ने वृत्त कहा है।[2]

प्रो. मिश्र कहते है गजलकारों ने गजल के तीन भाग किये है– मतला, मक्ता और शेर।

मतला–मूलभाव को प्रभावित करने वाला, गजल का प्रारंभिक वाक्य होता है। जिसे सामान्य भाषा में मुखड़ा कहते है।

मक्ता– यह अन्तिम बन्ध (वाक्ययुग्म) होता है जिसे कवि के उपनाम (तखल्लुस) से अंकित किया जाता हैं।

शेर– मतला और मक्ता के बीच मूलभाव को पोषित करने वाला अथवा भिन्न अभिप्राय वाले बन्ध (वाक्ययुग्म) को शेर कहा जाता है। ये सब गजल के फारसी संविधान(टेकनीक) हैं, और संस्कृत के विद्वानों इस गजल संज्ञा से भला क्या परितोष? इसलिये प्रो. मिश्र ने इसे गलज्ज्ला अथवा गलज्जलिका की संज्ञा प्रदान किया है।

प्रो. मिश्र ने मतला को आरंभिका, शेर को मध्यिका तथा मक्ता को अन्त्यिका कहा हैं। आशय यह है कि फारसी भाषा की गजल गीति ही आरम्भिका– मध्यिका–अन्त्यिका से समन्वित संस्कृत गलज्जलिका है–

1. अभिराजयशोभूषणम् – प्रकीर्णतत्वोन्मेष–कारिका–60–67
2. नाट्यशास्त्र–अध्याय–14– कारिका–58

मतलाऽऽरम्भिका वाच्याशेर उच्येत मध्यिका।
अन्त्यिका च तथैवास्तु मकतेति मतम्मम।।[1]

इन तीनों के उदाहरण मूल ग्रन्थ में ही द्रष्ट्व्य हैं। प्रो. मिश्र का कथन है कि आरम्भिका बन्ध के दोनों वाक्यों का वह दुहराया जाने वाला अन्तिम शब्द काफिया कहा जाता है, जो गजल में एक ही होना चाहिये। किन्तु इसमें गुणवत्ता न होकर रूढ़िमात्र है, इसलिये गजलकारों को स्वरूचि अनुसार संस्कृत गजलों में प्रयोग करना चाहिये। क्योंकि कवित्व–कल्पतरू प्रतिभा का समुल्लास कुछ भी अभिनव (विलक्षण) निर्मित करने में, खेल–खेल में समर्थ हो जाता है–

प्रतिभानसमुल्लासः कवित्वविबुधद्रुमः।
किमप्यभिनवं स्रष्टुं लीलयैव हि शक्नुते।।[2]

प्रो. मिश्र कहते है कि काफिया रूपी अन्तिम शब्दांश कभी–कभी आरम्भिका बन्ध की दूसरी पंक्ति में दृष्टिगोचर होता है, दोनों पंक्तियों में नहीं। जैसे प्रो. मिश्र की गजल–

यथाशक्ति पानीयवर्षाभिरूर्वीम्।
स्मुद्य प्रणश्यामि धरा धरोऽहम्।।[3]

ठसमें ''धराधर हूँ मैं'' यह अशं द्वितीय पंक्ति प्रयुक्त है यहां कवि की स्वतंत्रता ही है किन्तु अन्य गजलों में 'परम्परा' का पालन अवश्य दिखाई पड़ता है।

प्रो. मिश्र का स्पष्ट कथन है कि फारसी, उर्दू, गजल का संविधान (तकनीक)ही ग्रहण करना चाहिए न कि उसका प्रतिपाद्य। क्योंकि फारसी–उर्दू की गजल में वर्ण्यसामग्री भारतीय आर्षआचारमर्यादा से मेल नहीं खती है, और किसी भी राष्ट्र का साहित्य उस राष्ट्र की संस्कृति का दर्पण होता है। भारतीय संस्कृति में विविध धर्मो, सम्प्रदायों, पंथों एवं मतों का समन्वय होने के बावजूद भारतीय संस्कृति से अवश्य उसकी वैदिक संस्कृति से है, जो संपूर्ण विश्व में उसकी पृथक पहचान कराती है। प्रो. मिश्र ने गजलों के उदाहरण भी अर्वाचीन ही दिये हैं।

भट्टमथुरानाथशास्त्री, बच्चूलाल अवस्थी, जगन्नाथ पाठक, पुष्पादीक्षित, महाराजदीन पाण्डेय एवं स्वरचित गजल है, विस्तार भय से सभी को प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है, फिर भी एक दो उदाहरण जैसे प्रो. मिश्र की रचना मत्तवारिणी से सोलह मात्राओं की यह गलज्जलिका–

1.अभिराजयशोभूषणम् – प्रकीर्णतत्वोन्मेष–कारिका–80 2.वही–कारिका–84 3. वही– पृ. 290

नाऽहमस्मि सूर्यो, दीपोऽहम्
मनोराज्यनवधरणीपोऽहम्।
सिन्धोरिव न च मे विस्तारः
सर्वसुलभमृदुजलकूपोऽहम्।।
नन्दनवन सुरतरूरपि नाऽहम्।
घनच्छायजनपथनीपोऽहम्।।
अलमिह ममनिष्ठापरीक्षया।
तनुमपि दास्यामि दिलीपोऽहम्।।
किञ्चिदक्षतं तिष्ठति गर्भे।
महितैतिह्यनिधिः स्तूपोऽहम्।।[1]

मैं सूर्य तो नही (परंतु) दीपक तो हूँ। अपने मनोराज्य का अभिनव शास्ता तो हूँ। सागर जैसा भले ही मेरा विस्तार नही, परन्तु सर्व–सुलभ मीठे पानी का कुआं तो हूँ मैं। नन्दनवन में स्थित पारिजात भी नही (परन्तु) घनीछाया वाला जनपथ (आम रास्ते) का अशोक वृक्ष तो हूँ, मेरी निष्ठा की परीक्षा की जुर्रत मत करियेगा। अरे शरीर भी दे दूंगा। दिलीप हूँ मैं। मेरे अन्तराल में है, पदार्थ में श्रेष्ठ इतिहास की निधिभूत कोई स्तूप हूँ।
जगन्नाथ पाठ्यकृत ''पिपासा'' से 22 (बाईस) मात्राओं की गलज्जलिका–

सार्धं न हन्त कोऽपि गतः सर्वतो मया।
आसादितो न कोऽपि निजः सर्वतो मया।।
एकाकिनो जनस्य हि दिवसा न यान्त्यमी।
एवञ्च यापितो दिवसः सर्वतो मया।।

1. अभिराजयशोभूषणम् – पृ. 292

अहमेव दुःखहेतुरमीषां तु यद्यपि।
दुःखीकृतो न कोऽपि जनः सर्वतो मया।।
आत्मीयतां गतऽपि सकलेऽपि कोऽप्यहो।
नैवश्रुतो मदीयजनः सर्वतो मया।।[1]

ओफ् कोई भी मेरे साथ सर्वत्र नहीं गया। पूर्ण प्रयत्न के बावजूद किसी को मैंने 'अपना नही' पाया। अकेलेपन में, व्यक्ति के ये दिन नहीं बीत पाते। फिर भी मैंने यूँ ही (इसी) (स्थिति में) अपने दिन काट दिये। उनके दुखों का कारण यद्यपि में ही हूँ फिर भी (अपनी जान) मैंने किसी व्यक्ति को दुःखी नही बनाया। समझा तो मैंने सबको आत्मीय (अपना) फिर भी नहीं सुना मैंने कि कोई व्यक्ति 'मेरा अपना' है।
इस प्रकार प्रो. मिश्र ने गजल का गलज्जलिका नाम से संस्कृत में इसके नवीन लक्षण का प्रतिपादन किया हैं जो संपूर्ण साहित्य में अद्वितीय है। इन्होंने पूर्व परंपरा का पालन करते हुए नवीन रचना में युगानुरूप परिवर्तन कर इसे और भी सर्वग्राह्य बनाया है। अतः इससे नवीन विधा की रचना के लिये वर्तमान कवीश्वरों कमे लिये नवीन मार्ग की स्थापना की गई हैं। जिससे संस्कृत का अधिक से अधिक प्रचार–प्रसार सरल होते हुए भारतीय संस्कृति का विस्तार हो सकेगा, ऐसा मेरा मन्तव्य है।

–पदम कुमार भिलावे, पी. एच. डी. शोध छात्र, संस्कृत पालि एवं प्राकृत विभाग रानीदुर्गावती वि.वि.जबलपुर,म.प्र.

1. अभिराजयशोभूषणम् – पृ. 295

<u>सन्दर्भ ग्रन्थ सूची</u>

(1) अभिराजयशोभूषणम् – डॉ. अभिराजराजेन्द्रमिश्र
वैजयन्त प्रकाशन
इलाहाबाद– 2006

(2) संस्कृत वाङ्मय का वृहद् इतिहास (सप्तमखण्ड) – बलदेव उपाध्याय
उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान
लखनऊ 1997.2000

(3) समीक्षा सौरभम् – डॉ. अभिराजराजेन्द्रमिश्र
संपूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी – 2003

(4) अभिनवकाव्यालंकारसूत्रम् – डॉ. राधा वल्लभ त्रिपाठी
संपूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय
वाराणसी – 2005

(5) नाट्यशास्त्र (भरतकृत) – चौखम्बा संस्कृत संस्थान
वाराणसी द्वितीय संस्करण – 1980

डॉ. विजय कुमार,
संस्कृत विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

बालरामायण में सत्यता की अवधारणा

भूमिका

महाकवि राजशेखर शब्द है। शब्द सौष्ठव और मावगाम्भीर्य में वे अनुपम हैं। बालरामायन नाटक कविराज राजशेखर की असाधारण मेधा का प्रमाण है। प्रकृत महानाटक का गद्य एवं पद्य दोनों हो काव्य रचनापाटक के शिखर का स्पर्श करते है। अपने आदर्श एवं श्र्वात्तर बाल्मीकि, मूर्तमेष्ठ और भभूतिके समान ही अप्रतिम् ज्ञान, विशाल शास्त्र एवं लोकानुभव से युक्त प्रखर प्रतिभा से उद्भूत यह महानाटक भारतीय वाड्मय के विशाल ज्ञान का संचय है। महाकवि शब्दों से खेलते हैं। इनके पास शब्दों का अक्षय भंडार है, अनूठे भावों का असीम संसार हैं, नवीन कल्पनाओं, उपमाओं उत्प्रेक्षाओं तथा जागतिक भारतवर्ष का अत्यंत उत्कृष्ट काव्यस्वरूप है।

प्रस्तुत शोध पत्र में ''सत्यता की अवधारणा शीर्षक से बालरामायण में सत्यता को केन्द्रित प्रसंगों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

ब्रह्मावर्त के इतिहास में मध्ययुग प्रशासनीय गरिमा एवं साहित्यिक महिमा के कारण नितान्त प्रसिद्ध है। उस समय कान्यकुब्ज में शासन करने वाले रघुवंशियों के महेन्द्रपाल के उपाध्याय एवं गुरू महाकवि यायावर राजशेखर अपनी प्रौढ़ प्रतिभा एवं अलोक सामान्य रचनाचातुरी के लिये अद्यपर्यनत विद्वानों और कविजनों के शिरोमणि माने जाते हैं। संस्कृत – साहित्य में महाकवि राजशेखर एक ऐसे अद्वितीय प्रभाभास्वर प्रोज्ज्वल नक्षत्र हैं, जिनकी यशोविभूति साहित्य के विविध क्षेत्रों को आज भी आलोकित कर रही हैं। आप साहित्यशास्त्र के महान् प्रणेता, नाट्यविद्या के परमाचार्य, काव्य–छन्द, ज्योतिष, भूगोल तथा सामाजिक विषयों के प्रकाण्ड विद्वान थे। माननीय श्रीराजशेखर समग्र भारतीय संस्कृत वाड्मय के हस्तामकवत् दृष्टा थे। उनकी प्रतिभा से न केवल साहित्य क्षेत्र ही आलोकित हैं, प्रत्युत उनकी राजनीतिक, प्रशासनिक तथा शिक्षाप्रद मानवीय मूल्यों से भारतवर्ष में विशाल भूखण्ड का साम्राज्य भी उनका सम्यक् मार्ग–निर्देश प्राप्त करके सुख–समृद्धि के विस्तार का प्रतीक बना हुआ है।

महाकवि राजशेखर ने अपने के वैभव से साहित्य में मानवीय मूल्यों का अत्यंत सौन्दर्यपूर्ण निरूपण किया है जिससे उनके वैदुष्य और सामाजिक अवधारणाओं का दिग्दर्शन होता है।

''बालरामायण'' संस्कृत – साहित्य का अत्यंत प्रतिष्ठित पठनीय ग्रंथ है, यह परिमाण में ही महान नाटक नहीं है, प्रत्युत गुणों की दृष्टि से भी नितान्त महनीय रचना है। इसके अध्ययन अवगाहन से पग–पग पर विविध माननीय मूल्य दृष्टिगोचर होते हैं। मानवीय मूल्यों का बहुत अच्छा निरूपण मनुस्मृति में इस प्रकार किया गया है –

''धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।(1)

'शब्दानां अनेक अर्थाः' उपलिखित श्लोक में वर्णित धर्म के लक्षणों को इस शोधपत्र के द्वारा 'बालरामायणम्' में मानवीय मूल्यों से अभिहित किया गया है। धर्म और इसके लक्षणों के बिना सामाजिक मूल्यों की जीवन तथा साहित्य में अवधारणा की कल्पना असंभव प्रतीत होती हैं। इसलिये सर्वत्र धर्म लक्षणों की प्रशंसा की गई है। उक्त धर्म लक्षणों में से एक अत्यंत विशिष्ट मूल्य तथा लक्षण ''सत्य'' के भाव अर्थात् सत्यता की अवधारणा का अवधारणा का बालरामायण में अवलोकन करेंगें।

नेशत् तमो दुधितं रोचित द्यौ –
रूद् देव्या उषसो भानुरर्त।
आ सूर्यो वृहतस्तिष्ठदज्रां
ऋजु मतेषु वृजिना च पश्यन्।।(2)

मानव – संस्कृति के विन्यास में मानवीय मूल्यों, सच्चरित्रता तथा सत्य प्रारम्भिक युग से ही महत्व रहा है। सत्य के बिना सुश्लिष्ट सामाजिक जीवन असंभव होना तथा सुख और शान्ति की कल्पना भी न होती। भारत की आचार–पद्धति में ऋत अर्थात् सत्य की सर्वोच्च प्रतिष्ठा है। वेदों के अनुसार सत्य ही चराचर लोकों की सृष्टि, संवर्धन और संहार का नियामक है। सत्–रज् तथा तम् रूपी त्रिगुणात्मक प्रकृति का सत् एक विशिष्ट तत्व है। इसे ही सत्, चित् और आनंद के रूप में शास्त्रों में वर्णित किया गया है।

प्रकृति की समस्त शक्यिां तथा दैवी विभूतियां सत्य (ऋत) युग से युगारम्भ माना जाता है। ऋग्वेद प्रथम पठित ग्रंथ है। तात्पर्य यह कि सत्य से ही संसार में समस्त कार्यो का प्रारंभ होता है, सत्य से ही आकाश, पृथ्वी, वायु आदि तत्व अपने–अपने कार्यो का विधिवत् प्रतिपादन कर रहे है। सत्य के समक्ष असत्य की नहीं हो सकती।(3) यही उदाहरण राम ने अपने जीवन चरित्र द्वारा प्रस्तुत किये है, इसलिये उन्हें सत्यनिष्ठा की मूर्ति तथा पुरूषोत्तम कहा जाता है। ऐसे ही मानवीय मूल्यों का श्रेष्ठ निरूपण महाकवि ने

''बालरामायण'' के प्रथम अंक में जनक सैकड़ों मार्गो वाले वेदों की मीमांसा करने वाले तथा ब्रह्म का साक्षात्कार प्राप्त करने वाले महामुनि विश्वमित्र के भी हृदय में जो हम लोगों को स्थान प्राप्त हुआ है। यह सत्यता का ही प्रभाव है।

''यन्मीमांसयतः श्रुतीः शतपथाः साक्षात्कृत ब्रह्मणो
विश्वामित्र महामनुरपि वयं क्र्तामहे चेतसि।
अप्युल्लीढकषायपावनधियां सद्यः समाधिश्लथं
तत्सग्डीतकमन्रेण हृदयं हर्षान्नरीनतिं नः।।(4)

यहां सत्यता का निरूपण याज्ञवल्क्य के आशीर्वाद के रूप में किया गया है। सत्य की सत्ता से जगत् का कोई भी पहलू अछूता नहीं है। प्राग् काल से ही यज्ञयागादि को धर्म तथा सत्य की प्रतिष्ठा के रूप सम्पादित किया जाता रहा है।

बालरामायण के विलक्षलक्ड्श्वर नामक तृतीय अक्ड में ऐसा ही एक प्रसड्ग उपवर्णित हैं इसमें गृध्रमिथुन के कथनोपकथन द्वारा सूचना मिलती हैं कि यज्ञ – रक्षार्थ राम ने ताटका आदि का वध करके सत्य की स्तीपना की।

स्त्रीराक्षसी कथमिवात्र पतन्तु वाणाः
प्रेष्यस्य ते कुशिकनन्दन तत्प्रसीद।
आदिश्यतामिह हि कोऽपि तपस्वितन्त्रे
मन्त्राक्षरैः कतिपयैर्य इमामप्सस्येत्।।(5)

इस प्रसड्ग में महर्षि विश्वमित्र का राम के प्रति वचन । हे तात्! यह विकटा कालरात्रि के समान विकट है। स्त्री समझ कर शंका क्यों कर रहे हैं। अतः तीनों लोगों की रक्षा तथा सत्य के संरक्षण के लिये राक्षसी का वध आवश्यक है –

कालरात्रिकरोलेयं स्त्रीति किं विचिकित्समे।
तज्जगत्त्रितयं त्रातुं तात ताडय ताडकाम्।।(6)

यहां यह तथ्य उद्घाटित होता है कि धर्म तथा सत्य की रक्षा के समय स्त्री–पुरूष, ज्येष्ठ–लघु तथा धनिक–निर्धन का भेद नहीं करना चाहिए। वर्तमान संदर्भ हम देखते हैं कि भेदभाव पूर्ण नीति के अधिकाधिक प्रयोग के कारण ही मानवीय मूल्यों तथा राष्ट्र का समुचित विकास बाधित हो रहा है। अक्ड के इसी प्रसड्ग में राम का क्रोध गुण भी प्रकट होता है –

विध्वस्तहस्तयुगलं ललितान्त्रतन्त्रमुन्मुक्तरक्ततति खण्डितकालखण्डनः
उत्कृत्कृत्ति रचितं च शरैः शरीरमार्येडरिवलाक्डपरिताडिनि ताडकायाः।।(7)

उक्त पद्य के माध्यम से राम ने यह बताने का प्रयास किया है कि क्रोध व्यक्ति का व्यक्तिगत नाश होता है। अतः क्रोध का सर्वथा परित्याग करना चाहिए। लेकिन आवश्यक की स्थिति में

पुष्टि भी करते दिखते हैं। पच्चम अक्ड में परशुराम और राम के विवाद के समय लेखक यह निरूपित करना चाहते है कि परशुराम ने क्रोध किया तो परास्त हुये और वहीं राम ने विनम्रता तथा सत्यता युक्त कार्य किये तो उन्हें विजयश्री मिली। यथा –

शम्भोः शिष्यं कुशिकमुनितः प्राप्तविद्योपविद्यः
क्षुण्णक्षत्रं दशरथभुवामग्रणीः क्षत्रियाणाम्।
वृद्दं बालश्च्यवनकुलजं भास्वते वंशजन्मा
नामं रामो व्यजयत गतिच्छेदिना सायकेन।।(8)

इसी प्रकार नवम् अक्ड. में बालरामायणम् के नायम राम विविध प्रकार से सत्यता का निरूपण करते हुये अधर्म पर धर्म तथा असत्य पर सत्य की जय का भाव अपने चरित के द्वारा विधिवत् प्रकट किया है। इसके यह भी ज्ञापित किया है कि सत्य का आचरण, व्यवहार पूर्ण निष्ठा से करता है, वह कभी भी परास्त नहीं होता प्रत्युत उसके बल–पराक्रम और कौशल में अप्रतिम वृद्धि होती है –

शत्रुध्वंसः किल जनकजासंगमस्यैकहेतु –
स्तेनारब्धं दशमुखवधाडम्बरं राधवेण।
छित्रं छित्रं पतति च शिरो जायते चान्यदत्य –
ल्लक्डभर्तुस्तदिह करवै हा कथं मन्दभाग्यः।।(9)

इस प्रकार हम यह सकते है कि महाकवि राजशेखर ने अपने साहित्य में समस्त मानवीय मूल्यों की अवधारणा अत्यंत वैद्वष्यपूर्ण शैली में वर्णित की हैं। अतः मनोक्त धर्म लक्षण और बालरामायणम् के मानवीय मूल्यों धृति क्षमा दय इत्यादि का प्रत्येक प्राणी को प्रयत्न पूर्वक पालन करना चाहिए।

''सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्''

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मनुस्मृति – 6/92
2. ऋग्वेद सं. 4/1/17
3. ऋग्वेद – 7/104/12
4. बा.रा. – 1/35
5. बा.रा. – 3/4
6. बा.रा. – 3/5
7. बा.रा. – 3/6
8. बा.रा. – 5/5
9. बा.रा. – 9/44

ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

मनीष कुमार परते,
राजनीति विज्ञान, रानी
दुर्गावती विश्वविद्यालय
जबलपुर

संवैधानिक विचार

संविधान कानून का संगृह है जो सरकार के स्वरूप, रचना विधि एवं कार्यो को निर्धारित करता है। सरकार के साथ संविधान राज्य के अन्य निर्मायक अंगों विधायिका एवं न्यायपालिका के स्वरूपों का भी निर्धारण करता है। राज्य के निर्मायक अंग विधायिका कार्यपालिका एवं न्यायपालिका संविधान से ही शक्ति ग्रहण करते हैं। पूर्व अध्याय में विधायिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका के स्वरूप, गठन एवं कार्यो पर अम्बेडकर के विचार को व्यक्त किया गया है।

केबिनेट मिशन की सिफारिश के आधार पर अविभक्त भारत की संविधान सभा के लिये जुलाई 1946 में चुनाव संपन्न हुआ। इसमें कुल 296 सदस्य थे, जो प्रांतीय विधान सभाओं के सदस्यों द्वारा एकल संक्रमणीय मतदान के द्वारा चुने गये डॉक्टर अम्बेडकर मुस्लिम लीग के समर्थन पर बंगाल से संविधान सभा के सदस्य चुने गये।

ब्रिटिश संसद ने 15 जुलाई 1946 को, भारतीय स्वाधीनता एक्ट पारित किया। परिणाम स्वरूप संविधान सभा अब देश का शासन चलाने के लिये संप्रभूता संपन्न हो गई, किन्तु देश के विभाजन के साथ बंगाल का भी विभाजन हो गया जिनकी वजह से अनेक सदस्यों सहित डॉ. अम्बेडकर को भी संविधान सभा की सदस्यता खोनी पड़ी किन्तु संविधान में डॉ. अम्बेडकर ने कॉग्रेस के साथ रचनात्मक सहयोग प्रदर्शित किया जिनके कारण विभाजनोपरांत संविधान सभा में उनके पुनः प्रवेश का मार्ग प्रशस्त हुआ।

इस संदर्भ में 15 दिसम्बर 1946 को संविधान सभा में डॉ. अम्बेडकर द्वारा दिया गया वक्तव्य बहुत कारगर सिद्ध हुआ कि 13 दिसम्बर 1946 को संविधान सभा में पंडित नेहरू ने एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया। इस प्रस्ताव में स्वतंत्र संप्रभूता संपन्न गणराज्य भारत का लक्ष्य घोषित किया गया। पुरूषोत्तम दास टंडन ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया। महात्मा गांधी परामर्श के उपरांत पंडित नेहरू ने 3 अगस्त 1947 को स्वतंत्र भारत के मंत्री परिषद् को घोषणा की जिसमें डॉ. भीमराव अम्बेडकर कबीना स्तर के मंत्री बनाये गये। 15 अगस्त 1947 को भारत स्वतंत्र हुआ। डॉ. भीमराव अम्बेडकर, पंडित जवाहर लाल नेहरू के मंत्री मंडल ने देश के प्रथम कानून मंत्री बने।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् राष्ट्रीय नेतृत्व के समुख अहम सवाल यह था कि स्वतंत्र भारत के सामाजिक एवं आर्थिक राजनैतिक ढांचे को मूर्त रूप देने के लिये राष्ट्रीय संविधान का गुरूतर दायित्व किसके कंधे पर रखा जाये इस समस्या के समाधान के लिये पंडित नेहरू ने संविधान बनाने के लिये आईवर जैनिग्स जिन्हें कई एशियाई देशों का संविधान बनाने का अनुभव था, का नाम सुनाया। गांधी ने नेहरू के सुझाव को अनसुना करते हुये कहा कि मैं एक भारतीय संविधान विज्ञ को जानता हूं जिसका नाम डॉ. भीमराव अम्बेडकर है।

इस प्रकार 19 अगस्त 1947 को संविधान सभा ने संविधान का मंसौदा तैयार करने के लिये जिस सात सदस्यीय समिति की नियुक्ति की घोषणा की डॉ. भीमराव अम्बेडकर उसके अध्यक्ष बनाये गये। एन. गोपाल स्वामी, सैयद मो. सईदुल्ला अल्लादी, कृष्णा स्वामी अययर, के.एम. मुशी, बी.एल. मित्तर तथा डी.पी. खैतान इसके सदस्य थे। डॉ. भीमराव अम्बेडकर स्वतंत्र भारत के प्रथम कानून मंत्री ही नहीं अपितु संविधान के प्रमुख शिल्पी भी थे।

भारतीय संविधान –

भारतीय संविधान एक लिखित संविधान है। इसका निर्माण केबिनेट मिशन योजना के तहत गठित एक संविधान सभा द्वारा किया गया है। दिसम्बर 1946 से 1949 के मध्य अथक परिश्रम से संविधान सभा ने भारत के संविधान का निर्माण किया। इस अवधि में उसके 11 सत्र आयोजित हुये, और सभा में लगभग 3 वर्षो में इस कार्य को संपन्न किया। 3 वर्षो के विचार विमर्श के उपरांत यह 26 नवम्बर 1949 को संविधान सभा द्वारा पारित किया गया संविधान के प्रारूप में 315 अनुच्छेद और 13 अनुसूचियां भी जबकि अंतिम रूप से पारित संविधान में 395 अनुच्छेद और 10 अनुसूचियां थी इसके स्पष्ट है, कि प्रारूप में अनेक परिवर्तन किये गये। सभा की पूरी कार्यवाही लोकतांत्रिक तरीके से संपन्न की गई। भारतीय संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया। 20 वीं शताब्दी में इस विचार का सबसे पहले प्रतिपादन सन् 1922 में महात्मा गांधी ने यह कहते हुये कहा। भारतीयों का संविधान भारतीयों की इच्छा अनुसार ही होगा।

प्रस्तावना –

यद्यपि प्रस्तावना संविधान का अभिन्न अंग नहीं हैं, तथापि इसका महत्व इस दृष्टि से बहुत अधिक है, क्योंकि इसमें उन लक्ष्यों को स्पष्ट किया गया है, जिन्हें संविधान के माध्यम से प्राप्त करने का प्रयास किया गया है। हम भारत के लोग भारत को एक संपूर्ण, संप्रभुता, संपन्न, समाजवादी, धर्म निरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने के लिये तथा उसके समस्त

नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म एवं उपासना की स्वतंत्रता और स्थिति व अवसर की समानता प्राप्त कराने के लिये तथा उनमें व्यक्ति की गरिमा एवं राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बंधुता के विकास के लिये दृढ़ संकल्प लेकर अपनी इस संविधान सभा में 26 नवम्बर 1949 को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत अधिनियमित व आत्मर्पित करते है।

मौलिक अधिकार –

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के अनुसार मौलिक अधिकार संविधान की प्रस्तावना की बुनियाद है। प्रस्तावना यह बताती हैं कि संविधान का मूल उद्देश्य समाज में स्वतंत्रता समानता और भ्रातृत्व की स्थापना है। संविधान के इन उद्देश्यों का परिपालन मौलिक अधिकारों के द्वारा होता है।

मौलिक अधिकारों का उद्देश्य शासन और विधान मंडल दोनों को स्वेच्छाचारी होने से रोकना है। इनसे व्यक्ति को अपने विकास का अवसर मिलता है, किन्तु सभी व्यक्तियों के अधिकारों को सुरक्षित करने अथवा समाज या राज्य के हितों की पूर्ति करने अथवा सुयोजित समाज की स्थापना करने के उद्देश्य से राज्य द्वारा उन पर कुछ प्रतिबंध लगाये गये होते है। राज्य एक निर्धारित सीमा के भीतर संविधान में दी गई वैयक्तिक अधिकार संबंधी व्यवस्थाओं का नियमन कर सकता है। संविधान के भाग 3 में मौलिक अधिकारों का उल्लेख है, में अधिकार समस्त नागरिकों को व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से लोकतंत्र के सर्वोत्तम लाभ तथा जीवन की आधारभूत स्वतंत्रतायें एवं असुविधायें प्रदान करते है।

नीति निदेश तत्वों की व्यवस्था –

भारतीय संविधान के चौथे भाग में राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों का वर्णन किया गया है। इन सिद्धांतों के विरूद्ध न्याय पालिका में अपील नहीं की जा सकती, लेकिन इन्हें नैतिक और राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक न्याय की स्थापना के साथ सबके लिये उचित जीविका के साधन समाज के भौतिक साधनों का समान वितरण महिलाओं तथा बच्चों के हितों के उचित संरक्षण आदि की बात कही गई इन्हीं के आधार पर संविधान का 73 वां और 74 वां संशोधन 1993 पारितकर पंचायत राज की व्यवस्था की गई। राज्य के नीति निदेशक तत्वों के माध्यम से लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना का प्रयास किया गया है।

उपसंहार –

डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने कहा कि संविधान योग्य व लचीला हैं, और यह इतना मजबूत है कि शांति एवं युद्ध के समय देश की एकता को बनाये रख सकता है। डॉ. भीमराव अम्बेडकर के अनुसार किसी संविधान का बने रहना केवल उसकी अच्छाईयों पर ही निर्भर नहीं करता है, जिसके ऊपर संविधान को क्रियान्वित का दायित्व है। कितना ही अच्छा संविधान क्यों न हो यदि उसको चलाने वाले लोग अच्छे नहीं हैं तो उसका बना रहना संदिग्ध है। इसके विपरीत यदि कोई संविधान बुरा भी हो किन्तु उसे चलाने वाले लोग अच्छे हैं, तो वह बना रह सकता है। सामाजिक लोकतंत्र को डॉ. भीमराव अम्बेडकर लोकशाही और संविधान की सफलता के लिये आधारभूत मानते है। उनकी दृष्टि जब हम राजनैतिक लोकतंत्र को सामाजिक लोकतंत्र में तब्दील कर सकेंगे तभी हमार लोकतंत्र की स्थापना का संवैधानिक प्रयास सार्थक हो सकेगा।

ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

मन्जू कुमारी, शोधार्थी, माता
जीजाबाई शासकीय
स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय,
मोतीतबेला, इन्दौर (म.प्र.)

ग्रामीण गर्भवती महिलाओं में प्रसव के समय आने वाली जटिल समस्याओं एवं जननी सुरक्षा योजना के क्रियान्वयन संबंधी एक अध्ययन

प्रस्तावना : देश के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य के उपयुक्त तीनों आयाम की स्थिति असंतोषजनक है। धार्मिक रीति–रिवाज, सामाजिक परम्पराओं एवं जाति धर्म की बेड़ियों ने स्थिति को अत्याधिक दयनीय बना दिया है। स्वास्थ्य के पायदान पर गर्भावस्था जो कि भावी शिशु निर्माण के लिए उत्तरदायी है, स्वास्थ्य में सुधार लाना वर्तमान समय की अनिवार्य आवश्यकता बन गया है।

महिला के जीवन की एक महत्वपूर्ण अवस्था होती है। गर्भावस्था अवस्था में अतिरिक्त देखभाल और सहायता की जरूरत होती है। गर्भावस्था के दौरान अधिक पौष्टिक आहार एवं सामान्य अवस्था से 1.5 गुना अधिक भोजन की आवश्यकता होती है। अनेक बार गर्भावस्था में स्वास्थ्य संबंधी जटिल स्थितियॉ बन जाती हैं जिनका त्वरित समाधान न होने पर गर्भावस्था अथवा प्रसव के दौरान मृत्यु भी हो सकती है। जिसका मुख्य कारण है अपर्याप्त आहार एवं उचित समय पर स्वास्थ्य सेवा नही मिलना है। जैसेः– 1.जटिलताओं को पहचानने में देरी, 2.यातायात के अभाव 3. रेफलरल में देरी आदि।

स्वस्थ भारत के स्वस्थ नागरिक के लक्ष्य को प्राप्त करना अभी अपेक्षित है। इस लक्ष्य का होना विभिन्न रूपों स्तरों पर विशेष रूप से ग्रामीण तथा शहरी स्लम गरीब व मलिन बस्तियों में खासतौर से गर्भस्थ व नवजात शिशुओं व गर्भवती महिलाओं में अधिक खून की कमी है। 50 प्रतिशत से अधिक गर्भवती महिलायें, स्तन पान कराने वाली मातायें कुपोषण एवं रक्ताल्पता व अस्वस्थ महिलायें चपेट में हैं। सम्पूर्ण विश्व के बहुत बड़े भू–भाग में गर्भवती महिला स्वास्थ्य की बहुत बड़ी समस्या है, जिसका प्रभाव गर्भवती एवं धात्री महिलाओं के स्वास्थ्य पर सबसे अधिक पड़ रहा है इस समस्या के निदान करने लिए राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन कार्यक्रम को लागू किया गया है।

विशेष रूप से इस कार्यक्रम के अर्न्तगत जननी सुरक्षा योजना गर्भवती एवं धात्री महिलाओं के सामान्य स्वास्थ्य, उनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति नवजात शिशु एवं देश के भावी नागरिकों के स्वास्थ्य को प्रत्यक्ष प्रभावित करती है।

अध्ययन के उद्देश्य :
म.प्र के इन्दौर तथा उ.प्र. के एटा जिले की ग्रामीण गर्भवती महिलाओं में प्रसव के समय आने वाली जटिल समस्याओं एवं जननी सुरक्षा योजना के क्रियान्वयन संबंधी एक अध्ययन।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय :

शोध अध्ययन क्षेत्र के रूप में भारत के दो राज्यों को लिया गया जिसमें, मध्यप्रदेश के इन्दौर जिले का ग्रामीण क्षेत्र एवं उत्तरप्रदेश के एटा जिले के ग्रामीण क्षे़त्र का चयन किया गया है।

अध्ययन का समग्र :

शोध पत्र का समग्र मध्यप्रदेश में इन्दौर एवं उत्तरप्रदेश के एटा जिले के ग्रामीण राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन कार्यक्रम के अंतर्गत जननी सुरक्षा योजना की लाभांन्वित ग्रामीण महिलाओं को सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन की इकाई :
प्रस्तुत शोध पत्र हेतु शोध इकाई के रूप में ग्रामीण गर्भवती महिलाएं व छः माह के शिशु की मॉ (धात्री महिलाओं) का चयन निम्न विशेषताओं के आधार पर किया गया है –

1. जो महिलाएं ग्रामीण क्षेत्र की रहने वाली हैं।
2. शोध पत्र के अध्ययन में सम्मिलित महिलाओं की आयु 18 से 45 वर्ष तक हैं।
3. शोध पत्र में सम्मिलित महिलाएं गर्भवती या छः माह के शिशु की मॉ (धात्री अवस्था) की हैं।
4. शोध पत्र के अध्ययन में सम्मिलित महिलाएं जननी सुरक्षा योजना की लाभार्थी हैं।

निदर्शन विधि :
प्रस्तुत शोध पत्र के अध्ययन में कुल 400 निदर्शन के चयन हेतु दैव निदर्शन एवं उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि का प्रयोग आवश्यकतानुसार किया गया है।
समंक संकलन :– समंक का संकलन (सत्र 2011 से 2013) की समयावधि मं किया गया।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन कार्यक्रम

जननी सुरक्षा योजना ने राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एन.आर.एच.एम) के तहत सुरक्षित मातृत्व हस्तक्षेप गरीब गर्भवती महिलाओं के बीच में संस्थागत प्रसव को बढ़ावा देने के द्वारा मातृ एवं नवजात मृत्युदर को कम करने के उद्देश्य से **12 अप्रैल 2005** से प्रारंभ यह योजना पूर्णतः केन्द्र प्रायोजित है। यह

योजना गरीबी रेखा से नीचे जीवन–यापन करने वाले परिवारों की महिलाओं हेतु है। यह **राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन** का घटक है। इसका उद्देश्य मातृ तथा शिशु मृत्यु दर में कमी लाना है।

जननी सुरक्षा योजना के उद्देश्य :–

1. मातृत्व और शिशु मृत्यु दर को कम करना तथा गरीबी रेखा से नीचे जीवन–यापन करने वाले (वी.पी.एल) परिवारों के लिए संस्थागत प्रसव को बढ़ाना है।
2. गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों से संबद्ध 19 वर्ष से अधिक आयु की सभी गर्भवती महिलाओं को दो जीवित बच्चों को कवर करती है।
3. प्रसूति अधिनियम 1961 इस अधिनियम के अर्न्तगत कुछ प्रतिष्ठानों में प्रसव काल से कुछ समय पूर्व तथा कुछ समय पश्चात् के लिए महिलाओं के रोजगार का नियमन करता है।

सारणी क्रमांक 1

प्रसव के समय आने वाली जटिल समस्याओं संबंधी विवरण

क्र.	**प्रसव के समय आने वाली जटिल समस्याओं संबंधी विवरण**	**इन्दौर** (ग्रामीण क्षेत्र) **(म.प्र)**	**एटा** (ग्रामीण क्षेत्र) **(उ.प्र)**	**कुल योग**
		संख्या (प्रतिशत)	संख्या (प्रतिशत)	सं. (प्रतिशत)
1.	प्रसव में कठिनाई	**35 (**79.54**)**	**21 (**68.74**)**	**56 (**72.72**)**
2	स्त्री का खराब स्वास्थ्य	**04 (**9.09**)**	**07 (**20.58**)**	**11 (**14.28**)**
3.	गर्भस्थ शिशु का खराब स्वास्थ्य	**05 (**11.36**)**	**01 (**3.22**)**	**06 (**7.79**)**
4.	गर्भ में शिशु की मृत्यु	–	**04 (**12.90**)**	**04 (**5.19**)**
	कुल प्रतिशत	**44 (100.0)**	**33 (100.0)**	**77 (100.0)**

नोट– 400 प्रतिदर्शो में से 77 महिलाओं में प्रसव के समय आने वाली कठिनाइयों की जानकारी

स्रोत :– अध्ययन क्षेत्र

उपरोक्त **सारणी** से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में जननी सुरक्षा योजना की महिला हितग्राहियों ने कहा कि प्रसव में 72.72 प्रतिशत को कठिनाई हुयी। स्त्री का खराब स्वास्थ्य 14.28 प्रतिशत, गर्भस्थ शिशु का खराब स्वास्थ्य 7.79 प्रतिशत, गर्भ में शिशु की मृत्यु 5.19 प्रतिशत पायी गई।

क्षेत्रीय आधार पर विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि इन्दौर (मध्यप्रदेश) में समस्त महिलाओं में से 79.54 प्रतिशत महिलाओं को प्रसव में कठिनाई हुयी जबकि एटा (उत्तरप्रदेश) में 68.74 प्रतिशत हितग्राहियों को प्रसव में कठिनाई हुयी। इन्दौर में स्त्री का खराब स्वास्थ्य 9.09 प्रतिशत जबकि एटा में 20.58 प्रतिशत हितग्राहियों का खराब स्वास्थ्य पाया गया। इन्दौर में गर्भस्थ शिशु का खराब स्वास्थ्य 11.36 प्रतिशत जबकि एटा में 3.22 प्रतिशत है। इन्दौर में गर्भ में शिशु की मृत्यु शून्य रही जबकि एटा में 12.90 प्रतिशत पाई गई।

प्रसव के समय आने वाली जटिल समस्याओं संबंधी ग्राफ

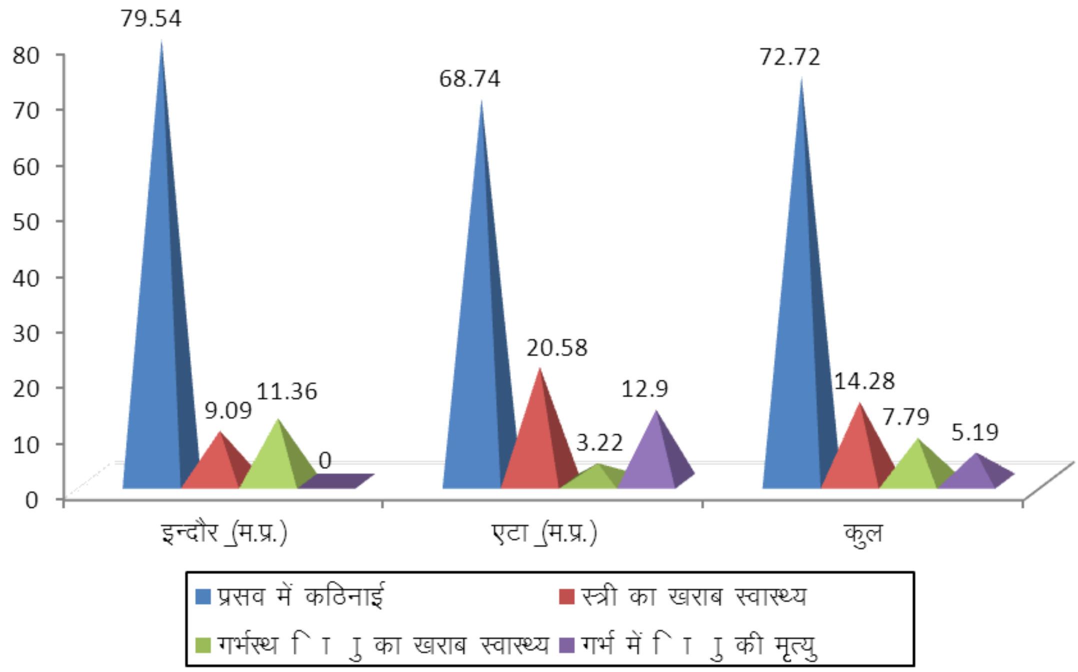

सारणी क्रमांक 2
जननी सुरक्षा योजना के पूर्ण क्रियान्वयन संबंधी विवरण

क्र.	जिला स्तर	जननी सुरक्षा योजना का पूर्ण क्रियान्वयन		कुल योग
		हॉ	नहीं	
1.	इन्दौर (म.प्र)	155 (77.5)	45 (22.5)	200 (50.0)
2.	एटा (उ.प्र)	166 (83.0)	34 (17.0)	200 (50.0)
3.	**कुल योग**	**321 (80.3)**	**79 (19.8)**	**400 (100.0)**

स्रोत :– अध्ययन क्षेत्र

नोट– कोष्टक में प्रतिशत को दर्शाया गया है।

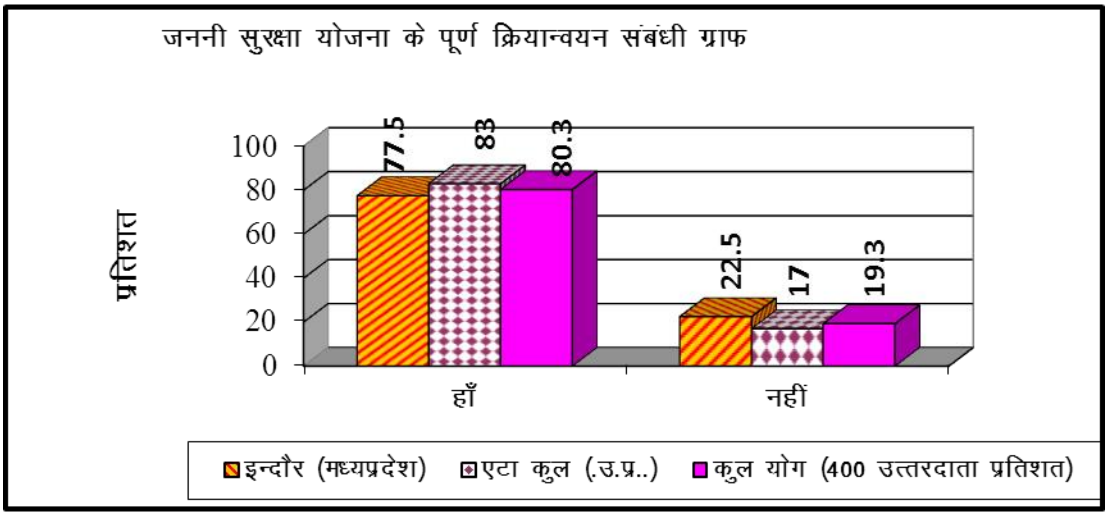

उपरोक्त सारणी के आधार पर जननी सुरक्षा योजना की हितग्राहियों ने कहा इन्दौर (म.प्र) में 77.5 प्रतिशत एटा (उ.प्र) में 83 प्रतिशत ने कहा कि योजना का क्रियान्वयन हो रहा है। जबकि इन्दौर में 22.5 प्रति" ात एटा में 17 प्रतिशत ने कहा योजना का क्रियान्वयन नहीं हो रहा है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि जननी सुरक्षा योजना का सर्वाधिक 80.3 प्रतिशत महिलाओं ने योजना का लाभ लिया एवं क्रियान्वयन हो रहा है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रसव में 72.72 प्रतिशत को कठिनाई हुयी। स्त्री का खराब स्वास्थ्य 14.28 प्रतिशत, गर्भस्थ शिशु का खराब स्वास्थ्य 7.79 प्रतिशत, गर्भ में शिशु की मृत्यु 5.19 प्रतिशत पायी गई।

जननी सुरक्षा योजना का सर्वाधिक 80.3 प्रतिशत महिलाओं ने योजना का लाभ लिया एवं क्रियान्वयन हो रहा है।

सुझाव –

सुरक्षित मातृत्व, महिलाओं की स्वास्थ्य स्थिति का वह स्तर है जो प्रसव के दौरान तथा प्रसव के बाद किए गए उपायों से संबंधित है, ताकि बच्चे का जन्म बगैर किसी जटिलता के हो और माता का स्वास्थ्य भी अच्छा बना रहे।

1. गर्भवती महिलाओं की देखभाल, खतरे के लक्षण, गर्भावस्था के समय टीके, आहार दवा एवं शासन द्वारा संचालित सभी योजनाओं की पर्याप्त जानकारी दी जानी चाहिए। अपनी पंचायत क्षेत्र के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा उपस्वास्थ्य केन्द्र की निगरानी करें।
2. दूरस्थ ग्रमीण क्षेत्रों में निवासरत् गर्भवती महिलाओं की सुविधा के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा उपकेन्द्रों को अनिवार्य उत्तम स्तर की दवाईयॉ और प्रसव के लिए उपयुक्त उपकरण प्रदान कर इन केन्द्रों पर ही प्रसव व्यवस्था की जानी चाहिए।
3. मातृ–मत्युदर एवं शिशु मृत्यु दर को रोकने के लिए आपातकालीन प्रसूति चिकित्सा को सुदृढ़ कर, तीन देरियां, होती है। जो निम्न है –

1.जटिलताओं को पहचानने में देरी, 2.यातायात के अभाव 3. रेफलरल में देरी

चिकित्सा संस्थान में उपचार में देरी के करण होने वाली मातृ–मत्युदर एवं शिशु मृत्यु दर में कमी लायी जा सकती है। गर्भवती महिलाओं का अतिशीघ्र पंजीयन कराना।

4. गर्भावस्था के समय नियमित रूप में गर्भवती महिलाओं की प्रसव तीनों जॉच करना। संस्थागत प्रसव हेतु प्ररित करना। महिला तथा शिशु को प्रसवोत्तर संरक्षण प्रदान।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. ऋतु सारस्वत योजना अप्रैल 2009 **स्वस्थ्य भारत का अधूरा स्वप्न** पृष्ठ संख्या 52–53
2 उमेश चन्द्र अग्रवाल कुरूक्षेत्र अगस्त 2006 नई दिल्ली पृष्ठ सं0 6–7
3 **लोकस्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग** मध्यप्रदेश भोपाल मान्यता प्राप्त निजी स्वास्थ्य संस्थान
4 स्वदेश 20 जनू 2010 प्रकाशित इन्दौर से दैनिक समाचार पत्र पृष्ठ संख्या 9
5 www.http//indiabudjet .nic.in आर्थिक समीक्षा 2013 पृष्ठ संख्या 325
6 गायत्री देवी **(1994) ग्रामीण परिवारों में स्वास्थ्य परिचर्चा का समाज वैज्ञानिक अध्ययन**–वी.के. तनेजा क्लासिकता पब्लिशिंग कम्पनी 28, शोपिंग सेन्टर करमपुरा, नई दिल्ली, पृष्ठ सं0 118
7 मुकर्जी, रविन्द्र नाथ (1969) **''सामाजिक शोध व सांख्यिकी अथवा सामाजिक अनुसंधान की विधियाँ''** विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, दिल्ली।

ISSN: 2394-3580 Volume-1,No-1. Nov-2014

श्रीमती विनीता पाण्डेय,
एसोसिएट्स प्रोफेसर
लक्ष्मी बाई साहूजी कॉलेज ऑफ
एजुकेशन जबलपुर म.प्र.

''उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यवसायिक आकांक्षा पर प्रभाव''

भारत जैसे विशाल देश में जाति, धर्म एवं भाषाओं की विविधता देखने को मिलती है अतः उनकी शिक्षा भी उसी के अनुसार होना चाहिए। वर्तमान समय प्रतिस्पधाओं का दौर है प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन मे सफलताओं के ऊँचे आयाम स्थापित करना चाहता है प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में एक विशिष्ट प्रकार के व्यवसाय के प्रति मोह एवं व्यवसायिक आकांक्षाएँ होती हैं जिनके आधार पर वह अपने कॅरियर का निर्णय करता है व्यवसाय चयन के सिद्धांत के क्षेत्र में सर्वप्रथम एली जिंजबर्ग (1951) ने एक अध्ययन किया और पाया कि व्यवसाय चयन एक प्रक्रिया होती है यह तीन स्तरों में विभक्त होती है कल्पनायें, संभाव्य चयन तथा वास्तविक चयन। व्यावसायिक आकांक्षा के बारे में ग्यारह वर्ष से पूर्व की आयु काल्पनिक, ग्यारह वर्ष से अधिक आयु संभाव्य चयन तथा सत्रह वर्ष से अधिक आयु वास्तविक कहलाती है इन स्तरों में किशोर अपनी रूचियों, क्षमताओं तथा मूल्यों का अध्ययन करता है तथा उत्तम व्यवसायिक आकांक्षा रखता है हालैण्ड (1959) के सिद्धांत के अनुसार व्यावसायिक आकांक्षा व्यक्ति के वंशानुक्रम, सभ्यता तथा भौतिक वातावरण की पारस्परिक क्रिया का परिणाम होती है जो समय के साथ बदलती रहती है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में शिक्षण माध्यम के कारण जो परिवर्तन देखा जा रहा है वह विद्यार्थियों के कॅरियर निर्णय क्षमता एवं व्यावसायिक आकांक्षा को कहाँ तक प्रभावित कर रहा है इसे ज्ञात करने का प्रयास प्रस्तुत शोधकार्य द्वारा किया जा रहा है। अतः शोध ''विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यवसाययिक आकांक्षा पर प्रभाव'' के परिपेक्ष्य में अध्ययन है।

समस्या का कथन :

''उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यवसायिक आकांक्षा पर प्रभाव''

शोध कार्य के उद्देश्य :–

1. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के छात्रों के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यवसायिक आकांक्षा पर प्रभाव का अध्ययन।
2. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के छात्राओं के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यवसायिक आकांक्षा पर प्रभाव का अध्ययन।

3. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यवसायिक आकांक्षा पर प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पना :

1. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के छात्रों के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यवसायिक आकांक्षा पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
2. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के छात्राओं के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यवसायिक आकांक्षा पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
3. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यवसायिक आकांक्षा पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

1.स्वतंत्र चर :–प्रस्तुत शोध का स्वतंत्र चर – शिक्षण माध्यम अंग्रेजी/हिन्दी माध्यम है।
2.आश्रित चर :– प्रस्तुत शोध में आश्रित चर व्यवसायिक आकांक्षा है।
3.नियंत्रित चर :–प्रस्तुत शोधकार्य मे नियंत्रित चर है कक्षा, संकाय, लिंग, आयु,।
न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन में कुल 1440 विद्यार्थियों को चयनित किया गया।
अनुसंधान विधि एवं अभिकल्प :– प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया तथा अनुसंधान अभिकल्प के रूप में 3x2x2 कारक अभिकल्प का प्रयोग किया गया।

अनुसंधान उपकरण :– प्रस्तुत अध्ययन में डॉ. जे.एस.ग्रेवाल द्वारा निर्मित व्यवसायिक आकांक्षा मापनी का प्रयोग किया गया।

प्रदत्त संकलन विधि :– शोध कार्य में प्रदत्तों का संकलन महत्वपूर्ण कार्य होता है। प्रदत्तों के अभाव में शोध का प्रतिपादन, विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण तथ्यहीन हो जाता है। अतः प्रस्तुत शोध कार्य हेतु विभिन्न वर्ग के विद्यार्थियों पर व्यावसायिक आकांक्षा मापनी को प्रशासित कर उचित एवं आवश्यक प्रदत्त एकत्र किये गये।

सांख्यिकीय विधियाँ :–प्रस्तुत अध्ययन में मानक विचलन, मध्यमान द्वि–दिक प्रसरण विश्लेषण एवं 'एफ' मान की सहायता से परिणाम प्राप्त किये गये।

परिणामों का विश्लेषण :– परिणामों का विश्लेषण निम्नानुसार किया गया –

सारणी क्रमांक 1
छात्रों की व्यवसायिक आकांक्षा पर विभिन्न संकाय एवं शिक्षण माध्यम के अंतः क्रियात्मक तुलनात्मक परिणाम

माध्यम	संकाय	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन
हिन्दी माध्यम	गणित	120	44.79	4.23
	जीव विज्ञान	120	45.75	3.77
	वाणिज्य	120	44.90	4.08
अंग्रेजी माध्यम	गणित	120	45.64	3.83
	जीव विज्ञान	120	45.62	3.89
	वाणिज्य	120	45.50	3.93

प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका

चरिता के स्त्रोत	स्वतंत्रता के अंश	वर्गों का योग	मध्यमान का वर्ग	''एफ'' मान	'पी' मान
(अ) संकाय	2	63.13	18.07	1.15	> 0.05
(ब) माध्यम	1	34.67	34.67	2.21	> 0.05
संकायX माध्यम	2	31.34	15.67	1.00	> 0.05
आंतरिक चरिता (त्रुटि)	714	11189	15.67		सार्थक नहीं
कुल योग	719	11291	84		

स्वतंत्रता के अंश – 1,714 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान 3.85, 3.00
– 2,714 0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान 6.66, 4.62

उपरोक्त सारणी में प्रदर्शित परिणामों से स्पष्ट होता है कि विभिन्न संकाय, शिक्षण माध्यमएवं इन दोनों के मध्य अंतः क्रिया का छात्रों के व्यवसायिक आकांक्षा पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता। विभिन्न संकायों के मध्य, शिक्षण माध्यम के मध्य एवं इन दोनों की अंतः क्रिया संबंधी''एफ'' अनुपातों के मान क्रमशः 1.15, 2.21 एवं 1.00 आये है जो 0.05 स्तर पर न्यूनतम सारणी मान की अपेक्षा कम है।

उपरोक्त परिणामों के आधार पर निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि विभिन्न संकायों, शिक्षण माध्यम एवं इन दोनों के मध्य अंतः क्रिया का छात्रों के व्यवसायिक आकांक्षा पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

उपरोक्त परिणामों को ग्राफ क्रमांक –1 में प्रदर्शित किया गया है।

ग्राफ क्रमांक–1

छात्रों की व्यवसायिक आकांक्षा पर विभिन्न संकाय एवं शिक्षण माध्यम के अंतः क्रियात्मक तुलनात्मक परिणामों का ग्राफीय निरूपण

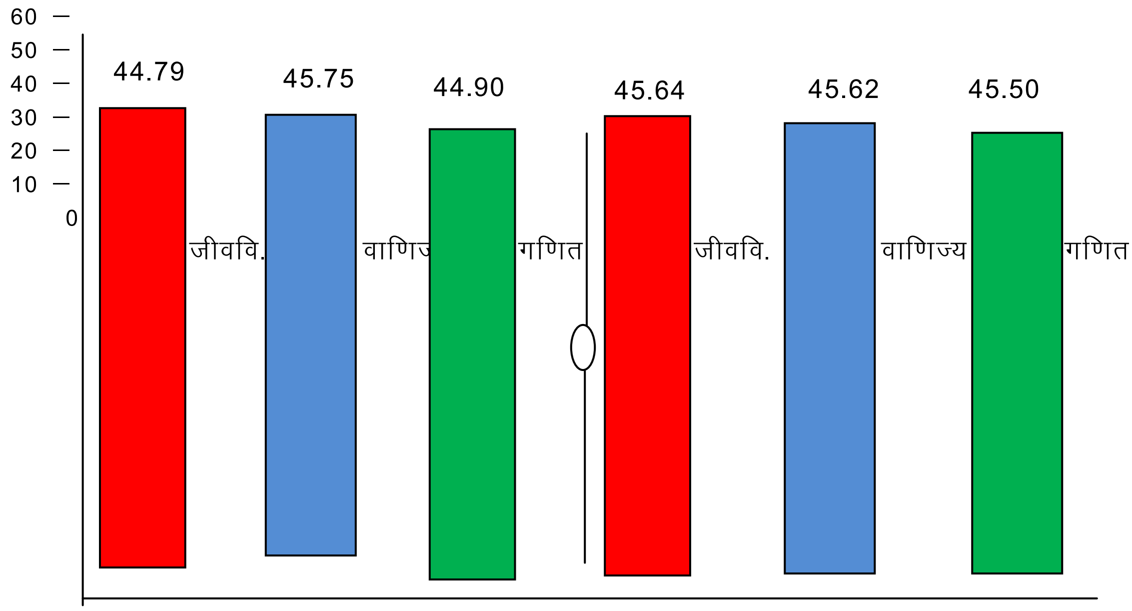

निष्कर्ष –

1. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के छात्रों के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यावसायिक आकांक्षा पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है अर्थात हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के गणित, जीवविज्ञान एवं वाणिज्य संकाय के छात्रों की व्यावसायिक आकांक्षा समान होती है।
2. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के छात्राओं के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यावसायिक आकांक्षा पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है अर्थात हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के गणित, जीवविज्ञान एवं वाणिज्य संकाय के छात्राओं की व्यवसायिक आकांक्षा समान होती है।

3. उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों के शिक्षण माध्यम का उनकी व्यावसायिक आकांक्षा पर कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है अर्थात हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के गणित , जीवविज्ञान एवं वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों की व्यवसायिक आकांक्षा समान होती है।

सुझाव :—

- विद्यार्थियों को अपनी रूचि एवं योग्यता के अनुसार शिक्षण माध्यम एवं विषय का चयन करना चाहिए। विद्यार्थियों के कॅरियर निर्णय क्षमता पर शहरी/ग्रामीण परिवेश का अध्ययन।
- विद्यार्थियों को अपनी व्यावसायिक आकांक्षाओं का परिचय पालकों एवं शिक्षकों को कराना चाहिए।
- पालकों एवं शिक्षकों को विद्यार्थियों के व्यावसायिक आकांक्षाओं एवं योग्यताओं के आधार पर विषय का चयन करना चाहिए।

संदर्भ/ग्रंथ

Ojha J.C. (2014) '' Effect of vocational aspiration on self efficacy of students'' , *A Serveay of Research in psychology*, ICGSR Vol. I P.P. 182-185.
Aniview J.Y. and Guha J.K. (2014) '' Child Labour and its Influence on self concept vocational as piration and choice'' *International Journal fo current Research*, Vol-3, P.P. 125-131.
रावत ए. (2007) वृत्तिक निर्देशन तथा रोजगार सूचना, प्रथम संस्करण आर.लाल बुक डिपो, मेरठ, पृष्ठ संख्या 50—66